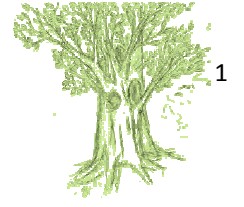




॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥



तांत्रोक्त वनस्पतियाँ : वनस्पति तंत्र



तांत्रोक्त वनस्पतियाँ : वनस्पति तंत्र

✽ आत्म निवेदन ✽

पुरातात्विक शोधों से यह भली-भांति प्रमाणित हो चुका है कि विश्वभर के सभी देशों की सांस्कृतिक चेतना का मूल उत्स, भारतीय आध्यात्म ही रहा है।

भारतीय आध्यात्म का एक अंग है— तंत्र साधना। तंत्र शास्त्रों को भी तीन भागों में वर्गीकृत किया गया है— यंत्र, मंत्र और तंत्र।

आध्यात्म के अंग 'तंत्र शास्त्र' का प्रादुर्भाव ध्वनि विज्ञान की गहन अध्ययन का परिणाम था। अतः मंत्र विज्ञान पूर्णतः ध्वनि (नाद) विज्ञान पर आश्रित है। गोपनीयता इसका विशेष गुण है। यंत्र विभाग आकृति विज्ञान और अंग विज्ञान के गहन अध्ययन का परिणाम है और तंत्र विभाग—वनस्पति जगत पदार्थ विज्ञान की शोध और अध्ययन का प्रतिफल है। आध्यात्म के तंत्र खण्ड का इसलिए आयुर्वेद के साथ ही अभिभाज्य संबंध है। अनेक वनस्पतियाँ ऐसी हैं, जो आयुर्वेद और तंत्र में समान भाव क्षमता प्रदर्शित करती हैं।

चूंकि इस ग्रंथ का प्रतिपाद्य विषय आयुर्वेद न होकर, तंत्र है, अतः हमने इस ग्रंथ में केवल उन वस्तुओं के तांत्रिक प्रभाव दर्शन ही प्राथमिकता दी है। प्रसंगवशात् कुछ आयुर्वेदीय गुणों का भी उल्लेख हुआ है, यह अलग बात है।

तंत्र शास्त्र में यों तो अनेकानेक वस्तुओं का उल्लेख मिलता है, किंतु हमने सर्वथा दुर्लभ और अप्राप्य वस्तुओं का वर्णन न करते हुए, सहज—सुलभ और प्राप्त वस्तुओं को ही अपना वर्ण्य—विषय बनाया है। साथ ही इस बात का भी विशेष ध्यान रखा है कि समग्र तंत्र—शास्त्र (यंत्र, तंत्र, मंत्र) में प्रयुक्त होने वाली कोई भी वस्तु न रह जाय।

मुझे तो यह आशा है कि तंत्र प्रेमियों के लिए यह ग्रंथ बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा, किंतु यथार्थ निर्णायक तो पाठकवृन्द ही होगा।

✽ विषयानुक्रमिका ✽

1. वनस्पति तंत्र	—	2	19. श्री फल	—	54
2. बांदा	—	3	20. नागदमन	—	55
3. श्वेतार्क	—	11	20. उदुम्बर	—	56
4. रुद्राक्ष	—	18	21. पीपल	—	58
5. शंख	—	22	22. बरगद	—	59
6. हाथाजोड़ी	—	27	23. विजया	—	60
7. गोरोचन	—	31	24. सहदेवी	—	61
8. गुंजा	—	34	25. अपामार्ग	—	62
9. सियारसिंगी	—	37	26. मुण्डी	—	63
10. एकाक्षी नारियल	—	39	27. बहेड़ा	—	64
11. निर्गुण्डी	—	42	28. लक्ष्मणा	—	65
12. कुश	—	43	29. नियमानुसार ही निकालें	—	
13. हरिद्रा	—	45	तांत्रोक्त जड़ी	—	65
14. नागकेशर	—	47	30. क्या—क्या कब न खाएं	—	66
15. कमल	—	49			
16. लवंग	—	50			
17. कपूर	—	52			
18. सिंदूर	—	54			



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)
परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.
Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



वनस्पति तंत्र :- पृथ्वी पर प्रकृति ने बहुविध सृष्टि करके अपनी अद्भुत शक्ति क्षमता और रहस्यमयता प्रमाणित की है। अनेक प्रकार के जीव-जंतु, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे कीट-पतंग आदि सृष्टि प्रकृति की विचित्रता को उजागर करते हैं।

विज्ञान वेत्ताओं ने आज से हजारों वर्षों पूर्व ही, सृष्टि का विवेचन करते हुए, समस्त प्राणियों को चार वर्गों में विभाजित किया था। उनकी मान्यता थी कि संसार में चार प्रकार की सृष्टि (जीवधारी शरीर रचना) होती है। उन्हीं चार वर्गों में सारा संसार आ जाता है। वे चारों वर्ग इस प्रकार हैं :-

1. अण्डज 2. पिण्डज 3. स्वेदज 4. उद्भिज

अण्डज :- वे जीव जो अण्डे से जन्म लेते हैं, जैसे-पक्षी, साँप, घड़ियाल और कीट-पतंग इत्यादि। इन जीवों के मुख्य रूप में दो वर्ग होते हैं- 1. उड़ने वाले और 2. रेंगने वाले। उड़ने वाले जीवों में पतंगे और पक्षी आते हैं। रेंगने वाले जीवों में सरीसृप वर्ग के जीव, जैसे-साँप, छिपकली, घड़ियाल और गिरगिट इत्यादि। इनकी सामान्य पहचान यह है कि इनके शरीर में कान का अवयव (श्रवणेन्द्रिय) केवल छेद, के ररु में होता है, मनुष्य और पशु के जैसे इनके कान ऊपर उभरे नहीं होते। ये सभी उड़ने और रेंगने वाले जीव कान से (कान का ऊपरी भाग-पट) रहित होते हैं। इन्हें कान का छेद भर प्राप्त रहता है। बस! उसी छेद से ध्वनि इनके मस्तिष्क में प्रविष्ट होकर इन्हें वातावरण के प्रति सजग करते रहती है। अण्डज प्राणियों की मोटी पहचान यही है कि इनके कान नहीं होते, भले ही वे शरीर से भारी-भरकम होते हों। घड़ियाल, मगरमच्छ, मगरौठा, गोह, विषकपरी, छिपकली, गिरगिट और साँप-बिच्छू ऐसे ही प्राणी हैं। इसी प्रकार सामान्य पक्षी-गौरैया, ललमुनिया से लेकर सारस और शुतुरमुर्ग तक सभी अण्डज प्राणी हैं क्योंकि इनके शरीर में कान का अवयव बाह्य रूप में नहीं होता।

पिण्डज :- आरंभ में पिण्ड के रूप में उत्पन्न होने वाले प्राणी 'पिण्डज' कहलाते हैं। मानव पशु और कितने ही जीव-जंतु इसी श्रेणी में आते हैं। इनकी वर्गीय भिन्नता इस रूप में पहिचानी जा सकती है कि ये अंडे से उत्पन्न नहीं होते, माँ के गर्भ से साकार पिण्ड के रूप में हाथ, पैर, सिर, नाक, कान आदि अवयवों सहित जन्म लेते हैं। जो भी जीवधारी-वह चाहे पशु हो अथवा मानव, यदि उसके कर्ण पटल (कान) बाहर निकले हुए हैं, वे सब पिण्डज श्रेणी में आते हैं। मनुष्य, गाय, बैल, भैंस, बकरी, शेर, भालू, हिरण आदि सब पिण्डज जीव हैं।

स्वेदज :- स्वेदज का अर्थ है-पसीना। स्वेद अर्थात् पसीने से उत्पन्न होने वाले विविध कीड़े, स्वेदज कहलाते हैं। जूँ, चील्लर, पिस्सू, खटमल इत्यादि की गणना स्वेदज प्राणियों में की जाती है।

उद्भिज :- पृथ्वी की तह फोड़कर अंकुर रूप में निकलने वाली सृष्टि 'उद्भिज' कहलाती है। वैज्ञानिकों के अनुसार यह भी प्राणवान होती है। उद्भिज वर्ग में पेड़-पौधे आते हैं, जिन्हें वनस्पति कहा जाता है। पृथ्वी से उत्पन्न होने वाले सभी पेड़-पौधे, लता-गुल्म, झाड़ी और घासों सभी उद्भिज वर्ग में आती हैं।

तंत्र शास्त्र में उद्भिज वर्ग की विभिन्नताओं पर शोध और अनुसंधान करके (प्रयोग और परीक्षण करके) जो प्रामाणिक निष्कर्ष घोषित किये गये हैं, वे इतने विस्मयकारी, किंतु यथार्थ की कसौटी पर खरे उतरे हैं कि बुद्धि चकरा जाती है।

प्राचीन महर्षियों ने वर्षों-शताब्दियों का समय इन वनस्पतियों के परीक्षण में लगाया है। और अंततः उनके प्रति पूर्ण आश्वस्त होकर अपने ग्रंथों में इनकी प्रभावशीलता का वर्णन किया है। वे वनस्पतियाँ यद्यपि बहुत कम रह गयी हैं, फिर भी जो हैं - उन्हें यदि निर्दिष्ट विधि से प्रयोग करें, तो आज भी उनका चमत्कारी प्रभाव सामने आ खड़ा होता है। वनस्पति विज्ञानियों, तंत्राचार्यों और आयुर्वेद मर्मज्ञों ने विभिन्न पेड़-पौधों, लताओं और घासों के संबंध में छानबीन करके आश्चर्यजनक परिणाम घोषित किए हैं।

तंत्र शास्त्र में यद्यपि दैवी-शक्तियों की पूजा का विधान है, मंत्र जप को भी महत्वपूर्ण माना गया है, यंत्र रचना भी इसका एक अंग है। किंतु सर्वाधिक आवश्यक है - भौतिक वस्तुओं का प्रयोग। तंत्र में किसी न किसी वस्तु को शक्ति संचय का माध्यम बनाया जाता है, भले ही वह चुटकी भर राख हो, धूल हो, या फूल अथवा कोई फल या पत्थर ढेला हो।





तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



आवश्यकतानुसार, तत्संबंधी विधान से सामंजस्य रखते हुए, यदि निर्दिष्ट वस्तुओं को प्रयोग किया जाय तो अभीष्ट की प्राप्ति अवश्य होती है। यह अभीष्ट किसी भी तरह का हो सकता है — रोग निवारण, धनार्जन, प्रेम स्थापन, विघटन, उच्चाटन, सम्मोहन और मारण तक। शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, व्यावसायिक अथवा दैविक-भौतिक कोई भी समस्या हो, तंत्र साधना के द्वारा निश्चित रूप से उसका समाधान किया जा सकता है।

वनस्पतियों का प्रभाव :- हम अपने दैनिक जीवन में जितने भी पेड़-पौधे और घासों देखते हैं, सबमें कुछ-न-कुछ प्रभाव, भिन्नता अवश्य है। बबूल में कांटे हैं, आम का फल स्वादिष्ट है, केला एक अलग रूप-रेखा और स्वाद वाला फल है। गेहूँ, जौ, चना आदि के पौधे-आकार, फल, स्वाद और प्रभाव की दृष्टि से पर्याप्त भिन्नता रखते हैं।

घासों का प्रभाव भी प्रमाणित है। कोई घास जानवरों का दूध बढ़ा देती है, कोई उन्हें हृष्ट-पुष्ट कर देती है, कोई दस्तावर होती है, उनको खाने से जानवर पेचिश और अतिसार से ग्रस्त हो जाते हैं। एक पौधा है-भाँग। उसकी पत्ती खाने से नशा होता है। मनुष्य उसके प्रभाव में अपनी वास्तविक विचार-शक्ति, चेतना और संतुलन के विपरीत आचरण करने लगता है। इस प्रकार सिद्ध है कि प्रत्येक वनस्पति में कोई न कोई प्रभाव अवश्य निहित है। तंत्राचार्यों ने उनकी खोज करके अनेक प्रकार के प्रयोग निर्धारित किए हैं।

वनस्पति तंत्र की उपयोगिता :- वनस्पतियाँ प्रायः सुलभ होती हैं। यहाँ हम विकास के नमा पर प्रकृति की गोद से दूर जा रहे- भौतिक चकाचौंध वाले नगरों की बात नहीं कर रहे हैं, क्योंकि देश की अधिकांश जनता नगरों में नहीं बल्कि गाँवों में रहती है। और नगरों की संख्या तो अब बढ़ रही है, गाँव सभ्यता के आरंभ काल में ही बस चुके थे। मानव का आदिम समाज गाँवों में ही रहता था। गाँवों में वनस्पतियाँ सहज-सुलभ रहती थीं, अतः महर्षियों ने सारे प्रयोग जंगलों, ग्रामीण क्षेत्रों में ही रहकर किए हैं।

एयरकण्डीशण्ड कमरे, फोर-फाईव स्टार होटल और महल, पैलेस उनकी कल्पना में नहीं थे। उनका ज्ञान-ध्यान, उनकी तपश्चर्या और उनके शोध परीक्षण-सब या तो उनकी कुटिया में होते थे या खुले आकाश के नीचे-मैदान, वाटिका, सरिता-तट आदि में।

आज हम सभी डॉक्टरों के भक्त हो चले हैं, अन्यथा पहले वैद्य वर्ग हमारी शारीरिक व्याधियाँ दूर करता है। छोटे गाँवों में जहाँ वैद्य नहीं होते थे, ग्रामीण लोग ही तंत्रोचार से सारे रोग-विकार दूर कर देते थे। भले ही वे पढ़े-लिखे नहीं होते थे, आज के डिग्री-डिप्लोमा उस समय कल्पना में भी नहीं थे। लेकिन लोगों की धारणा शक्ति प्रबल थी। जो कुछ एक बार देख-सुन लेते-जीवनभर याद रहता था। वे बुजुर्गों से, साधु-महात्माओं से या वंश परम्परा से- कहीं-न-कहीं कुछ तांत्रिक जानकारी अवश्य प्राप्त कर लेते थे और उसके सहारे आवश्यकता पड़ने पर तात्कालिक उपचार, समस्या का समाधान कर देते थे।

आज हम पश्चिमी सभ्यता, भौतिक जड़ विज्ञान और नास्तिकता के व्यूह में अपनी मानसिकता बिल्कुल विकृत कर चुके हैं, इसलिए न तो तंत्र पर विश्वास करते हैं, न उसका ज्ञानार्जन और उपयोग आवश्यक मानते हैं। किंतु यह शास्त्र सर्वथा, विज्ञान सम्मत, प्रामाणिक, साधार और निश्चितरूपेण प्रभावशाली है। आवश्यकता है, इसके समुचित अध्ययन, मनन और धैर्यपूर्वक प्रयोग की। आगे हम वनस्पति तंत्र पर कुछ ज्ञातव्य तथ्य प्रस्तुत कर रहे हैं।

✽ बाँदा ✽

सामान्य परिचय :- बाँदा एक वनस्पति है, जो भूमि पर न उगकर किसी वृक्ष पर उगती है। इस प्रकार यह एक परोपजीवी पौधा है, जो किसी पौधे (पेड़) पर उगकर उसी के तत्वों से अपना पोषण करता है। आम, जामुन, महुआ आदि पेड़ों पर इसे सरलता से देखा जा सकता है। इसके पत्ते हरे, मोटे, कड़े और आकार में कुछ लंबे, गोलाईयुक्त होते हैं। बाँदा की लकड़ी गाँठदार, छोटी और खुरदुरी होती है। इसके फूल बहुत सुंदर, गुलाबी रंग के, लौंग के आकार में उत्पन्न होते हैं। ये फूल गुच्छों में होते हैं और इसके नीचे निमौली जैसा फल भी होता है।

मान्यता है कि 'बाँदा' एक रोग सूचक पौधा है। यह स्वयं भी एक रोग शोषका है, अतः जिस पेड़ पर उगता है-उसकी वृद्धि रुक जाती है। इस प्रकार का क्षयकारी प्रभाव उस पेड़ को भीतर ही भीतर जर्जर करने लगता है। यही कारण है कि





तांजीवत वनस्पतियाँ : वनस्पति तंत्र



गाँव के किसान अपने आप जामुन, महुआ के पेड़ों पर उगा बाँदा देखकर, उसे काट देते हैं। बाँदा वाली डालियों (टहनियों) की काँट-छाँट से उसका दूषित प्रभाव नष्ट हो जाता है। वैसे, बाँदा किसी भी पेड़ पर हो सकता है, परंतु यह सबसे अधिक आम के पेड़ पर पाया जाता है। जामुन और महुआ में भी उगता है। किंतु यह अंतिम नहीं है। बाँदा किसी भी पेड़ पर उग सकता है। तंत्र शास्त्र में वृक्ष भेद के अनुसार उस पर उगे बाँदा के प्रयोग और प्रभावों का विस्तार से वर्णन किया गया है। हर पेड़ के बाँदा का अलग प्रभाव होता है, किंतु सभी पेड़-पौधों का बाँदा सुलभ नहीं होता। कुछ पेड़ों का बाँदा तो हीरा, नीलम जैसा दुर्लभ होता है। अस्तु, बाँदा एक तुच्छ, उपेक्षित और अनुपयोगी वनस्पति दिखने पर भी तंत्र शास्त्र की दृष्टि में अद्भुत प्रभावशाली होता है। यहाँ विभिन्न पेड़ों पर पाए जाने वाले बाँदा का प्रयोग और प्रभाव लिखा जा रहा है। समर्थ साधक चाहें तो इससे लाभ उठा सकते हैं।

बाँदा : एक भ्रांति भी :-

बाँदा के तांत्रिक प्रयोग लिखने के पूर्व उससे संबंधित एक भ्रांति की ओर संकेत करना आवश्यक है। अतः पहले उसी की चर्चा कर रहा हूँ।

ऊपर मैंने एक विशिष्ट वनस्पति को बाँदा बताया है, जो आम, जामुन, महुआ के पेड़ों पर आसानी से देखा जा सकता है। इन तीनों पर उपलब्ध, बाँदा एक ही तरह का होता है—वही पत्ते, वही गांठदार टहनी, वही लाल लवंगाकृति फूलों का गुच्छा। और फल भी वही नीम या जामुन के फलों के आरम्भिक रूप में। इसे किसी से भी पूछें वह इसका नाम 'बाँदा' ही बताएगा। यदि इस विशिष्ट वनस्पति का नाम बाँदा है, तो मानना पड़ेगा कि जब किसी पेड़ के बाँदा का उल्लेख, वहाँ उस पेड़ पर इसी बाँदा की उत्पत्ति का संकेत रहता है। परंतु यही बाँदा अन्य वृक्षों पर नहीं देखा जाता, कदाचित ही कहीं होता हो। हाँ, इसकी दो-तीन उपजातियाँ भी हैं, जो लगभग ऐसी ही होती है।

बाँदा को मैं अपने अनुभव से एक विशेष वनस्पति मानता हूँ। साथ ही यह भी स्वीकार करता हूँ कि इसकी श्रेणी की दो-एक वनस्पतियाँ और भी हैं, जो किसी पेड़ पर उगकर, उसमें गांठ पैदा कर देती हैं। टहनी, पत्ते, फूल और फल और गांठ— ये बाँदा के अंग हैं। परंतु सभी पेड़ों पर सर्वांग, 'बाँदा' नहीं पाया जाता। केवल आम, जामुन और महुआ के पेड़ पर ही सर्वांग रूप में मिलता है। अन्यत्र या तो मिलेगा ही नहीं या फिर केवल गांठ के रूप में या मात्र दो-तीन पत्तियों की छोटी-सी टहनी।

सामान्यतः तंत्र की प्रचलित पुस्तकों में बाँदा की परिभाषा इस प्रकार प्राप्त होती है :-

जब एक वृक्ष के ऊपर किसी दूसरी जाति का पेड़ उग आता है, तो उसे बाँदा कहते हैं। यथा—नीम के पेड़ पर पीपल का पौधा उग आना या पीपल पर नीम का अंकुर दिख पड़ना। इसकी उत्पत्ति में यह कारण बताया गया है कि चिड़ियाँ फल खाती हैं और वे इधर-उधर मल त्याग करती रहती हैं। कभी-कभी उनके द्वारा लाया गया, खाया गया—पीपल, पाकर, बरगद का फल अपने बीज उस दूसरे पेड़ (नीम, आम, महुआ, बेल आदि पर कहीं भी) छोड़ देता है। चिड़ियों द्वारा इस प्रकार अनजाने, निरायास ही विभिन्न फलों के बीज स्थानान्तरित होते रहते हैं। यदि कोई बीज किसी पेड़ के तने पर कहीं भी थोड़ी-सी भी धूल पा गया हो, तो वह वहाँ उगकर पौधे का रूप ले लेता है। ऐसे पौधों को 'बाँदा' कहते हैं। किसी भी जाति के पेड़ पर, किसी भी दूसरी जाति का स्वतः उगा हुआ पौधा बाँदा कहलाता है।

अगर यह परिभाषा मान ली जाय तो केवल पाकर, बरगद और पीपल ही बाँदा सिद्ध होते हैं, क्योंकि अधिकतर यही दूसरे पेड़ों पर उगते हैं। नीम के पेड़ पर आसानी से देखे जा सकते हैं। इसी तरह कहीं-कहीं नीम का पौधा भी उग आता है। किसी प्रकार वहाँ निमौली का बीज पहुँच जाने से अनुकूल वातावरण पाकर वह पौधों के रूप में प्रस्फुटित होकर बढ़ने लगता है। हालांकि नीम का पौधा भी बहुत कम कहीं किसी पेड़ पर उगा देखा जाएगा। मुख्यतः पीपल, बरगद और पाकर ही उगते हैं। अपवाद स्वरूप गूलर का पौधा भी दिख जाता है। परंतु मेरी मान्यता है कि उन्हें बाँदा कहना ठीक नहीं है। बाँदा वही है, जो आम, जामुन के पेड़ पर उगता है। किसी फल का बीज न होकर स्वयं में एक स्वतंत्र मौलिक वनस्पति का संबंध है, मेरी धारणा उसी विशेष पौधे के लिए समर्थन देती है। कहीं भी कोई भी, पेड़ उग आए और बाँदा मान लिया जाय, ऐसा मेरी राय में, उचित नहीं होगा।





तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



अस्तु, यह मैंने नितांत व्यक्तिगत मत प्रकाशित किया है, इसकी कोई बाध्यता नहीं है और न ही प्राचीन विद्वानों की मान्यता का खण्डन करता हूँ। फिर भी मेरा अपना मत है कि बांदा एक वनस्पति है और वह कहीं भी मिले— अपने मौलिक रूप में ग्राह्य होती है। मैं यह मानता हूँ कि आम—जामुन पर उपलब्ध होने वाला बांदा—अन्य पेड़ों पर नहीं होता। अतः यदि किसी साधक को बांदा तंत्र का प्रयोग करना है, तो वह या तो प्रचलित मान्यता पर आस्था रखते हुए वांछित वृक्ष के परोपजीवी पौधों को बांदा स्वीकार करके ले आए और उसका प्रयोग करे या फिर आम, जामुन वाली विशेष वनस्पति की खोज करे। वह तो निश्चित रूपेण बांदा ही है। यदि वह मिल जाय, तो फिर कहना ही क्या है। अस्तु, सर्वप्रथम अपने को आश्वस्त करें। (किसी विद्वान, तांत्रिक, वनस्पति शास्त्री, वैद्य से भी परामर्श ले लें) कि बांदा किसे कहते हैं और मेरी साधना के लिए वांछित बांदा कहाँ मिलेगा।

अभीष्ट बांदा प्राप्त करके, उसे विधिवत् प्रयोग किया जाय तो सचमुच लाभ होता है।

बांदा तंत्र में मुहूर्त का महत्व :- अपनी साधना के लिए वांछित बांदा की खोज करें वह कहाँ है। फिर उससे संबंधित शुभ—मुहूर्त में उसे, पूर्व निमंत्रण देकर ले आयें और निर्दिष्ट विधि से प्रयोग करें। मुहूर्त निर्धारण में नक्षत्र का विशेष ध्यान रखा जाता है। जैसा कि आगे लिखा जाएगा, प्रयोग भेद से, वृक्ष भेद से—प्रत्येक बांदा के लिए अलग—अलग नक्षत्रों की उपयोगिता का निर्देश मिलता है। प्राचीन ऋषि—मुनियों ने दशाब्दियों तक अनुसंधान करके, शोध—परीक्षण के पश्चात् ये नियम—सिद्धांत और प्रतिफल घोषित किए हैं। अतः ये असंदिग्ध और अकाट्य हैं, हाँ इनकी विधि कहीं—कहीं अस्पष्ट है। अतः साधक भ्रमवश साधना में त्रुटि कर बैठता है। ऐसी भ्रामक स्थिति से त्राण पाने के लिए गुरु की महत्ता प्रतिपादित की गयी है। गुरु ऐसे विषयों का ज्ञाता होगा, तो अवश्य ही समस्या का समाधान बता देगा। इसलिए गुरु का निर्वाचन भी बहुत छानबीन के बाद करने का परामर्श दिया गया है।

जाति भेद से बांदा का प्रयोग :-

आम, जामुन, महुआ, बेल, सिरस, पीपल, बरगद, कटहल, पाकर, इमली आदि विभिन्न प्रकार के पेड़ हमारे देश में पाए जाते हैं। तंत्राचार्यों ने स्व—अनुभव के आधार पर घोषित किया है कि प्रत्येक पेड़ पर उगा हुआ 'बांदा' अपना एक विशिष्ट प्रभाव रखता है। उन्होंने, उपलब्ध लगभग सभी वृक्षों के बांदा का प्रयोग—परीक्षण किया गया, उसी के आधार पर सबके प्रयोग फल बताये गए हैं। उदाहरण के लिए, कुछ प्रमुख पेड़ों पर उत्पन्न होने वाले बांदा की प्रयोग विधिवत् और उनकी प्रतिक्रिया (प्रभावशीलता) का वर्णन किया जा रहा है।

1. बदरी—बांदा (बेर का बांदा) :- 'बदरी' संस्कृत का शब्द है। इसका अर्थ होता है बेर। 'बांदा' शब्द भी संस्कृत का है, जो बांदा के लिए प्रयुक्त होता है। इस प्रकार 'बदरी बांदा' से बेर के पेड़ पर उत्पन्न बांदा का आशय समझना चाहिए।

यह कठिनाई से मिलेगा। खोज करें, कदाचित मिल ही जाए। बेर के पेड़ पर (उसके किसी शाखा—संधि स्थल पर) यदि किसी भी दूसरी जाति का पौधा उगा है, तो उसे बेर का बांदा मान लें और स्वाति—नक्षत्र में उसे ले आएँ। लाने के एक दिन पूर्व संध्या को उसे निमंत्रण दे आएँ कि — हे दिव्य वनस्पति! मैं अपने कार्य सिद्धि के लिए कल प्रातः आपको लेने आऊँगा। कृपया मेरे साथ चलकर, मेरी सहायता करें।

फिर दूसरे दिन, बिना किसी से बोले, निपट अकेले ही जिस समय स्वाति नक्षत्र चल रहा हो, उस पेड़ के पास जाकर, बांदा तोड़ लाएं। उसे घर लाकर देव प्रतिमा की भांति स्नान कराएं। चंदन, पुष्प, धूप—दीप से पूजा करें, फिर अपने इष्टदेव का मंत्र जपें। वैसे वनस्पतियों के भी मंत्र होते हैं। बाद में वह बांदा लाल कपड़े में बांधकर शरीर पर कहीं भी (भुजा, कंठ, कमर, सिर) धारण कर लें। यह बांदा धारण करके यदि किसी से विनम्रतापूर्वक (हाथ जोड़कर सभ्यता के साथ) कोई सहायता मांगी जाय तो अवश्य प्राप्त होगी। यह प्रयोग अनुकूलन प्रदान करता है।

2. बहुवार का बांदा :- पता लगाएं, यदि कहीं बहुवार के पेड़ पर उगा हुआ बांदा दिख पड़े तो मघा नक्षत्र वाले दिन पूर्व वर्णित विधि से घर ले आएँ और पूजा करके लाल कपड़े में लपेटकर तिजोरी, कोष, भण्डार, आलमारी या गल्ला कहीं भी रख दें और नित्य धूप—दीप देते रहें। इसे भुजा या गले में भी धारण किया जा सकता है। बहुवार का बांदा





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



धन-वृद्धि के लिए प्रसिद्ध है। यह भले ही दुर्लभ है, परंतु मिल जाए तो प्रयोग करने पर पर्याप्त श्रीवृद्धि देता है। यह बांदा जहाँ भी रहेगा— धन की कमी नहीं होने पाएगी।

3. शिरीष का बांदा :- शिरीष को सिरसा, सिरस, शिरस और सेरसा भी कहते हैं। यह एक भारी-भरकम और ऊँचा पूरा वृक्ष होता है। इसकी फलियाँ सेम जैसी बहुलम्बी, पतली और चपटी होती है। यह पेड़ अपनी शोभा के लिए प्रसिद्ध है। भीषण गर्मी में (अप्रैल-मई) में यह फूलता है। इसके फूल बड़े कोमल, सुंदर और आकर्षक होते हैं। शिरीष पुष्प को कवियों ने विभिन्न उपमाओं के लिए प्रयुक्त किया है। प्राचीन-काल में मुनि बालाएँ, वर-कन्यायें — श्रृंगार के लिए इसके फूल कानों में पहनती थीं। राजा दुष्यन्त ने शकुन्तला से भेंट के बाद अपने राजभवन में रहते हुए, एक दिन भाव-विभोर होकर शकुन्तला का चित्र बनाया था। जब चित्र पूरा हो गया, तो उसकी शोभा निरखते समय राजा को ध्यान आया कि शकुन्तला के कान आभूषण रहित हैं, जबकि वह पुष्पाभरण पहिने हुए थीं। तब राज ने अपने मित्र से कहा —

“ मित्र न कर्णाप्रिते बन्धनं सखे, शिरीषमागण्ड विलम्ब केशाम् ।”

इस प्रकार शिरीष पुष्प को शोभा, सौन्दर्य और कोमलता के लिए पौराणिक काल से ही मान्यता प्राप्त है। तो शिरीष का बांदा पूर्वाभाद्रा नक्षत्र में लाकर, विधिवत् पूजनोपरांत सिर पर धारण करने से समस्त प्रकर के चिन्ता-भय नष्ट हो जाते हैं।

4. बरगद का बांदा :- बरगद पेड़ का बांदा आर्द्रा नक्षत्र के दिन लायें और विधिवत् पूजा करके भुजा पर धारण करें। यह बांदा श्रम, संघर्ष, युद्ध आदि में सदैव रक्षक और विजयदायी होता है। शारीरिक सुरक्षा, शक्ति वर्द्धक और साहस उत्पन्न करने में यह प्रयोग अद्भुत प्रभाव दिखाता है।

5. हरसिंगार का बांदा — यह दुर्लभ बांदा है। परंतु यदि किसी को कहीं दिख जाए तो समझे कि उसके लिए लक्ष्मी का कृपा-कटाक्ष प्राप्त हो चुका है। हस्त नक्षत्र वाले दिन इसे (हरसिंगार का बांदा) ले आयें और पूजनोपरांत लाल कपड़े में बांधकर बक्से में रख दें। यह बांदा जहाँ कहीं भी रखा जाएगा—धन-समृद्धि का मार्ग खोल देगा। भुजा अथवा कंठ में धारण करने पर व्यक्ति को धनागम के अनेक स्रोत प्राप्त हो जाते हैं।

6. थूहर का बांदा — यह बांदा सामर्थ्य बढ़ाकर वाणी को सम्मोहक बनाता है। हाजिर-जवाबी (प्रत्युत्पन्न मतित्व), प्रभावशीलता, सम्मोहन, दूरदर्शिता, मेधा, चिन्तन शक्ति और वाक्चातुरी बढ़ाने में यह बांदा चमत्कारी सिद्ध होता है। ध्यान रहे कि ये सभी प्रयोग विधिवत् किए जाने पर ही लाभकारी होते हैं। कोई भी वनस्पति लानी हो, एक दिन पूर्व संध्या को उसके पास जाकर निमन्त्रण दे आयें, फिर दूसरे दिन उपयुक्त मुहूर्त में स्नानादि से शुद्ध होकर वहाँ जायें और उसे ले आयें। घर लाकर उसे विधिवत् स्नान करायें, चंदन, धूप, अक्षत, पुष्प, घृत-दीप आदि से पूजा करें, वांछित मंत्र जपें (यदि मंत्र विशेष का निर्देश नहीं है, तो शिवजी या दुर्गाजी का मंत्र कम-से-कम 11 माला जप लें) इस प्रकार विधिवत् पूजा किए जाने पर ही, तांत्रिक वस्तुएं प्रभावशाली हो पाती हैं, अन्यथा इनकी शक्ति सुप्त-लुप्त रहती हैं।

7. उदुम्बर का बांदा — उदुम्बर अर्थात् गूलर वृक्ष का बांदा धनदायक होता है। इसे जहाँ भी स्थापित किया जाएगा, वहाँ धन-धान्य, संपदा की वृद्धि अवश्य होगी। इसके लिए मान्यता है कि 'रोहिणी नक्षत्र' के दिन गूलर वृक्ष का बांदा पूर्वोक्त विधि से ले आयें और उसे धूप-दीप से पूजित अन्न-भण्डार, गोलक कहीं भी रख दें— इसका दिव्य प्रभाव निश्चित रूप से धन-धान्यदायक रहेगा।

8. कुश का बांदा — कुश एक घास है। कभी-कभी इसके पौधे पर, कहीं बीच में पत्ती निकलने वाले स्थान पर एक गोल छोटी-सी कत्थई गहरे-रंग की गांठ बन जाती है। यह गांठ रुद्राक्ष की तरह खुरदुरी होती है, इसी गांठ को कुश का बांदा कहते हैं। मैंने इसे कई बार देखा है। अगर कुश के पौधे सहित यह गांठ घर में लाकर रखी जाय तो दरिद्रता दूर हो जाती है। परंतु यह दुर्लभ पौधा है, कदाचित ही कहीं मिल पाता है। मैंने एक बार एक बाबा के पास 20 पौधे देखे थे। सब बिल्कुल नये थे— लगभग डेढ़-डेढ़ फुट लंबे। उन सर्वथा नये कुशा पौधों में सुपारी से लेकर झरबेरी के आकार तक के प्रत्येक गोल पौधे में एक गाँठ— प्राकृतिक रूप में उत्पन्न थी। वैसे, तांत्रिक वस्तुएं बेचने वालों के पास खोजने से यह मिल जाता है। परंतु बहुधा पुराना, टूटा हुआ, छिन्न-भिन्न, विकृत और कुरूप आभाहीन होता है।



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



अगर कहीं अच्छा, साफ, सुडौल, अभंग, कुश का बांदा प्राप्त हो सके तो उसे 'भरणी' नक्षत्र के दिन लाकर विधिवत् पूजन करें, फिर भण्डार या बक्स में रख दें। यह बहुत ही प्रभावी वस्तु है। मेरी माताजी ने इसका प्रयोग किया था। बाद में मेरी पत्नी ने भी इसकी विस्मयकारी दिव्यता का अनुभव किया था। प्रतिबंध यही है यह बांदा अपने में पूर्ण हो, छिन्न-भिन्न नहीं। मुहूर्त (भरणी नक्षत्र) का भी ध्यान अवश्य रखना चाहिए।

9. आम का बांदा — किसी रविपुष्य योग के दिन विधिवत् आम का पौधा लायें। उसे घर लाकर, धूप-दीप से पूजा करें, फिर सुरक्षित रख दें। यह बांदा भुजा पर बांधने से कार्य में सफलता मिलती है। इस प्रयोग को विजयदायक कहा गया है।

10. अनार का बांदा — प्रयोग 1 — अनार के पेड़ का बांदा दुर्लभ वस्तु है। फिर भी यदि किसी को प्राप्त हो जाय, तो वह उसका लाभ उठा सकता है। नियम यह है कि जिस दिन ज्येष्ठा नक्षत्र हो, अनार का बांदा ले आयें और उसका विधिवत् पूजा करके घर के मुख्य द्वार पर (किसी आले पर) सुरक्षित रख दें। इस प्रयोग से घर में आया हुआ दुर्भाग्य, दुष्ट ग्रहों का प्रभाव, नजर-टोना, अभिशाप सब समाप्त हो जाते हैं। जिस घर में अनार का बांदा रहता है, वहाँ के सभी सदस्य, बच्चे सब निरोग रहते हैं। नजर, टोटका, अभिचार आदि का सारा दुष्प्रभाव शांत होकर, वहाँ सौभाग्य की वृद्धि होती है।

प्रयोग 2 — ऊपर अनार के बांदा का एक प्रयोग लिखा जा चुका है, जो भौतिक और वायव्य व्याधियों के निवारण में सहायक होता है। यहाँ नक्षत्र भेद से अनार का बांदा विधिवत् ले आयें और इसे पूजनोपरांत घर में रखें अथवा किसी रूप में शरीर पर धारण करें। इस (पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में प्राप्त और पूजित अनार का बांदा) तंत्र का प्रयोग व्यक्ति की आर्थिक स्थिति में सुखद परिवर्तन कर देता है। धन-संपत्ति और वैभव प्राप्त करने के इच्छुक जन इस बांदा का प्रयोग करके लाभ उठा सकते हैं।

11. बड़ का बांदा — यह परम पोषक होता है। अश्विनी नक्षत्र के दिन इसे विधिवत् ले आयें और धूप-दीप से पूजा करके रख दें। यह औषधीय घटक के रूप में विख्यात है। जिस दिन लायें, उसी दिन से पूजनोपरांत इसे पत्थर पर डालकर घिसें। चंदन जैसा लेप बन जाने पर वह लेप दूध में मिला लें और पी जायें तो शारीरिक शक्ति बढ़ जाती है। यह प्रयोग बुढ़ापे को दूर भगाकर शरीर को युवा (सबल) बना देता है।

12. कपित्थ बांदा — कपित्थ वृक्ष पर उगा हुआ (कैथे के पेड़ पर उत्पन्न), बांदा शस्त्र स्तम्भक होता है। इसके कृतिका नक्षत्र में ले आयें और पूजा करके रख दें। जिसने यह बांदा धारण कर रखा हो, वह शत्रुओं के मध्य घिर जाने पर भी उनके प्रहारों से आहत नहीं होता। वस्तुतः उस व्यक्ति पर हथियार कारगर नहीं होते।

13. सम्हालू का बांदा — वैसे सम्हालू चावलों की एक जाति है, जैसे बादशाह-पसंद, रामभोग, हंसराज, गुटुमरी, बासमती इत्यादि। परंतु यहाँ हमारा वर्ण्य-विषय चावल न होकर 'सम्हालू' नाम की एक स्वतंत्र वनस्पति है। यह पौधा सड़कों के किनारे कहीं-कहीं स्वतः उगता है। सरपत, बलुही जमीन, झाड़-झंखाड़ और छोट-मोटे नालों की तलहटी में यह अपने-आप उगता है। अरहर की भांति इसका पेड़ काफी हरा-भरा दिखता है। इसी पुस्तक में अन्यत्र 'सम्हालू' का वर्णन 'निर्गुण्डी' शीर्षक से किया गया है। उस निर्गुण्डी अथवा सम्हालू को पौधे पर भी बांदा उग आता है। यदि आपको निर्गुण्डी अर्थात् सम्हालू का बांदा दिख पड़े तो उसे विधिपूर्वक ले आयें। पूर्व-निमंत्रण और शुभ-मुहूर्त का प्रतिबंध इसमें भी रहता है।

जब भी आपको निर्गुण्डी पौधे पर बांदा दिख पड़े तो उसकी रक्षा करें। जिस दिन हस्त नक्षत्र हो, उसे घर ले आयें और विधिवत् पूजा करके रख लें। यह बांदा धनदायक होता है। इसे ताबीज या किसी भी रूप में धारण करने से व्यक्ति को धनाभाव का क्लेश नहीं उठाना पड़ता है। आर्थिक समृद्धि के लिए यह परम लाभकारी प्रयोग है। परंतु निर्गुण्डी का बांदा सहज सुलभ नहीं होता, बिरले भाग्यवान को ही प्राप्त होता है।

14. बिदारीकन्द का बांदा — जंगलों में एक लता होती है—बिदारकंद। इसका पत्ता पान की तरह होता है। इसकी जड़ शकरकंद की भांति गांठों वाली होती है। शकरकंद, सफेद (लाल भी) कोमल और मीठी होती है, जबकि बिदारीकंद





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



(और वाराही कंद भी) की जड़ खुरदुरी, काली कुरूप और स्वाद में कटु होती है। बिदारीकंद का प्रयोग शक्तिवर्द्धक औषधियों में किया जाता है। अब जंगल समाप्त हो चले हैं, किंतु यदि कहीं उसके पौधे मिलें और कोई व्यक्ति इसकी जड़ खोद लाये तो उसका चूर्ण सेवन करके शारीरिक शक्ति बढ़ा सकता है। किंतु यहाँ उसके औषधीय प्रयोगों का वर्णन न करके केवल उसके बांदा की विशेषता पर प्रकाश डालना है।

हालांकि बिदारीकंद का बांदा मिलना बहुत ही कठिन (असंभव जैसा) है, क्योंकि इसकी लता पर कोई अन्य परोपजीवी पौधा उगने की स्थिति-संभावना बहुत-ही कम रहती है। फिर भी यदि कहीं मिल जाए तो उसे पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में विधिवत् ले आये और पूजा करके घर में रख दें।

धन-वृद्धि के लिए तंत्र शास्त्र में इस प्रयोग को बहुत प्रभावशाली माना गया है।

15. कपास का बांदा :- इस बांदा की प्राप्ति भी असंभव प्रायः है, क्योंकि कपास के पौधे पर कोई परोपजीवी पौधा उगने की संभावना बहुत-ही कम रहती है। इस बांदा का जो भी प्रभाव तंत्र-ग्रंथों में वर्णित है, वह भी संशयात्मक प्रतीत होता है। संभव है इसकी विधि में कुछ गोपनीयता बरती गयी हो, क्योंकि जैसा प्रयोग लिखा मिलता है, उसके तथाकथित परिणाम को संदिग्ध ही कहा जाएगा। अस्तु प्रसंगपूर्ति के लिए वह विवरण भी प्रस्तुत है। भरणी नक्षत्र के दिन कपास का बांदा तांत्रिक विधि से लाये और उसकी पूजा करें। इसे धारण करने पर व्यक्ति उपस्थिति रहते हुए भी सामने वाले की दृष्टि से ओझल हो जाता है। अर्थात् यह बांदा 'अदृश्यीकरण' में सहायक होता है।

16. रोहित का बांदा :- ठीक कपास के बांदा जैसा विवरण, रोहित वृक्ष के बांदा का भी प्राप्त होता है। तंत्राचार में कहा गया है कि यदि कोई साधक रोहित वृक्ष का बांदा 'अनुराधा नक्षत्र' में विधिवत् लाकर पूजनोपरांत धारण करे, तो वह इच्छानुसार अदृश्य हो जाता है। मेरा अपना विचार है कि इन दोनों प्रयोगों (कपास और रोहित का बांदा) में या तो कहीं कोई प्रयोग विधि लुप्त/गुप्त है, इसमें कोई प्रतीकात्मक संकेत है। फलवर्णन में अतिशयोक्ति की संभावना भी मानी जा सकती है। वैसे, इस प्रयोग में कुछ-न-कुछ सत्यांश अवश्य है। कोरी कल्पना अथवा भ्रमजाल कहकर इसे टाला नहीं जा सकता। अदृश्यीकरण प्रयोग के और भी कई उल्लेख तंत्र-ग्रंथों में प्राप्त होते हैं, जिनमें कोई विशेष गुटिका मुँह में धारण करते ही व्यक्ति के अदृश्य हो जाना गया है। इस संदर्भ में एक और तथ्य स्मरणीय है—वस्तुओं पर देश, काल, स्थान, जलवायु, प्रयोक्ता, भावना, समकालीन वातावरण, प्रयोज्य घटकों की शुद्धता, त्रुटि, प्रयोग-विधि और मुहूर्तादि का प्रभाव अवश्य पड़ता है।

जो प्रयोग असफल हो जाते हैं, उनकी पृष्ठभूमि में, जाने-अनजाने ऐसा ही कोई विघ्न उत्पन्न हो जाता है, जो साधक के सारे श्रम को व्यर्थ और वर्णित प्रयोग को विवादाग्रस्त, अविश्वसनीय बना देता है। मेरा मत है ऐसी संदिग्ध और असंभव प्रायः साधना के लिए श्रम न करके कोई सात्विक प्रयोग किया जाय, जो साधक को सुख-शांति दे सके। अदृश्य हो जाने की शक्ति प्राप्त होते ही आज (भौतिक युग) के स्वार्थान्ध मानव निश्चय ही उसके दुरुपयोगों की ओर प्रवृत्त होंगे। इस क्षमता का उपयोग आज के आपराधिक युग में किसी दुष्कामना की पूर्ति के लिए ही होगा। संभव है ऐसी ही किसी स्थिति की कल्पना करके उसका पूर्वाभास पाकर मनीषियों ने इस तरह के प्रयोगों को जान-बूझकर अस्पष्ट बनाये रखा हो।

17. शाखौट बांदा का प्रयोग (1) :- ऊपर कपास और रोहित वृक्षों से प्राप्त होने वाले बांदा की साधना में बताया गया है कि प्राचीन तंत्राचार्यों ने इन प्रयोगों को अदृश्यीकरण सिद्धिदाता घोषित किया है। वैसा ही एक प्रयोग और भी है — 'शाखौट वृक्ष का बांदा' मृगशीरा नक्षत्र के दिन तांत्रिक विधि से लाकर, शोधन-पूजन करके सिद्ध कर लें। तदुपरांत पान के पत्ते में लपेटकर, गुटिका की भांति मुख में धारण करें। कहा गया है कि इस प्रयोग से साधक को अदृश्य हो जाने की क्षमता प्राप्त हो जाती है। अर्थात् पूर्ववर्णित प्रयोगों की भांति यह भी अदृश्यीकरण प्रयोग है।

शाखौट बांदा का प्रयोग (2) :- शाखौट का बांदा जहाँ अदृश्यीकरण के लिए प्रयोज्य बताया गया है, वहीं यह पृथ्वीतल में छिपे (भूगर्भ स्थिति) धन (गड़े हुए खजाने) का पता लगा भी देता है। इस प्रयोग के लिए उक्त बांदा 'अनुराधा नक्षत्र' के दिन लाया जाता है। सबसे पहले अनुराधा नक्षत्र में इसे वृक्ष पर से नियमानुसार निमंत्रित करने के पश्चात् घर ले आये। तदुपरांत उसकी पूजा करें। बाद में उसी दिन या फिर रविपुष्य योग हो, गोरोचन नामक पदार्थ के साथ इसे



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥



9

तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



साफ पत्थर पर घिसकर आंजन जैसा बना लें। स्नान पूजा के बाद ही यह अंजन तैयार करें, फिर देवी-देवताओं को स्मरण करते हुए, आँखों में आँज लें। इस अंजन से युक्त आँखों वाला साधक यदि ऐसे स्थान पर खोज करे, जहाँ भूगर्भ में धन छिपा होने की संभावना हो, तो यदि सचमुच वहाँ धन है, तो उस व्यक्ति को अवश्य दृष्टिगोचर होगा। गुप्त धन का पता लगाने के लिए तंत्र ग्रंथों में यह तथा ऐसे ही और भी कई प्रयोग वर्णित हैं। परंतु मेरी समझ में यह प्रयोग सर्वसाधारण के लिए सुलभ नहीं है। 'शाखौट' का पेड़ मुश्किल से मिलेगा, फिर उस पर बांदा की उपलब्धि भी कल्पनातीत मालूम होती है। अतः ऐसे दुःसाध्य प्रयोगों से सामान्य व्यक्ति को लाभ नहीं हो सकता।

18. वच का बांदा :- 'वच' भी एक वनस्पति है। यह दो प्रकार की होती है— कड़वी और मीठी। मीठी वच शक्तिशाली, मेधावर्द्धक, स्मरणशक्ति को जगाने वाली और कंठ शोधक होती है। जब कड़वी वच (इसे घोड़वच भी कहते हैं) विषाक्त होती है। इसे पीसकर लेप करने से बालों के जुएं मर जाते हैं। इसका लेप अधिक मात्रा में खा जाने से मृत्यु हो सकती है। तांत्रिक तथा औषधीय प्रयोगों में मीठी वच का ही प्रयोग होता है। वच के विषय में नीति-ग्रंथों में भी बहुत प्रशांसात्मक वाक्य प्राप्त होते हैं। त्वरित प्रभावशीलता वाली वस्तुओं का वर्णन करते हुए कहा गया है —

“सद्यः प्रज्ञा हरा तुण्डी, सद्यः प्रज्ञा करी वचाः। सद्यः शक्ति हरा नारी, सद्यः शक्तिकरं पयः॥”

इस श्लोक में 'सद्यः' प्रज्ञाकारी वचाः' पर ध्यान दें। आशय यह है कि वच का सेवन करने से तत्काल प्रज्ञा (बुद्धि, धारणा शक्ति) बढ़ जाती है। ब्राह्मी बूटी को भी इस गुण से युक्त माना गया है। यह प्रभावशीलता ठीक वैसी ही है, जैसी विजया (भांग) में होती है। सेवन के थोड़ी देर बाद ही मस्तिष्क का स्नायु तंत्र प्रभावित हो जाता है। ऐसा ही कुछ प्रभाव वच में है, जो सेवनोपरांत तत्काल मस्तिष्क को सक्रिय, सजग (नशे में नहीं सहज, चेतन, सशक्त) बना देता है।

स्वर साधना में भी 'वच' को परम लाभकारी कहा गया है। मेरे क्षेत्र के प्रसिद्ध वैद्य और संगीतज्ञ— अम्बिकाप्रसाद जी ने मुझे एक नुस्खा बताया था, उसमें भी 'वच' का वर्णन था —

“अदरक, भद्रक, पीतरसं, वच, वाकुचि, ब्राह्मी, सद्य घृतम्।

यदि इच्छित कोकिलनादि स्वरम्, पिव माघ चतुर्दश कृष्ण दिनम्॥”

इस प्रकार 'वच' बुद्धिवर्द्धक है और स्वर शोधक मानी गयी है। 'वच' के पौधों पर भी बांदा का उगना संभव है, हालांकि यह दुर्लभ वस्तु है। अगर कहीं मिल जाए तो उसे ले आयें। 'वच' का बांदा लाने का मुहूर्त नक्षत्राधारित न होकर, ग्रहणाधारित है। अर्थात् किसी भी ग्रहण के दिन (उत्तम होगा कि ग्रहणकाल में ही वह चाहे सूर्यग्रहण हो अथवा चंद्रग्रहण) उसे लाकर विधिवत् पूजा करें और सुरक्षित रख लें। बाद में इसे पीसकर चूर्ण बनायें और प्रातः काल सूर्योदय के पूर्व 3 माशा की मात्रा में 6 माशा शुद्ध गौघृत मिलाकर सेवन करें, ऊपर से ताजा (धारोष्ण) गो-दुग्ध पीयें। यह प्रयोग लगातार सात दिनों तक करें। वैसे मैं तो मानता हूँ कि 21 दिनों तक करना चाहिए। यह प्रयोग व्यक्ति की वाक्शक्ति बढ़ा देता है। जो लोग स्वरभंग, उच्चारण-दोष, हकलाहट, जिह्वा कष्ट अथवा वाणी संबंधी किसी भी व्याधि से ग्रस्त हों, वे इस प्रयोग से सुवक्ता, स्पष्ट, मधुर कंठ स्वर वाले और वाग्मी हो जाते हैं।

19. बिल्व का बांदा :- बेल का बांदा भी अदृश्यीकरण साधना के लिए उपयोगी माना गया है। इसको अश्विनी नक्षत्र के दिन विधिवत् लाकर पूजनोपरांत भुजा पर धारण करना चाहिए। प्रयास किया जाय तो कदाचित् बेल का कोई बांदा मिल भी जाय, परंतु मुझे इस विवरण में भी कहीं कोई अस्पष्टता, गोपनीयता, प्रतीकात्मक और कूटदृष्टांत की झलक मिल रही है। अन्यथा तब तक कोई-न-कोई साधक इस सिद्धि का स्वामी बनकर प्रकाश में आ चुका होता। बेल का पेड़ अपने देश में बहुत हैं और खोजने पर कहीं-न-कहीं बेल का बांदा भी मिल सकता है। किंतु आज तक कहीं किसी के अदृश्य होने का समाचार नहीं मिला। वस्तुतः इन प्रयोगों में कहीं-कहीं जान-बूझकर महर्षियों ने ऐसे रहस्य निहित कर दिए हैं कि कोई इनका दुरुपयोग न कर सके। वैसे, प्रत्येक क्षेत्र अपने में परीक्षित और अनुभूत होने पर ही कोई प्रसंग ग्रंथों में वर्णन का विषय बन पाया है।





तांजीवत वनस्पतियाँ : वनस्पति तंत्र



20. अशोक का बांदा :- पूर्ववर्णित तांत्रिक पद्धति से 'उत्तराषाढा नक्षत्र' के दिन अशोक वृक्ष का बांदा ले आये। इसकी पूजा करें और प्रतिदिन प्रातः सूर्योदय के पूर्व स्नान-पूजा से निवृत्त होकर, उसे पीसकर पीयें। यह प्रयोग साधक को अदृश्य होने की क्षमता प्रदान करता है।

21. नीम का बांदा :- नीम के पेड़ पर यदि बांदा दिख पड़े तो उसे 'ज्येष्ठा नक्षत्र' के दिन ले आये और घर के बाहर कहीं साफ जगह पर धूप-दीप से पूजा कर लें। (किसी-किसी ग्रंथ में पूजा का प्रतिबंध नहीं है।) तदुपरांत उसे विरोधी के शरीर पर डाल दें, स्पर्श करा दें। यह प्रयोग बहुत ही दुःखद, दुर्भाग्यकारी और पीड़क होता है। जिस व्यक्ति पर वह बांदा डाला जाएगा, उसको तत्काल ही दुर्भाग्य ग्रस्त कर लेगा। फिर उसकी कोई श्री-समृद्धि साथ नहीं होगी और वह लगातार दुर्भाग्यजनित क्लेश सहने को विवश हो जाएगा।

यही बांदा (नीम का बांदा) यदि 'आर्द्रा नक्षत्र' में लाये और विरोधी (शत्रु) के शयन कक्ष में अथवा वह जहाँ भी सोता है, फर्श के नीचे अथवा उसके बिस्तर पर छिपा दें (गाड़ दें)। यह प्रयोग भी बहुत पीड़क होता है। इसकी प्रतिक्रिया में शत्रु और विरोधी (जिसके लिए प्रयोग किया गया हो) अनेक प्रकार की आपदाओं से ग्रस्त होकर अशक्त हो जाता है। कभी-कभी यह प्रयोग उसे सदा के लिए समाप्त कर देता है।

22. आँवला वृक्ष का बांदा :- सभी पेड़ों पर बांदा नहीं उगता। अधिकांश पेड़ों पर तो इसकी उपस्थिति दुर्लभ अथवा कल्पना मात्र ही प्रतीत होती है। परंतु संसार में असंभव तो कुछ नहीं है। फिर जब ग्रंथों में उल्लेख है तो तत्कालीन महर्षियों ने उसे कहीं न कहीं अवश्य देखा होगा। अस्तित्व रहित वस्तु का विवरण वे क्यों लिखते? यह भी हो सकता है कि पहले वे सभी वनस्पतियाँ सुलभ थीं, अब वानस्पतिक विनाश (प्रदूषण) ने इन्हें लुप्त कर दिया। अस्तु प्राचीन ऋषि-मुनियों और यन्त्राचार्य जो भी लिख गए हैं— वह कहीं न कहीं साधारण अवश्य है। भले ही, हम उसकी समुचित व्याख्या न कर पायें, अथवा उसके लाक्षणिक संकेतों को न समझ पाएं, परंतु यह तो निश्चित ही है कि प्राचीन ग्रंथों में (प्रामाणिक प्रतियों में) जो कुछ लिखा गया है, वह केवल कल्पना अथवा मिथ्या पाखण्ड न होकर, ग्रंथकर्त्ताओं के अध्ययन, अनुभव और दृष्टि शक्ति पर आधारित है।

आँवले का बांदा भी एक बहुत ही दुर्लभ वस्तु है। परंतु यदि कहीं दिख जाए तो उसे 'आश्लेषा नक्षत्र' में ले आये और पूजनोपरांत दाहिनी भुजा पर (ताबीज/कपड़े द्वारा) धारण कर लें। यह प्रयोग पूर्णरूपेण सुरक्षाकारी होता है। इसे धारण करने वाले व्यक्ति को राजकोप, चोर, डाकू और हिंसक पशु-पक्षियों आदि का भय नहीं रह जाता। ऐसी सभी स्थितियों में वह पूर्णतया सुरक्षित रहता है।

23. मुलहठी का बांदा :- मुरैठी कोई पौधा नहीं, बल्कि 'जड़' है। प्रारंभ में घुंघुची (रस्ती अथवा गुंजा) का वर्णन किया गया है। मुलैठी (मुलहठी) उसी घुंघुची लता की जड़ है। यह चूसने में मीठी होती है और श्वास, कास, स्वरभंग, कफ विकार आदि में औषधि के रूप में प्रयुक्त होती है। इसी रस से यूनानी दवा (रब्बे सूस) बनती है, जो खाँसी के लिए परम उपयोगी औषधि प्रमाणित होती है। तो उसे मुलहठी अर्थात् घुंघुची पौधे (लता) की छानबीन करें। यदि उस पर बांदा मिल जाए तो उसे 'रविपुष्य' योग में ले आये और पूजन शोधन के बाद सुरक्षित रख लें। यह वाक्-स्तम्भन करता है। जब कभी अपनी सुरक्षा के लिए आवश्यक हो, इसे सभा, गोष्ठी, पंचायत, वार्त्तारत जन-समूह के बीच फेंक दें। इसका प्रभाव तत्काल सभी को हतप्रभ, आवाक् और मूढ़ जैसा बना देगा। इस प्रकार वहाँ कोई निर्णय, योजना, षड्यंत्र आदि संभव नहीं रहेगा।

24. पीपल का बांदा :- पीपल, बरगद, पाकर, गूलर (अंजीर भी किसी सीमा तक) आदि वृक्ष लगभग सजातीय माने गये हैं। ये वृक्ष प्रायः देखे जाते हैं। पीपल और बरगद के पेड़ों की पूजा भी होती है। इनके संबंध में विभिन्न प्रकार के मत, सिद्धांत, विश्वास, प्रयोग और विवेचन प्राप्त होते हैं। पीपल वृक्ष को तांत्रिक प्रयोगों में सर्वाधिक मान्यता दी गयी है। इस पेड़ पर प्राप्त होने वाला बांदा भी चमत्कारी माना जाता है। प्रसिद्ध है कि यदि कोई महिला पीपल वृक्ष का बांदा 'अश्विनी नक्षत्र' के दिन लाकर पूजनोपरांत गाय के दूध के साथ (पीसकर) पीये तो तो गर्भ धारण में समर्थ हो जाती है। कोई सधवा स्त्री यदि निरोग है, पति भी यदि निरोग है और केवल दैवी विधान के कारण संतान सुख से वंचित है, तो यह





॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥



11

तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



प्रयोग (पीपल का बांदा) उसे गर्भ धारण का सौभाग्य प्रदान करता है। मान्यता तो यहाँ तक है कि इस प्रयोग के प्रभाव से बंध्या स्त्री भी गर्भवती हो सकती है। इस प्रकार उसे मातृत्व का सुख-सौभाग्य अवश्य प्राप्त होता है।

बांदा का तिलक :- किसी 'रवि पुष्य योग' के दिन शाखौट वृक्ष का बांदा लायें और गोखरू भी प्राप्त करें। यह तीनों वस्तुएँ भार में समान मात्रा में लें और इनके संयुक्त भार का एक-चौथाई भाग सेंधा नमक लें। इन चारों चीजों को पहले धूप-दीप से शुद्ध करें, फिर पत्थर पर बकरी के ताजे दूध के साथ घिसें। इन्हें पत्थर पर घिसने से चंदन जैसा लेप तैयार होगा। इस लेप को माथे पर चंदन की भांति लगायें। फिर नित्य पूजनोपरांत यह लेप तैयार करके लगाते रहें। तंत्र शास्त्र में इस लेप का प्रभाव अद्भुत बताया गया है। मान्यता है कि इस लेप को माथे पर तिलक की भांति धारण करने वाला साधक, आकाश, वायुमण्डल तथा पृथ्वी की अदृश्य वस्तुएं एवं घटनाएं देख सकता है।



❀ श्वेतार्क ❀

सामान्य परिचय :-

भारतीय वनस्पतियों में धतूरा, मदार, थूहर, नागफनी और करील को विषाक्त माना जाता है। इसके पत्ते ऊँट-बकरी भी नहीं चरते। यह भी एक विचित्रता है कि बिना सेवा-सुश्रुषा के, ऊसर, बंजर भूमि पर भी ये पौधे अपनी जीवन्तता के साथ हरे-भरे खड़े रहते हैं और समय पर अपने फूल-फल आदि का प्रदर्शन भी करते हैं।

मदार को आक अथवा अर्क भी कहते हैं। इसकी शाखायें पतली, लंबी होती हैं। उत्पत्ति स्थान से यह अनेक शाखायें लेकर बढ़ता है। इसमें कोई एक तना न होकर, सभी शाखायें स्वतंत्र रूप में तने की तरह लंबी-पतली होकर बढ़ती जाती हैं। यों पुराना हो जाने पर यह पौधा कभी-कभी 10-12 मीटर ऊँचा हो जाता है और तब मुख्य तने की मोटाई 18-20 इंच तक हो जाती है। परंतु ऐसे पौधे अपवाद स्वरूप ही मिलते हैं, अन्यथा यह पौधा कब्रिस्तानों, खण्डहरों, रेलवे-लाईन के किनारे वाले प्राकृतिक ढूँहों पर अपने आप उगकर हरियाली की सृष्टि करता रहता है। इसके पत्ते हरे रंग के होते हैं, जिस पर सफेद धूल जैसी भूरी पर्त पड़ी रहती है। आकार में ये पत्ते बरगद के पत्तों से मिलते-जुलते होते हैं। परंतु बरगद का पत्ता लाली या कालिमायुक्त हरा होता है, जबकि मदार का पत्ता शुद्ध हरे रंग का होता है।

मदार में फूलों के गुच्छे निकलते हैं। इसके फूल खिलने पर बाहर की ओर सफेद और भीतर की बैंगनी रंग की अद्भुत छटा बिखरते हैं। फूल सूख जाने पर उनके स्थान पर फल तैयार होते हैं। पकने पर यह फल सूखकर चटक जाते हैं, और तब उनके भीतर भरे हुए बीज जो सफेद मुलायम रेशों से अवतरित होते हैं, हवा में उड़कर इधर-उधर बिखरने लगते हैं। मदार के फल से प्राप्त रेशों को 'रुई' कहा जाता है। मदार की यह रुई बहुत कोमल, चिकनी और चमकीली होती है। लोग इसे तकियों में भरते हैं। सामान्य रुई (कपास की रुई) की अपेक्षा मदार की रुई बहुत ही कोमल और स्पर्श-सुख देने वाली होती है। परंतु इसकी तासीर गर्म होती है। अतः लोग जाड़े में भले ही, इसका तकिया इस्तेमाल कर लें, गर्मी में उसे नहीं छूते। (इसी प्रकार सेमल की रुई से भी तकिया-गद्दा बनाया जाता है।)

मदार के पौधे में कहीं भी एक खरोंच लगा दें-तत्काल दूध निकल पड़ेगा। यह पौधा सर्वांग दूध से भरा होता है। पत्ते तो दूध का उद्गम होते ही हैं। कोई भी पत्ता तोड़िये, तुरंत उस जगह से दूध टपकने लगेगा। यह दूध विषाक्त होता है और प्रयोग भेद से कई दवाओं के निर्माण में प्रमुख घटक बनता है। आँखों में पड़ जाने पर यह आँख की पुतली को भारी क्षति पहुँचाता है। इतः इसे तोड़ते समय लोग इसके दूध के छींटों से बहुत सावधान रहते हैं।

भगवान शिव की पूजा में मदार पुष्प चढ़ाये जाते हैं। यह शिवजी की अनुपम महानता है कि वे देवाधिदेव होकर भी स्वयं के प्रति सर्वथा उदासीन हैं। भक्तों को विश्व का वैभव देने वाले शिवजी का अपना रहन-सहन, निवास और आहार-विहार कितना त्यागमय है यह उनके वस्त्राभूषणों और खाद्य-पदार्थों से स्पष्ट हो जाता है। कोई देवता तस्मै (खीर) प्रेमी है, कोई छप्पन भोग का आहारी है, कोई नाना-प्रकार के फलों- मिष्ठानों से तृप्त होता है, परंतु शिवजी ने उसे आहार बनाया है, जिसे पशु भी नहीं खाते-धतूरा, मदार, भाँग और अहिफेन। ऐसे निस्पृह, त्यागी, उदार और भक्तवत्सल देवता को इसलिए विश्व में सर्वाधिक मान्यता प्राप्त है। आज भी रूस, यूरोप और सुदूर अमेरिका के देशों के उत्खनन के





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



दौरान कहीं-कहीं मूर्ति सहित शिव मंदिर प्राप्त होते हैं। अस्तु मदार का पुष्प शिवजी को अर्पित किया जाता है और उनके पुत्र गणेशजी की पूजा में भी यह बड़ी श्रद्धा के साथ प्रयोग किया जाता है।

बैंगनी रंग के फूल वाला मदार बहुतायत से मिलता है। इसे काला मदार, कृष्ण मदार, कृष्णार्क, श्यामार्क आदि नामों से भी जाना जाता है। अन्य पौधे बरसात में विशेष रूप से पल्लवित होते हैं, परंतु जवासा नामक घास और मदार इसके अपवाद होते हैं। ये दोनों प्रचण्ड गर्मी और भयंकर शीत में हरे-भरे होते हैं, परंतु वर्षा ऋतु में ये मुरझा कर क्षीणप्रायः हो जाते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में वर्षा ऋतु वर्णन के अंतर्गत लिखा है :-

अर्क आवस पात बिनु भयऊ। जिमि सुराज खल उद्यम गयऊ।

अस्तु हमारा यहाँ विवेच्य, विषय श्यामार्क नहीं, श्वेतार्क है। यह भी वही मदार है, परंतु इसके फूल बैंगनी रंग के न होकर, बिल्कुल सफेद होते हैं। इसके पत्ते अपेक्षाकृत लंबे और गहरे हरे रंग के न होकर कुछ हल्के रंग के, थोड़ी सफेदी की झलक दिखाते हुए होते हैं। यह पौधा अपेक्षाकृत अधिक ऊँचा होता है और फूल भी इसमें पर्याप्त मात्रा में गुच्छों में लगते हैं। परंतु फलों की संख्या इसमें कम होती है। इसकी शाखायें लंबी, पतली और सीधी होती हैं। अपने पूर्णतया श्वेत पुष्पों के कारण ही यह श्वेतार्क अथवा सफेद मदार कहा जाता है।

तांत्रिक दृष्टि से श्वेतार्क का महत्व अधिक है। इसमें गणेशजी का आवास तथा उनका प्रिय प्रतिरूप माना जाता है। इसके विभिन्न गुणों और चमत्कारी प्रभाव ने सुदूर अतीत में ही, प्राचीन ऋषि-मुनियों को चमत्कृत कर दिया था। यही कारण है कि विभिन्न तंत्र ग्रंथों में इसका विस्तृत उल्लेख प्राप्त होता है। परंतु इतना प्रभावशाली और चमत्कृत होने पर भी यह पौधा बहुत कम दिख पड़ता है। कृष्ण मदार के पौधे जहाँ शत-प्रतिशत होते हैं, वहीं इसके पौधे 1-2 प्रतिशत से भी कम पाये जाते हैं।

मध्यप्रदेश में यात्रा में मैंने इसे कई जगह देखा। भोपाल और इंदौर में कहीं पौधे दिख पड़े। ऋषिकेश में भी कई जगह देखने में आया। एक बार ऋषिकेश गया था। साथ में मरे अनन्य स्नेही 'कन्हैया लाल गोयल' भी थे। तांत्रिक वस्तुओं की चर्चा में मैंने उनसे 'श्वेतार्क' का जिक्र किया और उसकी दुर्लभता तथा गुण बताये। देवयोग से उसी समय एक कोठी के कम्पाउण्ड की ओर मेरी दृष्टि गयी। वहाँ एक बहुत बड़ा मोटा, पुराना और लगभग 25 फीट ऊँचा श्वेतार्क का वृक्ष दिख पड़ा। घने पत्तों और फूलों के गुच्छों से लदा वह अद्भुत छटा बिखेर रहा था। लगता था, साक्षात पारिजात वृक्ष है। मैंने और भी कई बड़े वृक्ष देखे हैं, परंतु इतना ऊँचा और सघन, पुष्प संपन्न वह अपनी तरह का पहला वृक्ष था। गोयल जी, उसकी सघनता पर प्रसन्न और चकित थे।

गणेश जी की पूजा में 'श्वेतार्क' का विशेष महत्व है। वैसे, शिवजी पर भी इसके पुष्प अर्पित किए जाते हैं। परंतु जिस आधार पर इसे तांत्रिक जगत में महत्व प्राप्त है— वह है, इसकी अद्भुत जड़। इसे 'श्वेतार्क मूल' (सफेद मदार की जड़) कहते हैं।

मान्यता है कि श्वेतार्क मूल में गणेश जी का वास होता है और यदि वह तांत्रिक विधि से प्राप्त करके घर में स्थापित की जाय तथा उसका दैनिक पूजन हो तो वह गणेश जी की भांति उस घर-परिवार को श्री समृद्धि से संपन्न करके साधक की समस्त भौतिक बाधाओं का शमन कर देती है। परंतु प्रतिबंध यह है कि 'श्वेतार्क मूल' पूर्णतया शास्त्रीय, तांत्रिक विधि से प्राप्त की जाय और तदनुसार ही उसका पूजन हो। पाठकों की सुविधा के लिए उसका विवरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

तांत्रिक प्रयोग के आधार :-

आध्यात्म के क्षेत्र में कोई भी साधना, तंत्र, मंत्र, यंत्र, पूजन, हवन, व्रत, उपवास, यज्ञ हो, उसके लिए समय, स्थान, प्रयोज्य वस्तुएं और विधि-विधान आवश्यक है। उनके अभावमें साधना अधूरी रहती है। या तो वह खण्डित हो जाती है या पूरा फल नहीं देती है। अतः किसी भी प्रयोग साधना में इन महत्वपूर्ण बिंदुओं को अवश्य ही दृष्टिगत रखना चाहिए।

समय-मुहूर्त :- श्वेतार्क साधना में भी मुहूर्त अर्थात् समय (काल-बेला) का सर्वाधिक महत्व होता है। इसलिए सर्वप्रथम किसी स्थानीय पुरोहित-पण्डित से कोई शुभ मुहूर्त मालूम कर लेना चाहिए।





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



जिस दिन रविवार हो और पुष्य नक्षत्र चल रहा हो, वह दिन सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इसे रविपुष्य योग कहते हैं। रविपुष्य योग किसी भी साधना को प्रारंभ करने के लिए सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त होता है। इसी प्रकार गुरुपुष्य योग (गुरुवार के दिन पुष्य नक्षत्र की स्थिति) भी अति उत्तम माना गया है। ज्योतिष मर्मज्ञों की धारणा है कि जड़ी-बूटी आदि तांत्रिक वस्तुओं का संकलन, उनकी पूजा, प्रयोग आदि रविपुष्य के दिन विशेष फलदायी होते हैं। जप, तप, भजन, पूजन, व्यापारिक कार्य तथा अन्य शुभ कार्य 'गुरुपुष्य' के दिन प्रारंभ करने से निश्चित सफलता प्राप्त होती है। वैसे, जिस दिन भी पुष्य नक्षत्र हो, वह सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त बन जाता है। हाँ, एक अपवाद भी है—शुक्रवार का पुष्य योग यात्रा तथा अन्य शुभ कार्यों के लिए वर्जित है। किंतु इसका विकल्प यह है कि यदि शुक्रवार को पुष्य नक्षत्र न होकर, चतुर्थी तिथि पड़ रही हो, तो वह 'श्वेतार्क साधना' के लिए अनुकूल मुहूर्त हो जाता है।

यदि किसी को जल्दी है और 'रविपुष्य' या 'गुरुपुष्य' योग निकट भविष्य में नहीं मिल रहा हो, तो वह शुक्लपक्ष की चौथ (कृष्णपक्ष की चौथ भी ग्राह्य है) के दिन श्वेतार्क साधना प्रारंभ कर सकता है। पुष्य योग अथवा चतुर्थी तिथि न मिले और अन्य कोई शुभ मुहूर्त (पुरोहित से जान लें या स्वयं पंचांग में देख लें) जैसे— शतभिषा, स्वाति, चित्रा, हस्त, अनुराधा, अभिजित और अश्विनी में से कोई भी शुभ नक्षत्र चल रहा हो और उस दिन साध्य, सिद्ध, ब्रह्म, ऐन्द्र, शुभ, शुक्ल और शिव जैसा कोई भी शुभ योग भी पड़ रहा हो, तो एक श्रेष्ठ मुहूर्त माना जाता है। ऐसे किसी भी शुभ मुहूर्त का पता पहले से लगा रखें और नियमानुसार श्वेतार्क साधना प्रारंभ करें।

श्वेतार्क प्राप्ति विधि :- यदि आपने पता लगा रखा है कि अमुक स्थान पर 'श्वेतार्क' का पौधा है, तो वहाँ से विधिवत् उसकी जड़ (श्वेतार्क मूल) ले आएँ। यदि किसी व्यक्ति ने आपको दे दी है अथवा अन्य कहीं से मिल गयी है, तो उसे कहीं एकांत पवित्र स्थान में रख दें। उसका उपयोग रविपुष्य के दिन ही प्रारंभ करना चाहिए। यदि पौधे से ही लाना है, तो उसकी विधि इस प्रकार है —

जिस दिन से पूजा-साधना प्रारंभ करनी है, (वह चाहे रविपुष्य हो, गुरुपुष्य हो, या अन्य कोई मुहूर्त हो) उसके ठीक एक दिन पूर्व संध्या समय अकेले, चुपचाप बिना किसी से बोले नहा-धोकर, शुद्धतापूर्वक, शांत-चित्त से उस पौधे के पास जाएँ। साथ में एक लाल धागा, जल, धूपबत्ती, माचिस, सिंदूर भी लेते जाएँ।

श्वेतार्क पौधे के पास पहुँचकर उत्तर, पूर्व या पश्चिम की ओर मुख करके खड़े हों और वृक्ष को साक्षात् गणेशजी मानकर हाथ जोड़ें। तदुपरांत पौधे की जड़ में लोटे का जल (अर्ध रूप में गणेश जी को स्नान कराने की भावना से) डालें। फिर धूप, दीप दें और पौधे की किसी डाल में धागा (कलावा) बांधकर प्रार्थना करें — हे गणेश जी! हे श्वेतार्क देव! मैं अपने कार्य की सिद्धि के लिए कल आपको अपने साथ ले चलने के लिए आऊँगा, अतः आप कृपापूर्वक मेरे साथ चलकर मेरे अभीष्ट की पूर्ति करें।

'शब्द' बदले भी जा सकते हैं, परंतु भाव यही रहना चाहिए कि आप वृक्ष देवता को निमंत्रण दे रहे हैं। इसके बाद उसे पुनः प्रणाम करके घर लौट आयें। रात में एकांत शयन करना चाहिए।

प्रातः मुँह-अंधेरे ही उठकर नित्यकर्म से निपट लें और स्नान करके पौधे के पास जाएँ। साथ में कोई कपड़ा या लकड़ी (या फिर लोहे का ही) खुरपी जैसा साधन लिए रहें। वहाँ पहुँचकर पौधे को प्रणाम करें और गणेश जी का ध्यान करते हुए, पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके, पौधे की जड़ सावधानी से खोदें। जड़ टूटने न पाए। समूची निकले तो अति उत्तम है। अन्यथा जैसी भी मिले— माथे से लगाकर कपड़े में बांध लें और चुपचाप घर ले आयें। इस पूरी प्रक्रिया में गणेश जी का ध्यान करते हुए मंत्र, स्तुति कुछ जपते रहना चाहिए। कुछ नहीं मालूम हो तो — 'ॐ श्री गणेशाय नमः' ही जपते रहें।

श्वेतार्क तंत्र में प्रयोज्य : गणेश जी के जप मंत्र —

- | | | |
|---------------------|------------------------|-----------------------|
| 1. गं | 5. ॐ ग्लौं | 8. ॐ भालचन्द्राय नमः। |
| 2. ॐ गं | 6. ॐ ग्लौं गणपतये नमः। | 9. ॐ एकदन्ताय नमः। |
| 3. ॐ गं गणपतये नमः। | 7. श्री गणेशाय नमः। | 10. ॐ लम्बोदराय नमः। |
| 4. ग्लौं | | |





तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंज



यह एक विचित्र सत्य, किंतु दुर्लभ संयोग है कि कभी-कभी श्वेतार्क मूल ठीक गणेशजी की प्रतिमा के रूप में प्राप्त होती है। जड़ का मुख्य भाग 'तना' गणेशजी की स्थूल काया जैसी होती है और उससे निकली शाखा, जड़ें, भुजाओं और शुण्ड (सूँढ़) की रचना करती है। कोई-कोई जड़ बैठी हुई गणेश प्रतिमा जैसी लगती है। मैंने देखा है, एक जड़ गणेश प्रतिमा को, जो रेखा चित्र जैसी थी। कम-से-कम गणेशजी की सूँड़ की आकृति तो जड़ में अवश्य मिलेगी। ऐसा निश्चित है। प्राप्त जड़ को देखें तो लगता है, किसी हाथी की सूँड़ है।

प्रसंगतः यहाँ कहना चाहूंगा कि एक बार मेरा पुत्र उमेश एक श्वेतार्क मूल ले आया था। वह ठीक गणेश जी के मस्तक और उससे निकली सूँड़ की आकृति जैसी प्रतीत होती थी। उसी रात बच्चे को गणेशजी ने स्वप्न में आकर साकार स्पष्ट दर्शन दिए थे। कई वर्षों तक वह मूल प्रतिमा मेरे घर में रही। और भी कई बार मैंने 'श्वेतार्क मूल' में गणेश प्रतिमा की स्पष्ट झलक पायी है। इस समय भी मेरे पास एक वृहदाकार श्वेतार्क मूल है, जिसमें गणेश जी के मुखमण्डल की छवि स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

पूजन विधि :- श्वेतार्क मूल प्राप्त हो जाने पर उसे साफ करके शुद्ध जल से स्नान करायें। फिर लाल कपड़े पर स्थापित करके (कुछ विद्वान पीला कपड़ा भी स्वीकार करते हैं।) उसकी पूजा करें। पूजा में लाल चंदन, हल्दी, अक्षत, पुष्प एवं सिंदूर का प्रयोग किया जाता है। धूप, दीप देकर नैवेद्य के साथ कोई सिक्का भी अर्पित करें। इसके पश्चात् गणेश जी का कोई मंत्र जपें। मंत्र जप आरंभ करने के पूर्व संकल्प कर लेना चाहिए कि मैं इतनी संख्या में जप करूंगा। माला में 108 दाने होने चाहिए। अतः 10 माला जप का अर्थ हुआ-1000 मंत्र जप। इसी प्रकार पूर्ण गणना करके निश्चित संख्या में माला द्वारा मंत्र जप करें।

जप पूरा हो जाने पर उसी मंत्र को पढ़ते हुए यथा सामर्थ्य हवन करें। हवन सामग्री में घी, शक्कर, तेल, जौ, अक्षत अवश्य मिला लेना चाहिए। प्रत्येक आहुति में वही जप वाला मंत्र पढ़ा जाता है, साथ में 'स्वाहा' शब्द का प्रयोग होता है। जैसे मूल मंत्र है - ॐ श्री गणेशाय नमः स्वाहा। इस प्रकार हवन पूरा हो चुकने पर कम-से-कम एक ब्राह्मण को (वह बालक या बालिका भी हो सकती है), भोजन कराकर दक्षिणा दें। इस प्रकार प्रथम दिन, 'श्वेतार्क-मूल' की पूजा करके उसे कहीं एकांत पवित्र स्थान में, देव प्रतिमाओं के पास अथवा आलमारी में लाल कपड़े के आसन सहित रख दें और नित्य उसका सिंदूर, धूप, दीप से पूजन दर्शन करते रहें।

'श्वेतार्क मूल' को साक्षात् गणेश जी मानकर जो व्यक्ति यह तांत्रिक साधना करता है, वह ज्ञान, संपत्ति, सुरक्षा और निर्विघ्न शांति प्राप्त कर सकता है।

श्वेतार्क गणपति :- श्वेतार्क के पुराने (20-25 वर्ष पुराने) पौधे की जड़ में प्राकृतिक रूप से गणेश प्रतिमा का निर्माण होता है। वैसे इस पौधे की किसी भी जड़ को देखें- वह गणेशजी की सूँड़ से बहुत साम्य रहती है।

यदि जड़ खोदने में गणेशाकृति मूल प्राप्त हो जाये-तब तो कहना ही क्या है। अन्यथा चाहे जिस रूप में जड़ प्राप्त हो, उसे घर ले आयें। पहले साफ पानी से, फिर दूध से स्नान कराकर, पुनः जल से धो लें और कपड़े से पोछकर सुखा लें। बाद में यदि स्वयं बना सकें, तो अपने हाथों से अथवा किसी मूर्तिकार से, उस जड़ के एक टुकड़े को जो लगभग दो इंच लंबा और सुडौल हो, काटकर उस पर गणेश जी की प्रतिमा बनवा लें। कोई भी कलाप्रेमी व्यक्ति आसानी से चाकू द्वारा छीलकर उस 'मूल खण्ड' पर गणेश प्रतिमा उत्कीर्ण कर सकता है।

यदि खोदते समय 'गणेश प्रतिमा' नहीं मिली हो (यह प्रायः जड़ के अंत में होती है, अतः सावधानी से जड़ को पूरी गहराई तक खोदें) और बड़ई द्वारा जड़ के टुकड़े पर प्रतिमा नहीं बन सकती हो तो लाल चंदन से अथवा सिंदूर से, उस जड़ के टुकड़े पर गणेश जी का रेखा चित्र बना लें। यह भी गणेश प्रतिमा के समान प्रभावशाली रहेगा। यदि चित्र बना सकना भी संभव नहीं है, तो जड़ के उस टुकड़े को लाल कपड़े के आसन पर प्रतिष्ठित करके उस पर स्वस्तिक (卐) का चिन्ह बना लें। यह चिन्ह पीले सिंदूर और घी के मिश्रण से लेप बनाकर उससे अंकित करना चाहिए। स्वास्तिक चिन्ह वस्तुतः गणेश जी का ही प्रतीक है। इसमें गणेश जी का सर्वांग समाहित है। अतः गणेश प्रतिमा, गणेश चित्र अथवा स्वास्तिक चिन्ह,





तांजौवत वनस्पतिर्यौ : वनस्पति तंज



जो भी जड़ के टुकड़े पर अंकित किया जाएगा, वह गणेश जी की प्रतिमा के तुल्य ही प्रभावशाली होगा। श्वेतार्क मूल से किसी भी रूप में गणेश प्रतिमा बनायी जाए, उसे 'श्वेतार्क गणपति' कहते हैं।

विविध प्रयोग :- विशेष रूप से 'श्वेतार्क मूल' जिन उद्देश्यों की पूर्ति में प्रयुक्त होती है, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं :- स्वास्थ्य, सुरक्षा, वशीकरण तिलक, लेखनी, कामना पूर्ति, स्तम्भन (मैथुनिक), सौभाग्य वृद्धि, व्याधि शमन, स्वर्ण निर्माण आदि। यहाँ संक्षेप में उक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु 'श्वेतार्क मूल' की प्रयोग विधियाँ लिखी जा रही हैं :-

स्वास्थ्य :- स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन का निवास होता है। अर्थात् जिसका शरीर स्वस्थ है, उसी का मन भी स्वस्थ, सबल, आत्म विश्वासी, धैर्यवान और विवेकी होगा। स्वास्थ्य प्रगति के कई प्रयोग हैं - व्यायाम, आहार-विहार, चिंतन और वातावरण। 'श्वेतार्क मूल' भी स्वास्थ्य लाभ में सहायक होती है। उसकी विधि इस प्रकार है- जिस दिन 'रविपुष्प योग' हो, प्रातःकाल श्वेतार्क की जड़ ले आये। उसे धोकर साफ कर लें, फिर दूध से स्नान कराये और गणपति मंत्र द्वारा पूजा करके रख दें। इस पर सिंदूर न चढ़ाकर, कहीं पर जरा-सा कोने में स्पर्श करा दें। यह जड़ कहीं रख दें। सूख जाने पर इसे खरल में कूट-पीसकर चूर्ण बना लें। प्रतिदिन प्रातः स्नान करके, सूर्य की पूजा, अर्घ्य-दर्शन करें और तीन माशा चूर्ण 250 ग्राम गाय के ताजे दूध के साथ सेवन करें। यह परम पौष्टिक रसायन है। इसका प्रयोग किसी भी शुभ रविवार के दिन से करें। एक सप्ताह में ही इसका प्रभाव आ जाता है। इसे केवल सात दि नही सेवन करना चाहिए। 'श्वेतार्क मूल' का यह चूर्ण गोदुग्ध के साथ सेवन करने से शरीर में ओज-तेज की पर्याप्त वृद्धि हो जाती है।

सुरक्षा :- आधि-व्याधि तथा भौतिक-दैविक बाधाओं से रक्षा के लिए 'रविपुष्प योग' में विधिवत् प्राप्त की गयी 'श्वेतार्क के जड़' की विधिवत् पूजा करें। फिर उसे (एक छोटा टुकड़ा) किसी भी रूप में (ताबीज, कवच, यंत्र आदि में) धारण कर लें। यह प्रयोग समस्त वायव्य बाधाओं-भूत, प्रेत, डाकिनी, नजर, टोना एवं तंत्र प्रयोग आदि से पूरी सुरक्षा रखता है।

वशीकरण तिलक :- शुभ मुहूर्त में विधिवत् प्राप्त करके पूजित श्वेतार्क मूल से वशीकरण का भी तांत्रिक प्रयोग किया जाता है। उसकी सरलतम विधि ये है कि गाय का घी, गोरोचन और श्वेतार्क मूल की पहले से व्यवस्था कर के रखें। जिस दिन 'रविपुष्प योग' हो, स्नान पूजा से निपटकर श्वेतार्क मूल को घी और गोरोचन के साथ पत्थर पर चंदन की भांति घिसें। फिर अपने इष्टदेव और गणेशजी का ध्यान करते हुए माथे पर यह लेप तिलक की भांति लगा लें। यह तिलक सम्मोहनकारी होता है।

एक प्रयोग और है :- बकरी के मूत्र में श्वेतार्क मूल को घिसकर (रविपुष्प योग में ही) माथे पर तिलक की भांति लगा लें। यह तिलक भी सम्मोहन का प्रभाव उत्पन्न करता है।

तीसरा प्रयोग इस प्रकार है :- श्वेतार्क मूल को पानी के साथ घिसें या सूखी हो तो पीसकर चूर्ण बना लें। उसमें अपना 'वीर्य' मिलाकर भली-भांति लेप बना लें। यह भी हो सकता है कि अपने वीर्य साथ ही उसे घिसकर लेप बना लें। उस लेप को माथे पर चंदन की भांति लगा लें। यह तिलक स्त्री जाति को साधक के प्रति सम्मोहित करता है। किंतु इसका दुरुपयोग नहीं करना चाहिए। साथ ही इसके प्रयोग में अपना सामाजिक, आर्थिक स्तर और अन्य बातों को देखते हुए समान-स्तरीय नारी के प्रति ही कामना करनी चाहिए। सामर्थ्य, पात्रता, सीमा, आयु, रूप-रेखा, स्वभाव, व्यवहार और सामाजिक स्तर सभी जगह हर काम में आड़े आते हैं। अतः किसी भी प्रकार का प्रयोग करें, उसके औचित्य और सम्भावनाओं पर चतुर्दिक से विचार कर लेना ही उचित होता है।

सौभाग्य वृद्धि :- नाभि पर कमल पत्र और दायें भुजा पर श्वेतार्क मूल रविपुष्प योग के दिन धारण करने से सौभाग्य की वृद्धि होती है।

कामना पूर्ति :- विधिवत् प्राप्त करके पूजा किए गए 'श्वेतार्क मूल' से साधक की बहुविधि इच्छाएं पूर्ण हो जाती हैं। यहाँ कुछ विशेष कामनाओं की पूर्ति हेतु सरलतम प्रयोग लिखे जा रहे हैं :-

1. साधक के निवास स्थान (घर) से उत्तर दिशा में स्थित पौधे से प्राप्त 'श्वेतार्क जड़' में वशीकरण और श्री-समृद्धि का प्रभाव निहित होता है। अतः वशीकरण अथवा श्री-समृद्धि (धन-वैभव) आदि की वृद्धि के लिए उत्तर दिशा में स्थित पौधे की





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



जड़ लानी चाहिए। स्मरण रहे कि जड़ लाने और उसकी तात्कालिक पूजा करने के लिए उस दिन रविपुष्य योग होना आवश्यक रहता है।

2. यदि किसी साधक को राजकृपा, राजकीय अधिकारी की अनुकूलता, सम्मान, उन्नति कार्य में सफलता, दूसरों से स्नेह मान की प्राप्ति वांछित हो तो वह ऐसे वृक्ष से श्वेतार्क मूल प्राप्त करे, जो उसके निवास स्थान से पूर्व दिशा की ओर स्थित हो, अर्थात् पूर्व दिशा में स्थित श्वेतार्क मूल साधक को सम्मानित करता है तथा श्री-समृद्धि और कार्य क्षेत्र में उन्नति तथा सफलता दिलाता है।

3. रोग नाश, शत्रु पराभव, मानसिक कष्ट तथा शोक संताप निवारण और अन्य बाधाओं के शमन हेतु ऐसे पौधे से श्वेतार्क मूल लेना चाहिए, जो दक्षिण दिशा की ओर हो।

4. विरोधियों को परास्त करने और शत्रुओं को नीचा दिखाने जैसे प्रयोग में वह 'श्वेतार्क मूल' प्रयुक्त होती है, जो पश्चिम दिशा में उगे हुए पौधे से प्राप्त हो।

सारांश यह है कि जिस कार्य के लिए साधना करनी हो, तदनुकूल दिशा के पौधे से प्राप्त जड़ का प्रयोग विशेष लाभदायक होता है। वैसे 'श्वेतार्क मूल' सदैव-सर्वत्र लाभकारी और सिद्धिदायक होती है। किसी दिशा में प्राप्त हुई हो, उसका प्रयोग निर्द्वन्द्व मन से करनी चाहिए। पूजन के समय यह भावना अवश्य होनी चाहिए कि "यह श्वेतार्क मूल साक्षात् गणेश जी हैं।"

ग्रह रक्षा :- श्वेतार्क का पौधा रविपुष्य योग में यदि घर के दरवाजे पर (लॉन, सहन, फुलवारी, चबूतरे के कोने में किसी भी जगह पर, जहाँ से वह घर के प्रवेश द्वार की सीध में हो, अर्थात् घर के प्रवेश द्वार से पौधे को देखा जा सके) लगा दें। पौधे के लिए उपयुक्त मिट्टी, प्रकाश, वायु और जल की समुचित व्यवस्था कर दें। यह प्रयोग ग्रह रक्षा में बहुत सहायक सिद्ध होता है। जब तक वह पौधा रहेगा, घर में किसी भी आधि-व्याधि, नजर-टोना, तंत्र-मंत्र के दुष्प्रभाव और अवांछित वायव्य आत्माओं, दुर्भाग्य और दुष्ट ग्रहों की वृद्धि का प्रभाव नहीं पड़ेगा। श्वेतार्क पौधे के प्रभाव से ग्रह का प्रवेश द्वार अभेद्य हो जाता है।

शरीर रक्षा :- श्वेतार्क मूल का टुकड़ा बाहु या कंठ में धारण करने से शरीर की सुरक्षा रहती है। आकस्मिक आपदाएं और भूत-प्रेत, नजर, टोना-टोटका आदि का प्रभाव उस व्यक्ति को कोई हानि नहीं पहुँचा सकती है।

संभोग सुख :- संभोग सुख का एकमात्र आधार है-स्तम्भन। संभोग रत स्त्री-पुरुष तभी कामानन्द का अनुभव करते हैं, जब पुरुष देर तक मैथुन रत रहे, अर्थात् उसका स्खलन न हो। स्खलन रोकने (वीर्य स्तम्भन) के प्रयोग श्वेतार्क तंत्र में भी है -

1. रविपुष्य में प्राप्त और पूजित श्वेतार्क मूल का टुकड़ा किसी धागे या चीर के सहारे कमर में बांधकर संभोग रत हों। यह प्रयोग काम-शक्ति को बढ़ाते हुए 'वीर्य स्तम्भन' करता है।

2. श्वेतार्क मूल और कमल पत्र कमर में धारण करने से भी वीर्य स्तम्भन होता है।

3. श्वेतार्क का दूध और शहद मिलाकर लेप बनायें। इस लेप में श्वेतार्क फल से प्राप्त रुई की बत्ती बनाकर तर कर लें। संभोग के समय यह दीपक जला दें। जब तक दीपक जलता रहेगा, पुरुष को शिथिलता अनुभव नहीं होगा।

स्वर्ण निर्माण :- स्वर्ण अर्थात् सोने का नाम सुनते ही मानव मन एकबारगी चंचल हो उठता है। संसार की सबसे सुंदर, स्थायी, आभावान, बहु-उपयोगी, सर्वप्रिय और दुर्लभ धातु होने के कारण सोने को सदैव (सभ्यता के प्रत्येक युग में) संग्रहणीय माना गया है। स्वर्ण प्राप्ति के लिए विश्व में जितने युद्ध, आक्रमण, चोरी-डकैती, लूट और हत्या के कांड हुए हैं, उतने और किसी धातु के नहीं।

स्वर्ण अर्थात् सोना-धन-संपत्ति का चिरस्थायी रूप है। इसे धन-वैभव और श्री-संपन्नता का प्रतीक माना गया है। इसके प्रभाव, उपयोग, क्षमता और अन्य गुणों के आधार पर नीतिकारों ने कहा है-जिसके पास सोना है, संसार के सारे गुण वहीं निवास करते हैं। अर्थात् जो व्यक्ति स्वर्ण संपन्न है, वही सर्वश्रेष्ठ है। यथा-





॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥



तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनाः, सः पण्डितः स श्रुतिवान् गुणज्ञः।

स एव वक्ता स च दर्शनीयः, सर्वे गुणा काञ्चनमाश्रयन्ति ॥

किंतु लोगों को इसमें एक कमी खटकती है— यह शोभा के साथ सोने में सुगंध भी होती, तब तो कहना ही क्या था? यही कारण है कि लोग कभी—कभी किसी वस्तु या व्यक्ति में एक गुण के साथ कई अन्य विशिष्टता देखकर कह उठते हैं— “अरे, यह तो सोने में सुगंध है।” किंतु वस्तुतः सोने में सुगंध नहीं होती। नीतिकारों ने इसका कारण सृष्टिकर्ता विधाता की अज्ञानता माना है। चूंकि विधाता को कोई गुरु (मार्गदर्शक) प्राप्त नहीं कर रहा, इसलिए वे सृष्टि रचना में कई विसंगतियाँ कर बैठे—कई वस्तुओं की संरचना में पूरी गुणवत्ता भरना भूल गए। यथा —

गन्धं सुवर्णं फलभिक्षु दण्डे, नाकारि पुष्पं खलु चन्दनस्य।

विद्वान धनी भूपति दीर्घजीवी, धातः पुरा कोपि न बुद्धिदोषः॥

यद्यपि स्वर्ण एक धातु है, जिसका निर्माण प्राकृतिक रूप में भूगर्भ के भीतर होता है। विभिन्न वैज्ञानिक पद्धतियों द्वारा भूगर्भ की खुदाई करके स्वर्ण कण अथवा शिलाएं प्राप्त की जाती हैं। फिर उन्हें बहुविधि परिष्कृत करके शुद्ध स्वर्ण प्राप्त किया जाता है। परंतु रसायन शास्त्रियों ने वर्षों, दशाब्दियों तक शोध— अनुसंधान रत रहकर प्राकृतिक ररु में उत्पन्न होने वाले पदार्थों के विकल्प भी तैयार कर लिए थे। प्राचीन महर्षियों ने स्वर्ण निर्माण के भी अनेक सफल प्रयोग किए थे। एक प्रयोग श्वेतार्क से भी संबंधित है। यद्यपि यह जटिल है, सहज—साध्य नहीं है, फिर भी यदि कोई धैर्यवान और सौभाग्यशाली साधक यह साधना पूरी कर ले, तो वह स्वर्ण प्राप्त कर सकता है, इसमें संशय नहीं है।

श्वेतार्क तंत्र में स्वर्ण निर्माण की प्रक्रिया इस प्रकार बतायी गयी है —

श्वेतार्क का कोई पुराना वृक्ष, जिसका तना मोटा हो खोजें। रविपुष्प योग में स्नान, पूजा के बाद उसके पास जाएं। साथ में जल, दूध, सिंदूर, पुष्प, धूप, दीप और लाल वस्त्र भी लेते जाएं। सर्वप्रथम पौधे को (तने को) स्नान करायें, पहले जल से, फिर दूध से, पुनः जल से। उसके बाद चंदन (लाल), सिंदूर, पुष्प, अक्षत, धूप—दीप से पूजा करें।

इस समस्त प्रक्रिया में ‘गणेश मंत्र’ जपते रहें, पूजनोपरांत किसी चाकू या वर्मा से सावधानी पूर्वक तने में एक गहरा छेद (गड्ढा) बनायें गड्ढा से निकला तने का बुरादा फेंके नहीं, कटोरी में सुरक्षित रखें। पर्याप्त गहरा और सुडौल गड्ढा बनायें। यदि एक अण्डे को सिर पर थोड़ा—सा तोड़कर, उसकी जर्दी बाहर कर दी जाए तो खाली अंडे की जो स्थिति होगी, ठीक उसी प्रकार का गड्ढा—उस श्वेतार्क के तने में बनाना चाहिए। गड्ढा बन जाने पर उसमें पारा (जो आप साथ ले गए हैं) भर दें। इसके बाद बुरादे में मोम मिलाकर, उसी से वह गड्ढा बंद कर दें। ऊपर से लाल कपड़ा बांधकर सिंदूर लगा दें।

फिर पौधे की जड़ में दूध डालें। वहाँ एक थाला—सा बना दें और नित्य उस पर दूध चढ़ाते रहें। थाले में भरा दूध पौधे की जड़ को सींचेगा। यह क्रिया प्रतिदिन करें। वर्षों बाद पौधे के पत्ते सोने जैसे पीले और चमकदार होने लगेंगे। यह स्वर्ण निर्माण की सूचना होगी। जब पत्ते बिल्कुल पीले और सोने जैसे (पीतल जैसे भी) चमकने लगें, तब समझ लेना चाहिए कि साधना सफल हो गयी है। फिर किसी ‘रविपुष्प’ या ‘गुरुपुष्प’ योग में वह गड्ढा खोलकर, सावधानी से, पूर्व सुरक्षित पारा निकाल लेना चाहिए। इस बार वह पारे के रूप में नहीं, ठोस स्वर्ण पिण्ड के रूप में प्राप्त होगा।

यह साधना गुप्त रहस्यमयी और जटिल है। और सहज—साध्य नहीं है। इसमें 5, 7, 10, 12 वर्ष तक लग सकते हैं। क्या पता, इस अवधि में वह साधक स्वयं ही समाप्त हो जाए। ऐसी स्थिति में अपने किसी परम विश्वासी, आस्तिक, सद्विचारों वाले व्यक्ति को यह रहस्य बताकर उसे भविष्य में फल प्राप्ति होने तक, साधना करते रहने का निर्देश देना चाहिए। उसे ‘सोना’ न बताकर केवल यह कहा जाए कि “जब इस पौधे के पत्ते पीतल जैसे चमकने लगें, तब एकांत में, उसके तने के धब्बे वाले स्थान को चीरकर देखना। जो कुछ मिले, उसे प्रसाद रूप में शिरोधार्य कर लेना।”

सोना बनाने के और भी कई वानस्पतिक प्रयोग प्राचीन ग्रंथों में वर्णित हैं। किंतु हमारा प्रतिपाद्य विषय स्वर्ण—सृष्टि नहीं, अपितु श्वेतार्क साधना है। अतः उसके संदर्भ में यह एक प्रयोग (स्वर्ण निर्माण) लिख दिया गया है।





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



सारांश यह है कि 'श्वेतार्क मूल' एक बहुत ही पवित्र, प्रभावी और चमत्कारी पौधा है। इसकी जड़ के भी सैंकड़ों प्रयोग प्राप्त होते हैं। यह श्री-सौख्य, सुरक्षा, समृद्धि, सौभाग्य और आस्तिकता की भावना देता है। जो साधक विधिवत् इसकी पूजा करते हैं, वे अवश्य ही सफल मनोरथ होते हैं।

श्वेतार्क मूल के चमत्कारों से मैं स्वयं भी प्रभावित हूँ। कई बार के अनुभवों से, मैं असंदिग्ध भाव से इसकी प्रभावशीलता का साक्ष्य देता हूँ।



❀ रुद्राक्ष ❀

सामान्य परिचय :- रुद्राक्ष वनस्पति जगत में सर्वाधिक पवित्र, प्रभावी, उपयोगी, प्राचीन और सर्वग्राह्य पदार्थ है। यह एक फल की गुठली अर्थात् बीज है। इसकी उत्पत्ति—मलाया, इण्डोनेशिया, वर्मा, नेपाल आदि पूर्वी देशों में अधिक होती है। वैसे भारत में कहीं-कहीं इसके वृक्ष पाये जाते हैं। अतः तो शौकीन लोग इसे अपने बागीचों और फुलवारियों में भी लगाने लगे हैं।

रुद्राक्ष को शिवजी के नेत्र से उत्पन्न माना जाता है। इसलिए इसका नामकरण रुद्राक्ष अर्थात् रुद्र + अक्ष हुआ है। शिव भक्तों को यह बहुत ही प्रिय है। वैसे अन्य अनेक देवी-देवताओं की पूजा-स्तुति में भी इसकी माला धारण करने और उस पर मंत्र जप करने का विधान है। आध्यात्मिक दृष्टि से जितना महत्व 'रुद्राक्ष' को प्राप्त है, कदाचित ही अन्य किसी वनस्पति को प्राप्त हो। आध्यात्म ही नहीं, भौतिक जगत के कई क्षेत्रों में भी विशेषकर 'चिकित्सा क्षेत्र' में इसे बहुत मान्यता प्राप्त है।

रुद्राक्ष एक पेड़ का फल है, जो गुच्छों में फलता है। यह फल गूलर के समान गोल होता है, जिसका गूदा कड़ा और मजबूती से रुद्राक्ष फल के बीज पर चिपका रहता है। गोल जामुन की कल्पना कर लें, ठीक वैसा ही होता है। परंतु जामुन का गूदा कोमल होता है, जबकि यह बहुत ही कठोर होता है। इसकी टहनियों में फलों की संख्या विपुल होती है और वे पककर अपने आप गिर जाते हैं। पेड़ के नीचे यह फल निमौली की तरह बिखरे रहते हैं। जंगली जातियों के लोग इनका संग्रह करते हैं, फिर पानी में कई दिनों तक फलों को भिगोकर गूदे को मुलायम करके निकालते हैं। गूदा निकल जाने पर धुले हुए, 'रुद्राक्ष-बीज' बाजार में बिकने आते हैं।

पके फल के बीज (दाने) उत्तम होते हैं, लेकिन कच्चे फलों के दाने न तो स्थायी होते हैं, न गुणवत्ता में ही पूरे उतरते हैं। कुछ जंगली बेर के बीजों की मिलावट भी उनमें होती है। अतः रुद्राक्ष खरीदते समय उसकी शुद्धता को भली-भाँति परख लेना चाहिए।

रुद्राक्ष की प्रजातियाँ :- आकार भेद से रुद्राक्ष की कई जातियाँ होती हैं। इनके बीज प्रायः गोल होते हैं, परंतु अपवाद स्वरूप कभी-कभी कुछ लंबे, चक्राकार, उन्नतमुख, अर्द्धचन्द्राकार और चपटे भी पाये जाते हैं।

इसके दाने छोटे-बड़े भी होते हैं। बड़े दाने सुलभ होते हैं, जबकि छोटे दाने कम पाये जाते हैं। लघुत्तम रुद्राक्ष कालीमिर्च के दाने के बराबर होता है। उससे क्रमशः बड़े दाने मटर, बड़ी मटर, बेर और आँवले के बराबर होते हैं। मान्यता है कि लघुत्तम आकार वाले दानों की माला उत्तम होती है। कहीं-कहीं बड़े दानों को ही महत्वपूर्ण बताया जाता है। मेरी धारणा है, रुद्राक्ष — रुद्राक्ष है। वह चाहे, जिस आकार में हो, यदि शुद्ध निर्दोष है, तो अवश्य ही धारणीय है।

छोटे दाने की माला पहनने में सुविधाजनक होती है। परंतु चूंकि वह कठिनाई से प्राप्त होता है, इसलिए इसका मूल्य अधिक है। बड़े दाने की माला को पहनने में असुविधा होती है, फिर आज का फैशन परस्त युग। वह दाना सरलता से मिलता है और खपत कम है, इसलिए सस्ता बिकता है। प्रभाव सभी का समान होता है। बड़े दाने की माला जप के लिए सुविधाजनक होती है। इसलिए लोग धारण करने में छोटे दाने और जप के लिए बड़े दानों की माला का प्रयोग करते हैं। सामान्यतः छोटी झरबेरी बराबर दानों वाली माला प्रयोग में आती है। इधर 20 वर्षों से युरोप, अमेरिका में भारतीय-दर्शन और आध्यात्म के प्रति विशेष रुचि जागृत हुई है। अतः वहाँ के निवासी बड़ी आस्था, बड़े उत्साह से रुद्राक्ष धारण करने लगे हैं।





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



मुखभेद से वर्गीकरण :- रुद्राक्ष का दाना हाथ में लेकर गौर से देखें, जैसे छिले हुए नींबू अथवा आँवले के फल पर फाँकों की धारियाँ बनी होती हैं, ठीक वैसी ही धारियाँ आपको रुद्राक्ष के दाने पर दीख पड़ेंगी। रुद्राक्ष चाहे जिस आकार में हो, उसके दो सिरे होते हैं। ये धारियाँ एक सिरे से चलकर दूसरे सिरे को छूती हैं। इन्हें 'मुख' कहा जाता है। जिस दाने पर जितनी धारियाँ हो, वह दाना उतना ही 'मुखी' कहलाता है। आमतौर से पाँच धारियों वाले दाने ही पाये जाते हैं। उन्हें पंचमुखी रुद्राक्ष कहते हैं। ये धारियाँ (मुख) प्राकृतिक रूप में निर्मित होती हैं। इनकी संख्या एक से लेकर इक्कीस तक मानी जाती है। परंतु वर्तमान समय में अधिकतम 14 धारियाँ वाले दाने ही देखे गये हैं। इनमें कुछ सुलभ होते हैं, कुल दुर्लभ और कुछ तो सर्वथा अलभ्य जैसे होते हैं।

जिस पेड़ में जिस अकार के फल आते हैं, वे लगभग समान ही होते हैं। आम, जामुन की तरह प्रत्येक दाने वाले पेड़ अलग-अलग होते हैं। हाँ, धारियों की संख्या इनमें बदलती रहती है। जिस पेड़ से पंचमुखी रुद्राक्ष प्राप्त होते हैं, उसी से 6-7 मुखी दाना भी (यदाकदा) प्राप्त हो जाता है। हाँ, यह अवश्य है कि छोटे दाने वाला पेड़ एक जाति का है, बड़े दाने वाला उससे भिन्न जाति का— जैसे आम के पेड़ और उसके फल। फिर भी हैं, सब रुद्राक्ष ही और पूजा तथा औषधीय प्रयोगों में समान रूप से व्यवहृत होते हैं।

तंत्र शास्त्र में रुद्राक्ष के दानों का प्रभाव, उनके मुखों की संख्या के आधार पर अलग-अलग बताया गया है। यह भी माना जाता है कि प्रत्येक रुद्राक्ष (मुख भेद के आधार पर) की (उसमें निहित) दैवी शक्ति, उसका मंत्र, उसका प्रभाव ये सब भिन्न-भिन्न होते हैं। पाठकों के लिए हम उनका संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं :-

1. **एकमुखी रुद्राक्ष :-** यह बहुत-ही दुर्लभ होता है। इस पर केवल एक रेखा पड़ी होती है। यह गोल रूप में मिलता है और अर्द्ध चन्द्राकार भी। कुशल कारीगर नकली एकमुखी रुद्राक्ष भी बना लेते हैं। किंतु उसमें असली का प्रभाव नहीं रहता। यह मूल्यवान भी होता है। इसको धारण करने के अनेक लाभ तंत्र शास्त्रों में वर्णित हैं। समस्त रुद्राक्षों में यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण, सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। अगर यह कहीं मिल जाये, तो समझना चाहिए—शिवजी की कृपा प्राप्त हो गयी है।

सावधानी :- कोई रुद्राक्ष हो, उसको खरीदते समय कुछ विशेष बातों पर अवश्य ध्यान देना चाहिए, जैसे -

1. रुद्राक्ष का दाना वास्तव में 'रुद्राक्ष' ही हो, किसी दूसरे फल का बीज या लकड़ी पर नक्काशी करके, बनाया गया न हो।
2. पके फलों के बीज से उत्तम रुद्राक्ष निकलता है। कच्चे फलों से प्राप्त बीजों को 'भद्राक्ष' कहते हैं। यह गुणवत्ता की दृष्टि से नगण्य होता है। यद्यपि रूपाकार में रुद्राक्ष से पूरा साम्य रखता है। अतः भद्राक्ष न लेकर, भद्राक्ष अर्थात् कच्चे फल का बीज नहीं—पके फल का बीज (रुद्राक्ष दाना) खरीदें।
3. कच्चे-पके रुद्राक्ष की सरलतम पहचान है— दानों को पानी में डाल दें। जो दाने डूबकर बर्तन की तलहटी में जा बैठें, वे असली, शुद्ध और गुणवत्ता में पूरे हैं। पानी के ऊपर तैरने वाले दाने कच्चे, प्रभावहीन, अशुद्ध और अप्रयोज्य होते हैं।
4. चाहे जितना सुंदर, छोटा या बड़ा दाना हो, उसे सर्वांगपूर्ण होना चाहिए। घुना, कटा-फटा, छिद्रयुक्त, विकृत, भग्न, टेढ़ा, दोनों छेदों के बीच छिद्र-रेखा का अभाव, मलिन, ज्योति रहित, उदास, पूर्णतया चिकना (काँटों से रहित) दाना ग्राह्य नहीं होता।
5. प्रथम तो नया रुद्राक्ष ही खरीदें। किसी परिस्थिति विशेष में यदि किसी का दिया हुआ (पहना हुआ) लेना पड़े, तो उसकी शुद्धता को भी भली-भाँति परख लेना चाहिए। यदि सही है, तो ले लें और किसी पात्र में गंगाजल या शुद्ध कूपजल में उसे डाल दें। 24 घंटे बाद निकाल कर, धोकर साफ कर लें। फिर विधिवत् उसकी पूजा करके, काम में लायें।
6. बहुत पुराना मैला-कुचैला, निर्जीव, कुपात्र व्यक्ति द्वारा प्रयुक्त और चुराया हुआ रुद्राक्ष धारणीय नहीं होता।
7. तांबे के दो टुकड़ों के बीच में रखने पर असली रुद्राक्ष का दाना घूमने लगता है।





तांजौक्त वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



रुद्राक्ष का शोधन :- वैसे 'रुद्राक्ष' का प्रयोग भारत में प्रागैतिहासिक काल से होता आ रहा है। प्राचीन भारतीय नरेश और ऋषि—मुनि इसकी माला धारण करते थे। आप किसी भी तपस्वी का, शिवजी का अथवा अन्य ऋषि—मुनियों का चित्र देखें, वह रुद्राक्ष माला से अवश्य अलंकृत होगा।

किंतु इतना उपयोगी सर्वप्रिय और परम—पावन होने पर भी रुद्राक्ष धारण के कुछ विशेष नियम हैं। भारतीय तंत्र शास्त्र नियमों की संहिता है। इसमें प्रत्येक वस्तु, प्रत्येक कार्य, चिंतन और मनन, सबके अलग—अलग नियम हैं। नियमपूर्वक की गयी तंत्र साधना त्वरित फलदायी होती है। नियम—विरुद्ध कार्य, वह चाहे तंत्र में हो, चाहे व्यावहारिक जगत में कभी फलदायी नहीं होती। अतः रुद्राक्ष धारण के पूर्व उसके नियमों का निर्वाह अवश्य करना चाहिए। यह नहीं है कि कहीं से एक माला मोल ले लाए और पहन लिया, बस। यह तो एक तरह की औपचारिकता मात्र है, श्रद्धा और नियम—पालन से इसका दूर का नाता भी नहीं है।

यों, शास्त्रीय पद्धति बहुत जटिल है और इसके अनुसार रुद्राक्ष—शोधन आज के व्यस्त युग में सामान्य व्यक्ति के लिए संभव नहीं है। परंतु मध्यम मार्ग का अवलम्ब लेकर यह क्रिया सार्थक रूप में पूरी की जा सकती है।

रुद्राक्ष के दाने (माला) देख—परख कर लायें। इन्हें 'किसी रविपुष्प योग' में अथवा 'सोम पुष्प' योग में या फिर किसी भी सोमवार के दिन गंगाजल में धोकर थाली में रखें। यदि माला बनवा रखी है तो वह भी इसी विधि से शोधित होगी। गंगाजल के अभाव में शुद्ध जल सामान्य जतन से लें। रुद्राक्ष को गंगाजल, शुद्ध दूध, शुद्ध जल या चंदन मिश्रित जल से स्नान करायें। या पहले स्नान करा दें— फिर उस पर चंदन (श्वेत चंदन घिसकर तैयार रखें) लगायें। कोई श्वेत पुष्प चढ़ायें, धतूरा या मदार का भी चढ़ा सकते हैं। अक्षत, बेलपत्र भी अप्रित करें, धूप—दीप दें और आरती करें। इस पूरी प्रक्रिया में शिवजी का कोई भी मंत्र जपते रहें। मंत्र के रूप में सर्वाधिक प्रचलित 'ॐ नमः शिवाय' बहुत ही प्रभावशाली रहता है। इस प्रकार पूजा करके शिवजी का ध्यान करें। यदि घर में उपलब्ध है तो रुद्राक्ष की पूजा करते समय शिवजी की प्रतिमा/शिवलिंग की भी पूजा करें। शिवजी और रुद्राक्ष की पूजा पूरी हो चुकने पर शिवजी से प्रार्थना करें —

'हे शिवजी! आप कृपा करके इस रुद्राक्ष माला में निवास कीजिए। इसे अपनी कृपा से अपने दिव्य प्रभाव से शक्तिशाली बनाइए। मैं इस माला को धारण करके सदैव आपका कृपापात्र रहूँ, सर्वत्र मेरी रक्षा कीजिए।'

इस प्रकार प्रार्थना करके उसी माला को धूप के धूप में शोधित करके सुमेरु को माथे से लगायें और 11 माला उक्त मंत्र का जप करें। पुनः वही मंत्र पढ़ते हुए 21 आहुतियाँ देकर हवन करें और एक ब्राह्मण को भोजन—दक्षिणा दें। इसके बाद माला को शिवजी की प्रतिमा से स्पर्श कराकर, मंत्रोच्चारण करते हुए, धारण कर लें और भस्म का टीका माथे पर लगाकर शिवजी को प्रणाम करें। यह रुद्राक्ष धारण की सबसे सरल विधि है।

मान्यता है कि धारण की गयी माला को उतारना नहीं चाहिए। किसी विशेष स्थिति की बात अलग है, अन्यथा इसे पहने ही रहें। दैनिक पूजा और मंत्र जप के लिए भी इसी प्रकार माला शोधित की जाती है। परंतु उसे धारण न करके, लाल कपड़े की थैली (गोमुखी) में रखना चाहिए।

रुद्राक्ष माला धारण करने और उस पर दैनिक पूजा का (किसी भी विशेष अनुष्ठान का) मंत्र जप करने से बहुविध कल्याण होता है।

मुखानुसार विवरण :- रुद्राक्ष के दाने पर बनी धारियों को मुख कहते हैं। सभी दानों पर बराबर संख्या में धारियाँ नहीं होती। अधिकांश दाने पाँच धारियों वाले (पंचमुखी) होते हैं। परंतु किसी—किसी दाने पर 3, 4, 7, 8, 9, 10, 11 धारियाँ भी देखी जाती हैं। वैसे 1 से 21 धारी तक के रुद्राक्ष का उल्लेख मिलता है, परंतु अधिकतर 14 धारी तक के दाने ही देखे गये हैं। सर्वसुलभ 5 धारी वाला होता है। दो धारी वाला चपटे आकार का दाना भी बहुत मिल जाता है। 6 धारी वाला भी थोड़े परिश्रम से प्राप्त हो जाते हैं। परंतु 3, 4, 7, 8, 9, 10, 11 धारी वाले कम मिलते हैं। 3, 4 वाले तो कुछ सुलभ ही कहे जा सकते हैं, परंतु 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13 धारी वाले दाने दुर्लभप्रायः ही होते हैं।

आर्ष—ग्रंथों में मुखानुसार रुद्राक्ष दानों का वर्गीकरण करते हुए बताया गया है कि प्रत्येक दाने का संबंध अलग—अलग देवी शक्तियों से है और उसके मंत्र भी पृथक—पृथक हैं। कौन दाना (कितने मुख वाला) किस देवता का प्रतिनिधित्व करता



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥

तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



21

है। उसका मंत्र क्या है, उसका प्रभाव कैसा और क्या होता है, यह बड़े विस्तार का विषय है। पाठकों की सुविधा और जिज्ञासा पूर्ति के लिए उसे हम यहाँ संक्षिप्त सार-गर्भित रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं :-

रुद्राक्ष	देवता	मंत्र
एकमुखी :	शिव :	ॐ ह्रीं नमः ।
दोमुखी :	अर्द्धनारीश्वर :	ॐ नमः ।
तीनमुखी :	अग्नि :	ॐ क्लीं नमः ।
चारमुखी :	ब्रह्मा :	ॐ ह्रीं नमः ।
पाँचमुखी :	कालाग्नि रुद्र :	ॐ ह्रीं नमः ।
छःमुखी :	कार्तिकेय :	ॐ ह्रीं हुं नमः ।
सातमुखी :	सप्त मातृकायें, सप्तर्षि :	ॐ हुं नमः ।
आठमुखी :	अष्ट भैरव :	ॐ हुं नमः ।
नौमुखी :	दुर्गाजी :	ॐ ह्रीं हुं नमः ।
दसमुखी :	विष्णु :	ॐ ह्रीं नमः ।
ग्यारहमुखी :	रुद्र, इन्द्र :	ॐ ह्रीं हुं नमः ।
बारहमुखी :	द्वादश आदित्य :	ॐ क्रौं क्षौं रौं नमः ।
तेरहमुखी :	कामदेव, इन्द्र :	ॐ ह्रीं नमः ।
चौदहमुखी :	शिवजी, हनुमान :	ॐ नमः ।

रुद्राक्ष के तंत्र प्रयोग :- आयुर्वेद और तंत्र में रुद्राक्ष की महिमा को 'अपार' कहा गया है। विविध प्रकार की दैहिक, दैविक और भौतिक समस्याओं के निदान हेतु प्रकारान्तर से रुद्राक्ष के अनेकानेक प्रयोग बताए गए हैं। यहाँ कुछ विशिष्ट समस्याओं के समाधान हेतु रुद्राक्ष की प्रयोग-विधियाँ लिखी जा रही हैं :-

शिवजी की कृपा प्राप्ति हेतु :-

1. किसी भी वर्ग (मुख वाले दाने की) एक समूची शुद्ध, निर्दोष और विधिवत् शोधित माला धारण करने से शिवजी की कृपा अवश्य प्राप्त होती है।
2. तांबे की कटोरी या तश्तरी में रुद्राक्ष के दाने रख लें और उन्हें प्रतिदिन शिवलिंग की भांति पूजते रहें। इससे शिव पूजन का फल प्राप्त होता है।

दैनिक बाधाओं के निवारण हेतु :- तंत्र शास्त्र के अनुसार रुद्राक्ष का दाना या माला शोधित करके धारण करने पर वायव्य दोष, भूत-प्रेतादि, अदृश्य आत्माएं, अभिचार प्रयोग आदि के दुष्प्रभाव से रक्षा होती है। रुद्राक्षधारी व्यक्ति जहाँ कहीं भी जाए— चाहे जंगल, पर्वतीय क्षेत्र, श्मशान, रणक्षेत्र अथवा अन्य किसी अपरीचित और संकटपूर्ण स्थान में वह तन-मन से पूर्णतः सुरक्षित रहता है। दैहिक बाधाओं की शांति हेतु रुद्राक्ष को इस तरह धारण किया जाता है, यथा -

1. रुद्राक्ष को चंदन की भांति पत्थर पर घिसें, फिर वह लेप शरीर पर लगा दें। इस प्रयोग से समस्त प्रकार की भौतिक व्याधियाँ समाप्त हो जाती हैं।
2. चंदन की भांति तैयार किया गया लेप, माथे पर टीका (तिलक) के रूप में धारण करने वाला साधक शिवजी की कृपा का पात्र हो जाता है। वह जहाँ पर भी जाए, लोगों पर उसका सम्मोहन जैसा प्रभाव पड़ता है। शिरो-पीड़ा के निवारण में भी यह प्रयोग सफल रहता है।

उदर विकार नाशक प्रयोग :- एक लोटा पानी में रुद्राक्ष के पाँच दाने डालकर शाम को रख दें। प्रातः वह जल पीयें और उसके बाद लोटे में दुबारा जल भरकर वही दाने डाल दें। 24 घंटे बाद वह जल फिर सेवन करें। यह रुद्राक्ष-जल उदर





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



विकारों को नष्ट करके रक्त संचार में सहायक बनता है। इसके प्रभाव से सुस्ती, अनिद्रा, आलस्य, अम्लपित्त की पीड़ा, गैस, कब्ज और अन्य विकार दूर हो जाते हैं। परंतु ध्यान रहे कि जिस पात्र में जल भरा जाय वह तांबे का होना चाहिए और जल भरने के पूर्व उसे भली-भाँति माँज-धोकर चमका लें। (तांबे के पात्र में कभी खट्टी वस्तु रखकर नहीं खाना चाहिए, क्योंकि वह विषाक्त हो जाती है।)

बाल रोगों पर रुद्राक्ष :- बच्चे के गले में एक या तीन दाने रुद्राक्ष पहना दें। साथ ही रुद्राक्ष को पानी में घिसकर वह पानी बच्चे को पिलायें और सोते समय छाती पर उसका लेप भी कर दें। इस प्रयोग से बच्चों का रात में सोते समय रोना, डरना, चिहूँक उठना, अस्वाभाविक रूप से हाथ-पैर पटकना, ये सारी व्याधियाँ दूर हो जाती हैं।

बन्ध्यत्व निवारक प्रयोग :- मध्यम आकार का एक दाना शुद्ध नया रुद्राक्ष और एक तोला सुगंध रास्ना-खरल में कूट-पीसकर चूर्ण बनाएं। यह चूर्ण 2-3 माशे की मात्रा में दोनों समय प्रातः-सायं गाय के दूध के साथ सेवन करें। ऋतुमती होने के प्रथम दिन से प्रारंभ करके लगातार सात दिनों तक यह प्रयोग करें। इसके प्रभाव से बन्ध्यत्व दूर होकर, स्त्री को गर्भ लाभ होता है। परंतु, यहाँ यह तथ्य भी स्मरणीय है कि उस महिला को स्वास्थ्य, आयु और दाम्पत्य-जीवन की दृष्टि से भी उपयुक्त होती है।



✽ शंख ✽

सामान्य परिचय :- विश्व के समस्त जल-जंतुओं में एक मात्र 'शंख' ही ऐसा है, जो रूपाकार में कुरूप होने पर भी सर्वाधिक पूज्य और मान्य है। हाँ, यह अवश्य है कि उसकी मान्यता और पूजा, सम्मान-भाव, केवल हिन्दू धर्मावलम्बियों तक ही सीमित है। परंतु हिन्दू धर्म के अनुयायियों की संख्या भी कम नहीं है, अतः शंख-पूजक व्यक्ति भी कम नहीं हैं। विशेष रूप से यह ब्राह्मण परिवारों में देव-प्रतिमा की भाँति पूजा जाता है। पहले क्षत्रिय, वैश्य भी इसे रखते थे। शूद्रों में भी शंख ग्राह्य था। चूँकि वर्ण व्यवस्था के अनुसार भारतीय समाज चार वर्णों में वर्गीकृत था-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र। अतः वर्ण (रंग) के आधार पर शंखों का भी वर्गीकरण कर दिया गया था और प्रत्येक वर्ण अपने वर्ग का शंख प्रयोग में लाता था। शुभ्र (श्वेत) वर्णीय शंख ब्राह्मण माना जाता है। ब्राह्मण समुदाय के लिए वही प्रयोज्य माना गया है। लालिमायुक्त (लाल रंग की आभा वाला) शंख क्षत्रियों का प्रतिनिधि है, अतः वह उनके समाज में प्रयुक्त होता है। पीताम्ब शंख वैश्य समाज के लिए ग्राह्य बताया गया है और श्याम वर्णीय शंख शूद्रों के लिए प्रयोजनीय माना जाता है।

रामायण, महाभारत तथा अन्य अनेक पौराणिक प्रसंग इस तथ्य को बड़ी स्पष्टता से उजागर करते हैं कि प्राचीन काल में भारतीय संस्कृति ने शंख को वरीयता के साथ ग्रहण किया था। शंख को विजय, सौख्य, समृद्धि, शुभ और यश-प्रभाव का प्रतीक माना गया है। सामाजिक जीवन के लगभग सभी अवसरों पर शंख ध्वनि को मान्यता प्राप्त थी। उत्सव, पर्व, पूजा-पाठ, हवन, जयकार, मंगल ध्वनि, प्रयाण, आगमन, युद्धारम्भ, विजय-वरण, विवाह, विदा, राज्याभिषेक, देवार्चन-जैसे अवसरों पर शंख की ध्वनि से आसपास का वातावरण गूँज उठता था। इस प्रकार शंख का प्रयोग (ध्वनि उत्पन्न करने, बजाने में) सदैव शुभ और अनिवार्य माना जाता है।

पौराणिक संदर्भ में शंख :- कितने ही पौराणिक प्रसंगों में शंख का उल्लेख मिलता है। कई एक देवता और देवियाँ (शक्ति के प्रतिरूप) आयुध के रूप में शंख धारण करती थीं। वे प्रसन्नता व्यक्त करने और युद्ध घोषणा (युद्धारम्भ की घोषणा) के लिए भी शंख ध्वनि करते थे। श्रीमद्भागवत् में 'महाभारत कथा' के अंतर्गत 'गीता' वाले प्रसंग में कौरव-पाण्डव सेनानियों के शंखों का स्पष्ट वर्णन मिलता है -

“पाञ्चजन्य हृषीकेशो देवदत्तं धनञ्जय। पौण्ड्रं दध्मौ महाशंखं भीमकर्मा वृकोदर।।”.....

भगवान् विष्णु की स्तुति में कहा गया है :- “सशंख चक्रं सकिरीट कुण्डलं, सपीत वस्त्रं सरसीरुहेक्षणम्।।”.....

देवी-स्वरूपों को भी शंखयुक्त बताया गया है :- “शंखं सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृत्ताम्।।”

और - “घण्टा शूल हलानि शंख मुसले, चक्रम् धनुः सायकम्।।”



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंज



आज भी हमारे समाज में पूजा-पाठ, हवन-यज्ञ, आरती जैसे अवसरों पर विभिन्न वाद्यों के साथ 'शंखनाद' की प्रथा प्रचलित है। मान्यता है कि शंख की ध्वनि जहाँ सुनाई पड़ती है, उतने क्षेत्र का वायुमण्डल भौतिक-वायव्य और दैविक प्रकोपों-बाधाओं से मुक्त हो जाता है। ओज, तेज, साहस, पराक्रम, चैतन्य, आशा और स्फूर्ति बढ़ाने के लिए शंख ध्वनि को वैज्ञानिक रूप में भी स्वीकार किया गया है।

अस्तु यह तो हुई शंखों की सामान्य बात, यहाँ हम शंख की उत्पत्ति, संरचना और तांत्रिक क्षेत्र में उसके प्रयोगों की चर्चा करेंगे।

शंख की उत्पत्ति :- शंख समुद्र में उत्पन्न होने वाला एक कठोरकाय जीव है। वह कछुआ, घोंघा, सीपी, कौड़ी के वर्ग में आता है। आकार, रंग और भार की दृष्टि से शंख अनेक प्रकार के पाये जाते हैं। समुद्र के अतिरिक्त किसी-किसी नदी में भी उनकी उत्पत्ति होती है। परंतु वे आकार में बहुत छोटे (जौ के दाने से लेकर, निमौली तक) होते हैं। हम आमतौर पर जितने शंख देखते हैं, वे सब समुद्री उत्पत्ति हैं। रूपाकृति के आधार पर इनके भिन्न-भिन्न नाम (जातिगत) होते हैं। गोल, लंबे, चौड़े, चपटे, ऊँचे, शंक्वाकार कई तरह के शंख देख पड़ते हैं। मैंने रामेश्वरम् और कन्याकुमारी में शंखों की विभिन्न जातियाँ देखी हैं— एक से बढ़कर एक विचित्र और कौतूहलकारी! सबसे छोटा शंख गेहूँ के दाने के बराबर था और बड़े शंख लगभग आकार 400 वर्ग इंच तक थे।

शंख एक अस्थि घोलधारी जीव है—ठीक घोंघे जैसा। यह पेट के बल रेंगता हुआ चलता है। वैसे यह पानी में ही रहता है, शायद ही कभी किनारे (जमीन) पर आता हो। आयुकाल पूरा हो जाने पर जब वह मर जाता है, इसका मांस सड़-गलकर जल में विलुप्त हो जाता है और मात्र कंकाल (हड्डीका खोल) शेष रह जाता है। अन्य जीवों में अनेक हड्डियाँ होती हैं, परंतु शंख में केवल एक हड्डी होती है — यही खोल(कवच) इसी को मछुए पानी से निकालकर बाहर लाते हैं और साफ करके बेचते हैं।

सभी शंखों का स्वर समान नहीं होता है। कुछ तो बजते ही नहीं। जो बजते हैं, उनकी ध्वनि भिन्नतापूर्ण होती है। जो शंख देखने में सुंदर, सुडौल और स्पष्ट, मधुर, तीव्र ध्वनि करने वाला हो, वह सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। व्यावहारिक रूप में 'शंख' शब्द से शंख-जीव का नहीं, उसके इसी खोल (एकमात्र हड्डी से बना उसका रक्त-मांस रहित ढाँचा) का आशय लिया जाता है।

शंख : पवित्रता का प्रतीक :- 'हड्डी' होकर भी शंख पूज्य है। इसकी अपवित्रता असंदिग्ध है। देव स्थानों में वह देव-प्रतिमाओं की भांति श्रद्धा-सम्मान के साथ रखा जाता है। पौराणिक प्रसंगों के आधार पर यह लक्ष्मी का सहोदर और विष्णु का प्रिय है।

जहाँ शंख होगा, वहाँ लक्ष्मी का निवास अवश्य रहेगा। लक्ष्मीजी ने विष्णु भगवान द्वारा पूछने पर स्वयं ही यह तथ्य उद्घाटित किया :-

‘वसामि पदमोत्पल शंख मध्ये, वसामि चन्द्रे च महेश्वरे च।’.....

मैं पद्म, उत्पन्न शंख, चंद्रमा और शिवजी में निवास करती हूँ।

कुछ लोग शंख को रूपाकार की दृष्टि से दरिद्रता का सूचक भी मानते हैं। परंतु यह इनका भ्रम अथवा नास्तिकता संबंधी सूचक दृष्टिकोण है। शंख सदैव से ही भारतीय संस्कृति और आध्यात्म के आरंभिक चरण से ही पूज्य, पवित्र और शुभ माना जाता रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि शंख के निषेध को ठीक से न समझ पाने के कारण ही ऐसी भ्रांति जन-मानस में फैल गयी है। वस्तुतः कुछ स्थितियों में 'शंख' को त्याज्य कहा गया है। परंतु उन परिस्थितियों के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में शंख को सदैव महत्वपूर्ण माना गया है।

शंख : त्याज्य कब ?

आजकल तो लोग मेज पर पेपर-वेट के रूप में, शौक पूरा करने के लिए शंख का प्रयोग करते हैं, उस पर तरह-तरह की बेल-बूटाकारी, पेंटिंग और चित्रांकन कराते हैं, परंतु शंख का वास्तविक प्रयोग है— पूजाघर में उसकी स्थापना





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



और आरती-पूजा के समय उसका बजाया जाना। पारिवारिक सुख-संस्कारों के समय भी 'शंख ध्वनि' करने को कुछ फलदायक माना गया है। परंतु उन स्थितियों में 'शंख' त्याज्य हो जाता है, जब कि -

1. किसी कारण से चोट या दुर्घटना से शंख फूट गया हो।
2. शंख में दरार आ गयी हो, वह चटक गया हो।
3. बजता न हो।
4. बजाते समय हाथ से छूटकर गिर गया हो।
5. ध्वनि में भिन्नता हो।
6. रूपाकार में सुडौल न होकर, किसी विशेष कुरूपता से युक्त हो।
7. आभाहीन हो, निम्न, बुझा हुआ शंख अशुभ होता है।

शंख का कोई भी स्थान टूटा न हो। यदि किनारे कहीं से कुछ चटक गये हों, तो उसे रेती से रेतकर यथासंभव पूर्ववत् बना लें। न बन सके, तो उसे नदी में प्रवाहित कर दें।

कुछ विद्वानों की मान्यता है कि घर में दो शंख (उनकी संख्या 2 हो) नहीं रखने चाहिए। या तो एक ही शंख हो या फिर 2 से अधिक, 3, 5, 7, 9 आदि। इसी प्रकार शिवलिंग, गणेश-प्रतिमा आदि को भी 2 की संख्या में रखने का निषेध किया गया है।

हम जितने भी शंख देखते हैं, भले ही वे किसी आकृति में हो, प्रायः वामावर्त्ती होते हैं। अर्थात् उनका पेट बाँयी ओर खुला होता है। उनके मुँह से पेट की ओर चलने वाली परतें बाँयी ओर घूमा करती हैं। वाम- आवर्त्त का अर्थ है, वह वामावर्त्त है। तंत्र-शास्त्र में वामावर्त्ती शंख की अपेक्षा दक्षिणावर्त्ती शंख को विशेष महत्व दिया गया है। यह शंख सामान्य शंख के भिन्न दिशा में, अर्थात् दायीं ओर को घूमा रहता है। उसके मुख से पेट की ओर चलने पर भंवर का घुमाव दाहिनी ओर पड़ता है। दायीं ओर की भंवर वाला शंख 'दक्षिणावर्त्ती' कहलाता है। मान्यता है कि यह शंख (दक्षिणावर्त्ती) बहुत-ही शुभ, श्री-समृद्धि दायक और अन्य प्रकार से वैभवकारी होता है।

दक्षिणावर्त्ती शंख सरलता से नहीं मिलता। यह संसार के बहुत-कम स्थानों में पाया जाता है। दुर्लभ होने के कारण इसका मूल्य भी अधिक होता है। यह आकार में गेहूँ के दाने से लेकर नारियल के समूचे फल (जटा सहित) के बराबर तक पाया जाता है। भारत के दक्षिणी समुद्र-तट पर 'रामेश्वरम' और 'कन्याकुमारी' के आसपास ये शंख प्राप्त होते हैं। सामान्यतः यह शंख श्वेत वर्ण का होता है। परंतु गौर से देखें तो इस पर लाल पीली या काली आभा या धारियाँ भी पायी जाती हैं। शुद्ध श्वेत दुधिया वर्ण का जिस पर दूसरे रंग की झलक न हो, ऐसा शंख सर्वोत्तम माना जाता है। परंतु यह कदाचित ही कहीं दिख पड़े, अन्यथा यह पीताम्ब तथा रक्ताम्ब होता है।

छोटे आकार वाले शंख बहुधा काले होते हैं। उनमें कोई-कोई कुछ लंबी आकृति के होते हैं। इनके भीतर शून्य स्थान नहीं होता है। इनमें पत्थर जैसा पदार्थ जम जाने से ये 'जीवाश्म' (फॉसिल्स) बन जाते हैं। यह उनकी प्राचीनता का सूचक होता है। सामान्य फॉसिल्स काले, स्लेटी रंग के होते हैं। कोई-कोई कुछ बड़ा और श्वेत भी होता है। उनमें किसी-किसी का जीवाश्म काँच की तरह चमकीला, स्फटिक की तरह सफेद और पारदर्शी होता है। परंतु स्फटिक में केवल पानी जैसी सफेदी होती है, जबकि वह श्वेत जीवाश्म वाला शंख पारदर्शी और सतरंगी किरणों से युक्त होता है। अमेरिकन डायमण्ड (सफेद जिरकन) की तरह वह हीरे जैसी इन्द्रधनुषी किरणें प्रसारित करता रहता है। यह अति दुर्लभ और मूल्यवान होता है। इसे 'हीरा शंख' कहते हैं। इस प्रकार दक्षिणावर्त्ती शंख निम्नलिखित रूपों में प्राप्त होता है :-

1. **यवाकार** — यह शंख छोटा गेहूँ के दाने जैसा प्रायः स्लेटी रंग में कभी-कभी लालिमायुक्त प्राप्त होता है। जीवाश्म बन जाने के कारण इसका भार कुछ बढ़ जाता है। यह सर्वांग सिर से पूँछ तक ठोस होता है। अपनी आकृति के कारण ही यवाकार (जौ के आकार का) कहलाता है।
2. **एलाकार** — बड़ी इलायची के बराबर या उससे बड़ा भी सुपारी के समान, कभी-कभी नींबू के समान यह दक्षिणावर्त्ती शंख प्रायः तालाबों में पायी जाने वाली सफेद घोंघी जैसा होता है। वस्तुतः शंख और घोंघा एक ही जाति के जीव



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंज



हैं। अंतर इनके कंकाल (अस्थि कवच) की दृढ़ता का है। इलायची के समान होने से यह 'एलाकार' कहलाता है, परंतु इसकी उपमा सीमित नहीं है। यह शंख इलायची से बड़े भी देखे जाते हैं। इनका जीवाश्म रूप रवेदार, पारदर्शी पत्थर का, मिश्री के टुकड़े जैसा होता है। शुद्ध 'हीरा शंख' यही है।

यह शंख जितना भी बड़ा हो और उसके मणिभ (क्रिस्टल्स) जितने अधिक स्वच्छ पारदर्शी और आभायुक्त हों, यह उतना ही श्रेष्ठ माना जाता है। 'हीरा शंख' का मूल्य दक्षिणावर्ती-शंखों में सबसे अधिक होता है। यहाँ प्रसंगवश मैं यही बताना चाहता हूँ कि ये सभी शंख मैंने प्रत्यक्ष देखे हैं। मैं जहाँ भी जाता हूँ, विचित्र वस्तुओं को खोजने, देखने का प्रयास करता हूँ। भोपाल, उज्जैन, ओंकारेश्वर, शिरडी, बंगलौर, मैसूर, तिरुपति, चेन्नई, गोआ, कोयम्बटूर, त्रिचनापल्ली और मुम्बई आदि की यात्रा में ऐसी चीजें देखने के लिए यथासंभव प्रयासरत रहा हूँ। उत्तर की यात्रा-हरिद्वार, केदारनाथ, बद्रीनाथ आदि में भी यह सब देखने का सौभाग्य मुझे मिला है।

इसी प्रकार एक शंख और होता है—मोती शंख। यह सर्वांग, सप्तवर्णी आभा बिखेरता है। इसकी आकृति सामान्य शंखों से भिन्न होता है। यह मुँह की ओर अति संकीर्ण और पेट-पूँछ की ओर क्रमशः गोलाई में विस्तृत होकर छत्राकार बना होता है। यह बजता भी है और गोल होने के कारण बड़ी सफलता से अपने पास जेब में भी रखा जा सकता है। परंतु देखने पर सहज ही पता न चलने पर भी, यह दक्षिणावर्ती न होकर वामावर्ती होता है। इसकी बनावट कुछ ऐसी मोहक, भ्रामक और जटिल होती है कि व्यक्ति चकरा जाता है। शोभा की दृष्टि से यह शंख सर्वाधिक सुंदर, उत्तम माना जाता है। वैसे, धनदायक तांत्रिक-प्रयोगों में दक्षिणावर्ती शंख का महत्व अधिक होता है।

दूषित दक्षिणावर्ती शंख :- दक्षिणावर्ती शंख चाहे जितना बड़ा, भारी, चमकीला और भड़कीला हो, यदि वह सदोष है तो उसे नहीं लेना चाहिए। सामान्य रूप से, निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर सदोष दक्षिणावर्ती शंख की पहिचान की जा सकती है :-

1. शंख कहीं से टूटा, फूटा चटका न हो।
2. शंख में कहीं दरार न हों, पपड़ीदार न हो।
3. घुन खाये, जैसे काले-काले छेद न हो।
4. किसी भी प्रकार का दाग-धब्बा न हो।
5. शंख के शिखर सुरक्षित हों। भग्न-शिखर अथवा भग्न-मुख वाला शंख भी त्याज्य है।

वर्णानुसार सभी 'शंख' उत्तम होते हैं — काले रंग का शंख केवल शूद्रों, तामसी-जनों के लिए होता है।

सर्वश्रेष्ठ दक्षिणावर्ती शंख :- प्रायः सभी दक्षिणावर्ती शंख मुख बंद किए होते हैं। वैसे, जंतु विज्ञान के आधार पर कहा जाता है कि घोंघा वर्ग के सभी जीवों का मुख बंद होता है। जिसे हम 'मुख' कहते हैं, वह वास्तव में उनका 'पुच्छ' भाग है। पेट के बल रेंगने वाले ये घोंघा वर्ग के सारे जल-जंतु पेट के बल चलते हैं। वही आगे की ओर उनका मुख होता है, पीछे की ओर मलद्वार। उसी को पूँछ कहते हैं। अस्तु शंख में जो भाग खुला होता है, वह पेट कहलाता है, परंतु वास्तव में वही 'मुख' है। जिसे मुख कहते हैं, वह वस्तुतः पूँछ है। उसी को काटकर (तोड़कर) गोल छेद बना लेते हैं और उधर से ही फूँक मारकर शंख बजाते हैं।

इस प्रकार पूँछ की ओर वाले छेद से फूँक मारने पर भीतर से आवर्त्तों से होती हुई (घुमावदार सुरंग पार करके) घोंघे (शंख) के पेट (मुँह) से वह वायु (फूँक) ध्वनि बनकर निकलती है। दक्षिणावर्ती शंख बजाये नहीं जाते, केवल पूजा में प्रयुक्त होते हैं। परंतु कई आचार्यों तथा ग्रंथों का मत है कि 'यदि निर्दोष, सर्वांगपूर्ण, श्वेत वर्ण का दक्षिणावर्ती शंख घर में हो और वह बजता भी हो, तो ऐसा शंख सर्वोत्तम होता है।' कुछ लोग शंख पर प्रहार करने, तोड़कर उसका मुँह खोलने में परहेज करते हैं, इसलिए यह प्रायः बिना छेद का मिलता है। इसे बजाने का लोभ त्यागकर केवल पूजा का माध्यम (प्रतिमा की भांति) बनाये रखा जाये, यही उचित प्रतीत होता है। नीचे इसकी पूजन विधि और प्रभाव का उल्लेख किया जा रहा है —

दक्षिणावर्ती शंख की पूजन विधि :- चूंकि यह शंख सदैव सर्वत्र सुलभ नहीं रहता, इसलिए इसकी प्राप्ति के लिए मुहूर्त वाला प्रतिबंध व्यावहारिक नहीं रह जाता। पहले किसी पुरोहित से शुभ-मुहूर्त पूछ लें। यदि उस दिन शंख मिल जाता





तांजोक्त वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



है तो ले आये। यह स्थिति सर्वश्रेष्ठ होती है। किंतु ऐसा न हो सके, तो जब भी जहाँ भी यह शंख मिले या तो बात तय करके घर में देव-प्रतिमाओं के पास रख दें। जब शुभ-मुहूर्त आये, तब उसकी पूजा करें। शुभ-मुहूर्त के लिए सामान्यतः रामनवमी, विजया दशमी, दीपावली, कार्तिक पूर्णिमा, रक्षाबंधन, गंगा दशहरा आदि के दिन शुभ होते हैं। गुरुपुष्प योग अथवा रविपुष्प योग सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त होता है।

स्थानीय पंडित पुरोहित से पूछकर कोई भी शुभ दिन मालूम किया जा सकता है। दिन, तिथि, नक्षत्र और योग की गणना करके लोग शुभ मुहूर्त बता देते हैं। प्रायः सभी अंग एक साथ अनुकूल स्थिति में नहीं होते। एक-न-एक त्रुटि अवश्य रहती है। फिर भी अधिकतम अंगों के आधार पर मुहूर्त निर्धारित किया जा सकता है। यहाँ विद्वानों में भी भेद पाया जाता है। कोई दिन को महत्व देता है, कोई तिथि को। कोई नक्षत्र को वरीयता देता है, कोई योग को। सब एक साथ मिल जाये तब तो कहना ही क्या है। किंतु यदि ऐसा न हो सके तो रविपुष्प या गुरुपुष्प को मान्यता देनी चाहिए। यदि ऐसा मुहूर्त आने में बहुत विलम्ब है और साधक को जल्दी है तो वह शुभ नक्षत्र और शुभ योग की उपस्थिति में साधना कर सकता है। आशय यह है कि दुर्योग में, अशुभ मुहूर्त में कोई काम नहीं करना चाहिए।

सर्वप्रथम दक्षिणावर्ती शंख कहीं से प्राप्त करें। फिर शुभ मुहूर्त में अपनी दैनिक पूजा से निवृत्त होकर शुद्ध लकड़ी के पीठे पर चांदी की तश्तरी पर रखें। यह न हो सके, तो कोई भी धातु का पात्र जैसे तांबा या पीतल ले लें। उस पर कमल पुष्प का दल बिछायें। न मिले तो लाल कपड़ा बिछा दें। शंख को थाली में रखकर गो-दुग्ध, गंगाजल से भली-भांति स्नान कराये। स्वच्छ नवीन वस्त्र से उसे पोछकर, उसी तश्तरी पर रखें। सफेद चंदन, पुष्प, अक्षत, धूप-दीप से पूजा करके, मेवा-मिठाई का नैवेद्य अर्पित करें और चांदी का सिक्का चढ़ायें। यह न मिले तो प्रचलित सिक्का चढ़ा दें। साथ ही चांदी का कोई टुकड़ा धोकर चढ़ा दें। उत्तम होगा कि इसके लिए कपिहले से ही 10-20 रुपये का चांदी का गोल टुकड़ा या 'श्री' या 'ॐ' जैसा कुछ बनवा लें और वही चढ़ायें। पूजनोपरांत परम श्रद्धा भाव से मंत्र का जप करें। जप पूरा हो चुकने पर सामान्य हवन सामग्री में घी, शक्कर, जौ, तिल, अक्षत मिलाकर उसी मंत्र से 21 या 51 बार आहुति देते हुए हवन करें।

तदोपरांत किसी भी एक या अधिक ब्राह्मण को भोजन एवं दक्षिणा प्रदान करें। यह समस्त क्रिया संपन्न हो चुकने पर 'शंख' को पात्र (तश्तरी) सहित उठाकर देव-प्रतिमाओं के पास रख दें। यदि घर में प्रतिमाएं नहीं हैं, तो वैसे ही किसी सुरक्षित आलमारी या ताक में उठाकर रख दें और प्रतिदिन उसका पूजन करते रहें। यह भी हो सकता है कि भंडार, कोष, आलमारी या तिजोरी में उसे रख दें। किंतु धूप, दीप अवश्य नित्यप्रति करना चाहिए। वैसे विधान तो यही है कि शंख को नित्यप्रति स्नान कराये तथा चंदन, पुष्प, धूप, दीप से पूजा करें। पुष्प नहीं मिल रहें हो, तो जाने दें। जो भी उपादान संभव हो, उसे अवश्य प्रयोग करें। सामर्थ्य के अनुसार शंख पर सिक्के भी अर्पित करते रहें।

पूजन मंत्र :- दक्षिणावर्ती शंख की पूजा के लिए निम्नलिखित में से कोई भी एक मंत्र लिया जा सकता है। पूजा में आदि से अंत तक उसी का जप करना चाहिए। शंख पर चढ़ाया गया जल अपने ऊपर तथा घर में छिड़क देना चाहिए। उसे इधर-उधर न फेंकें। शास्त्र में लिखा है कि 'दक्षिणावर्ती शंख' में जल भरकर, उसे जिसके ऊपर छिड़क दिया जाय, वह समस्त पापों से मुक्त हो जाता है।

मंत्र -

1. ॐ श्री लक्ष्मी सहोदराय नमः।
2. ॐ श्री पयोनिधि जाताय नमः।
3. ॐ श्री दक्षिणावर्त शंखाय नमः।
4. ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्रीधर करस्थाय, पयोनिधि जाताय, लक्ष्मी सहोदराय, दक्षिणावर्त शंखाय नमः।
5. ॐ ह्रीं श्रीं श्रीधर करस्थाय, लक्ष्मी प्रियाय, दक्षिणावर्त शंखाय मम चिन्तित फलं प्राप्त्यर्थाय नमः।

इनमें सबसे सरल प्रथम मंत्र है - ॐ श्री लक्ष्मी सहोदराय नमः। वैसे साधक अपनी सामर्थ्य, श्रद्धा के अनुसार कोई भी मंत्र जपकर इस शंख के अद्भुत प्रभाव का लाभ उठा सकते हैं।



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



प्रभाव :- यदि शंख निर्दोष है, विधिवत् लाकर, पूजन द्वारा घर में स्थापित किया गया है, तो वह निश्चित रूप से प्रभाव इस प्रकार दिखाएगा —

1. दक्षिणावर्ती शंख जहाँ भी रहता है, दरिद्रता वहाँ से निश्चित रूपेण पलायन कर जाती है।
2. अन्न भंडार में, अन्न, धन भंडार में धन, वस्त्र भंडार में वस्त्र, अध्ययन या पूजन कक्ष में रखने से ज्ञान, शयन कक्ष में रखने से शांति की वृद्धि अवश्य ही होती है।
3. इसमें शुद्ध जल भरकर व्यक्ति, वस्तु या स्थान पर छिड़कने से दुर्भाग्य, अभिशाप, अभिचार और दुर्गह प्रभाव समाप्त हो जाते हैं।
4. ब्रह्म हत्या, गौ हत्या, बाल हत्या जैसे पातकों से मुक्ति पाने के लिए दक्षिणावर्ती शंख में जल भरकर संबंधित व्यक्ति पर छिड़कने से वह दोषमुक्त हो जाता है।
5. जादू, टोना, नजर, चलाव जैसे अभिचार कृत्यों का दुष्प्रभाव भी इससे शांत हो जाता है।
6. निर्धनता निवारण के लिए यह सर्वश्रेष्ठ वस्तु है।



❁ हाथाजोड़ी ❁

सामान्य परिचय :- प्रकृति का कला-विलास देखना हो तो 'हाथाजोड़ी' देखिए। वास्तव में यह एक जड़ी है, परंतु अपनी अद्भुत रूपाकृति और विचित्र संरचना के कारण कोई खिलौना जैसा प्रतीत होती है। खिलौना भी ऐसा, जिसके निर्माण में बारीकी, क्रम बद्धता और सौन्दर्य का अप्रतिम समावेश हो।

हाथाजोड़ी के कई नाम हैं — हाथाजोड़ी, हथजोड़ी, हथजुड़ी, हस्तजोड़ी, हस्ताजूड़ी, दुहथिया, भुजयुग्म और हथजोरिया। परंतु सर्वाधिक प्रचलित नाम यही है—हथजोड़ी या हाथाजोड़ी। यह एक पौधे की जड़ है, अतः वनस्पति श्रेणी में परिगणित होती है। इसकी उत्पत्ति भारत के बाहर— ईरान, फ्रांस और जर्मनी तक में होती है। वनस्पति होने के नाते अनेक प्रकार के औषधीय प्रभाव तो इसमें है ही, तांत्रिकों द्वारा भी इसे बहुत मान्यता प्राप्त है। तंत्र शास्त्र में इसके अनेक और अद्भुत प्रयोग वर्णित हैं। मेरा अपना अनुभव है कि यदि 'हाथाजोड़ी' को विधिवत् सिद्ध कर लिया जाय, तो तंत्र साधना में कई उपलब्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं।

भारत ही नहीं, सुदूर के देशों में यह औषधि तथा तांत्रिक वस्तु के रूप में विख्यात है। इसे ईरान में 'चुबकउश्शान' या चुबक उशनान कहते हैं। फारसी-उर्दू में 'बखूर-ए-मरियम' (बखूरे मरियम) के नाम से जाना जाता है। यूरोप के देशों में यह लैटिन भाषा के 'सायक्लमेन परसीकम' नाम से जानी जाती है।

मैंने इस जड़ी को निकट से कई बार देखा—परखा है। इसकी अद्भुत प्रभावशीलता ने मुझे कई बार विस्मित किया है। मैं स्व-अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि निःसंदेह हाथाजोड़ी तंत्र जगत की एक अति प्रभावी, चमत्कारिक और विचित्र वस्तु है। इस जड़ी से मेरा परिचय कैसे हुआ, यह बताने का लोभ मैं संवरण नहीं कर पा रहा हूँ। फिर इसकी शक्ति का अनुभव कैसे हुआ, यह भी बताना चाहता हूँ।

प्रथम परिचय : प्रथम भेंट :-

मेरा पारिवारिक परिवेश आस्थापूर्ण, आध्यात्मिक और सामान्य संपन्न रहा है। अतः मुझे अनेक प्रकार के पौराणिक, ऐतिहासिक कथा प्रसंग पढ़ने-सुनने को मिलते रहे हैं। प्रभु की कृपा से मेरी ग्रहण शक्ति कुछ अच्छी रही, इसलिए जो भी देखा-सुना या पढ़ा, वह मन-मस्तिष्क में स्थायी रूप से अंकित हो गया।

तब बचपन ही था। मेरे ग्राम साथी 'जुम्नन मनिहार' ने एक दिन मुस्लिम संत-फकीरों की अलौकिक शक्तियों का वर्णन करते हुए, कई एक चमत्कारी वस्तुओं के नाम गिनाए। उन्होंने बताया— एक होती है, हाथाजोड़ी। यह सबसे जोड़दार चीज है। ऐसी करामात और किसी चीज में जल्दी नहीं मिलेगी। इसको साथ रखकर कहीं भी जाओ, चाहे जैसा मौका





तांजोक्त वनस्पतियाँ : वनस्पति तंत्र



हो—कोई खिलाफ नहीं हो सकता। अगर कोई खून (कत्ल) भी कर डाले और इसे साथ में रखकर, थाने या कचहरी चला जाय तो उसे कुछ नहीं होगा। वह छूट जाएगा।

बाद में जुम्नन मनिहार ने विस्तार से, जो कुछ बताया उसका सारांश यह था कि हाथाजोड़ी में प्रबल सम्मोहन शक्ति होती है। अगर इसको सिद्ध कर लिया जाय तो कहीं भी जाकर सफलता पायी जा सकती है। जिसके पास यह होगी, कोई उसका विरोध नहीं करेगा।

बात वहीं की वहीं पड़ी रही। परंतु मैं भूला नहीं। हाथाजोड़ी की वह तथाकथित महिमा भी मुझे कभी—कभी चंचल कर देती थी। बहुत दिनों बाद में कानपुर आया तो एक तांत्रिक वस्तुयें बेचने वाले से भेंट हुई। मैंने उससे हाथाजोड़ी मांगी। तब तक मैंने उसे कभी देखा नहीं था, इसलिए पहिचान भी नहीं थी। मोली द्वारा बतायी गयी रूप—रेखा स्मृति में थी। उस विक्रेता ने मुझे अनुरोध पर एक हाथाजोड़ी दी। पैसे चुकाकर मैं उसे अपने घर ले आया। रूपरेखा में मोली द्वारा बताये गये चिन्ह उसमें थे, इसलिए शंका की कोई बात नहीं थी। वह असली हाथाजोड़ी थी, इसमें संशय नहीं। यह तो बाद में पता चला कि वह असली होकर भी— पूरी नहीं, अधूरी थी। उसमें दो भुजाएं नहीं थी, बल्कि उसमें एक ही भुजा थी। खैर, मैं उसे ले आया और जैसी कुछ विधि तब तक मैंने पढ़ी—सुनी थी, तदनुसार उसे शोधित करके रख लिया। बाद में मुझे किसी अधिकारी से काम पड़ा। समस्या जटिल थी। मैंने वह हाथाजोड़ी जेब में रख ली और जिस अधिकारी के पास गया। आश्चर्यमय प्रसन्नता से मैं खिल उठा, जब अधिकारी ने मेरे प्रति बहुत अनुकूल व्यवहार किया। बाद में भी कई बार उसको लेकर कई जगहों पर गया। लगभग सर्वत्र सफलता मिली। अगर एक—दो जगह भेंट न हुई या काम न बना, तो भी कम—से—कम इतना तो रहा कि काम बिगड़ने नहीं पाया। लाभ नहीं हुआ, तो हानि भी नहीं हुई। बाद में भेंट होने पर संबंधित व्यक्ति, अधिकारी मेरे अनुकूल रहे। इस तरह प्रत्यक्ष प्रमाण पाकर मैं आश्वस्त हो गया, बल्कि निश्चित धारणा बना ली कि यदि हाथाजोड़ी निर्दोष हो, शुभ—मुहूर्त में लायी जाय और विधिवत इसको पूजन द्वारा सिद्ध कर लिया जाय तो भौतिक जगत की अनेक कठिनाईयाँ और जीवन की विधिवत् समस्याओं का समाधान पाया जा सकता है।

वस्तुगत परिचय :—

हाथाजोड़ी पौधे की जड़ है—यह तथ्य निर्विवाद है। परंतु उस पौधे का क्या नाम है, कहाँ होता है, रूपरेखा कैसी है— इस विषय में मतभेद है। मैंने 2—3 पुस्तकें ऐसी देखी हैं, जिनमें 'हाथाजोड़ी' के पौधे का मनचाहा नाम दे दिया गया है। एक सज्जन ने लिखा है— यह जड़ी ब्रह्मदण्डी पौधे से प्राप्त होती है और यह ब्रह्मदण्डी वही पौधा है, जिसे हम निर्गुण्डी कहते हैं। किंतु यह विवरण नितांत अशुद्ध, भ्रामक और कल्पना आधारित और मिथ्या है। ब्रह्मदण्डी और निर्गुण्डी दोनों भिन्न वनस्पतियाँ हैं। इनके पौधे— फूल, पत्ती, रंग—गुण, प्रभाव सब एक—दूसरे से नितांत भिन्न होते हैं। और जहाँ तक हाथाजोड़ी की बात है, उसका इन दोनों में से किसी का भी—दूर का भी रिश्ता नहीं है। वह न तो निर्गुण्डी की जड़ है, न ब्रह्मदण्डी की। उसके पौधे का अस्तित्व सर्वथा अलग—स्वतंत्र है।

मैंने इसके पौधे को नहीं देखा, परंतु अध्ययन और अनुभव से मानता हूँ कि यह एक वन्य वनस्पति है, जो सर्वत्र सुलभ नहीं है। भूमि, लोभ और विकास—व्यामोह ने आज के युग में प्रकृति का रूप ही विकृत कर दिया है। क्या समाज, क्या शासन—दोनों ही पर्वत—वनों को विलुप्त करने पर सन्नद्ध हैं। फलस्वरूप वन और उनमें उत्पन्न होने वाली वनस्पतियाँ (जीव—जंतु भी) लुप्तप्रायः हो चले हैं। और तो और, कई प्रकार की घासों भी अलभ्य हो गयी हैं, जिन्हें चरकर पहले हमारे पशु आनी क्षमता और वंश परम्परा को सुरक्षित रखते थे। अस्तु, हाथाजोड़ी का पौधा मध्य प्रदेश और राजस्थान के कुछ भागों में अपेक्षाकृत सुलभ है, वैसे तो कहीं भी मिल सकता है। फिर भी है, यह दुर्लभ वनस्पति। जड़ी—बूटी के विक्रेता, सपेरे, तांत्रिक और वन्य जातियों के लोगों—नट, भोटिया, कंजर, मदारी, कपरिबा आदि से बात करने पर मिल जाती है। पहले बहुत सस्ती थी, परंतु पुस्तकों द्वारा इसकी महिमा, गुणवत्ता और बहुउपयोगिता का प्रचार हो जाने से जब बेचने वाले भी चतुर हो गये हैं और मनमानी कीमत वसूल करते हैं। मैंने इसे एक—सौ रुपये से भी अधिक दामों में बिकते देखा है।

अपने पौधे की जड़ में इसकी दो शाखायें दोनों हाथ फैलाये ऋतु रेखा सी बनती रहती है। जानकार लोग इसे खोदकर उसी गीली (हरी मुलायम) स्थिति में दोनों भुजाओं को समेटकर एक में मिला देते हैं। इस तरह दोनों की दायाँ—बायाँ फैली भुजाएं सामने एक सीध में आकर अंजलि—बद्ध रूप में हो जाती हैं। दोनों हाथों में हथेलियाँ और उन पर उँगलियाँ होती



प्रस्तुति :— श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०— हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥



29

तांगौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



हैं। ये उंगलियाँ भीतर की ओर मुड़ी हुई बंधी मुट्टी के रूप में दृष्टिगोचर होती हैं। यह दृश्य बड़ा सुंदर, कौतूहलकारी और स्मरणीय होती है। यही असली हाथाजोड़ी है, जो विभिन्न तांत्रिक प्रयोगों के लिए विख्यात है।

यह बात अलग है कि जलवायु और मिट्टी के भेद से, विभिन्न स्थानों में हाथाजोड़ी की रूपरेखा में समता होते हुए भी आकार और वर्ण (रंग) का अंतर होता है। रूपरेखा में यद्यपि सामान्य समानता रहती है, परंतु गौर से देखें तो पता चलता है कि जैसे हर आदमी का चेहरा भिन्नता लिए होता है, वैसे भी हर हाथाजोड़ी की बनावट (रूपरेखा) में कुछ-न-कुछ अंतर अवश्य रहता है। लेकिन उससे कोई अंतर नहीं पड़ता। वह अपने में सर्वांग, संपूर्ण हो-यही पर्याप्त है। छिन्न, भग्न, कटी, टूटी, सच्छिद्र, विकृत हाथाजोड़ी निकृष्ट मानी जाती है। सुंदर, सुडौल, पुष्ट, सर्वांगपूर्ण गौर वर्ण, आभायुक्त, आकर्षण और सुदृढ़ हाथाजोड़ी सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। परंतु पानी में भीगने पर खराब हो जाती है, अतः पानी से बचाना चाहिए। आकार की श्रेष्ठता इसके गुणों को भी श्रेष्ठता प्रदान करती है। छोटी हो या बड़ी उसका सुडौल और सम्पूर्ण होना ही प्रमुख गुण है। मैंने एक बार लहसुन के बड़े जवे के समान, बहुत ही छोटी किंतु अति सुंदर हाथाजोड़ी देखी थी। पास में पैसे कम होने के कारण उसे खरीद न पाने का परिताप आज भी सालता रहता है। इसी प्रकार एक बार एक बाबा ने प्रसन्न होकर मुझे भेंट स्वरूप एक बहुत बड़ी सर्वांग, सुंदर, पुष्ट हाथाजोड़ी दी थी। मेरे एक मित्र महोदय भी वहाँ बैठे थे। उन्होंने लोभवश वह मुझसे मांग ली। धर्मसंकट में पड़कर मैंने उन्हें वह दे दी। इतनी बड़ी हाथाजोड़ी मैंने आज तक नहीं देखी थी। बाद में उस बाबा को पता चला तो उन्होंने मेरी बहुत भर्त्सना की—“बाबूजी, आपकी किस्मत ने साथ नहीं दिया, इसलिए वह आपके हाथ से निकल गयी। उस मैंने काफी कीमत पाकर भी नहीं बेचा था। वह दुर्लभ थी.....आपके मित्र बड़े चालाक निकले, वह आपकी सज्जनता को लूट बैठे.....खैर, अब जो होना था, वह हो गया। आप कहीं से एक छोटी-मोटी ले आयें और उसे पास रखें। बहुत बढ़िया चीज है, आपको फायदा होगा।

अस्तु, वनस्पति जगत में हाथाजोड़ी एक बहुत ही अद्भुत, चमत्कारी दिव्य शक्ति संपन्न और तांत्रिक प्रयोगों के लिए निश्चित रूप से प्रभावशाली वस्तु है। किंतु अन्य वनस्पतियों की भांति इसे किसी शुभ मुहूर्त में विधिवत् निमंत्रण देकर ले आना असंभव जैसा है, क्योंकि इसका पौधा सर्वत्र सुलभ नहीं होता। कहीं हो भी तो उसे पहचाने कौन? यों वनस्पति विज्ञानियों ने उसके बारे में संकेत दिए हैं कि इस पौधे के पत्ते एक ओर हरे, पीठ की ओर सफेद होते हैं, जिसे रोमावली भी प्राप्त होती है। पौधे की टहनी पर गुलाबी रंग का फूल होता है, परंतु किसी-किसी पौधे पर नीली रंगत के फूल भी पाये जाते हैं। यह पौधा प्रायः झाड़ियों के मध्य उगता है, और आर्द्र (भीगी) जमीन इसके लिए बहुत अनुकूल पड़ती है। इसकी जड़ गोलाई लिए (शकरकंद जैसी) होती है। जो सामान्यतः श्याम वर्ण की देखी जाती है। इसी जड़ से कोई शाखा निकलकर हाथाजोड़ी का रूप धारण कर लेती है। इसकी बनावट अद्भुत और कलापूर्ण होती है। बंद मुट्टी के आकार में इसकी अंगुलिया कौतूहलकारी होती हैं। भारत में मध्य प्रदेश और राजस्थान में इसके पौधे को ‘बिरवा’ कहते हैं।

जो भी हो, यह विलक्षण वस्तु है और इसे कहीं से भी (जनजातियों, जंगली जातियों, पंसारियों, तांत्रिकों अथवा किसी से भी) खरीद लायें और किसी शुभ मुहूर्त में विधिवत् पूजन करके रख लें। प्रकारान्तर से यह अनेक कार्यों की सिद्धि में सहायक होती है।

हाथाजोड़ी की पूजन विधि :— किसी ‘रविपुष्य योग’ के दिन प्रातः नहा-धोकर शुद्ध स्थान पर बैठें। लाल कपड़े के आसन पर हाथाजोड़ी को भीगे कपड़े से पोछकर (स्नान कराकर) रख दें। फिर उस पर सिंदूर, कपूर, लौंग, इलायची, अक्षत चढ़ायें। लाल फूल और लाल चंदन भी चढ़ा सकते हैं। इसके बाद लोबान की धूप दें और आरती उतारें। तत्पश्चात् कोई सिक्का चढ़ाकर, इसके मंत्र को जप करें। जप संख्या अधिकतम होनी चाहिए। कम से कम 11 माला या फिर 21, 51, 101 माला जो भी संभव हो जपें।

जप पूरा हो चुकने पर, सामान्य हवन सामग्री में लोबान या गूगल मिलाकर, असंभव हो तो केवल लोबान या गूगल से ही पुनः 21 बार मंत्र पढ़ते हुए, आहुति देकर हवन करें। हवन पूरा हो चुकने पर उसे उठाकर कहीं सुरक्षित रख दें और किसी एक ब्राह्मण-बालिका को भोजन कराकर दक्षिणा दें। इस विधि से यह शुद्ध और प्रभावशाली हो जाएगी।

हाथाजोड़ी का प्रभाव :— इस जड़ी का सर्वाधिक प्रभाव इसकी ‘सम्मोहनशीलता’ है। साधक इसे लेकर कहीं भी जाए—उसका विरोध नहीं होगा। संबंधित व्यक्ति अनुकूल आचरण व्यवहार करेगा। वशीकरण, सम्मोहन, आकर्षण, धन-वृद्धि, सुरक्षा आदि के





तांजोक्त वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



लिए यह परम उपयोगी वस्तु है। किंतु प्रेम और सम्मोहन वशीकरण के लिए इसका दुरुपयोग नहीं करना चाहिए। कारण कि यह मनोरथ की पूर्ति भले ही कर दे, परंतु समाज विरोधी और अनैतिक कार्य का फल अंततः प्रयोक्ता को भोगना ही पड़ता है। अतः इसके प्रयोग में विवेकपूर्ण औचित्य का ध्यान रखना चाहिए।

मंत्र :- हाथाजोड़ी में चामुण्डा देवी का वास होता है। यह देवी दुर्गा का एक रूप है। चण्डी, चण्डिका, चामुण्डा, दुर्गा, काली आदि ये सब एक ही शक्ति के विभिन्न रूप हैं। इनमें से किसी भी शक्ति की साधना करें, दुर्गाजी की कृपा प्राप्ति होगी। तो भी हाथाजोड़ी के लिए चामुण्डा देवी अथवा महाकाली जी के मंत्र विशेष प्रभावी होते हैं। साधकजन निम्नांकित में से कोई एक मंत्र जपकर हाथाजोड़ी सिद्ध कर सकते हैं। ध्यान रहे कि यह सारी साधना एकांत में और गुप्त रूप से करनी चाहिए। मंत्र इस प्रकार हैं :-

1. ॐ चामुण्डायै नमः।
2. ॐ महाकाल्यै नमः।
3. ॐ नमश्चण्डिकायै नमः।
4. ॐ किलि किलि स्वाहा।
5. ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे।

प्रयोग भेद :-

1. **धन वृद्धि के लिए :-** पहले हाथाजोड़ी की विधिवत् पूजा करके इसे एक डिब्बी में रख दें। बाद में प्रतिदिन पूजा के समय इसे सामने रखकर धूप-दीप दें, कोई एक सिक्का चढ़ा दें और 'ॐ चामुण्डायै धनं देहि' मंत्र का 108 बार (एक माला) जप करें। जप साधना के दिनों में संयम से रहें। थोड़े दिनों की साधना से ही आर्थिक परिवर्तन दृष्टिगोचर होगा। शत्रुओं से सुरक्षा के लिए भी यह साधना परम उपयोगी है।

2. **वशीकरण के लिए :-** उपरोक्त विधि से पूजन करके परम श्रद्धापूर्वक इस मंत्र का जप करें -

"ॐ चामुण्डा देवी मे वश्यं कुरु कुरु स्वाहा।"

यहाँ रिक्त स्थान पर वांछित व्यक्ति का नाम लें। यदि मंत्र को इस रूप में जपने में असुविधा हो रही हो तो सामान्य भाषा में अपनी कामना-प्रार्थना एक वाक्य में निरंतर जपते रहें :- हे माता चामुण्डाजी..... को मेरे वशीभूत कर दीजिए।

ध्यान रहे कि इस वाक्य में कोई परिवर्तन न हो, अन्यथा ध्वनि दोष के कारण साधना खण्डित हो जाएगी। मंत्र सिद्ध हाथाजोड़ी को गले या भुजा पर धारण करने से भी वशीकरण होता है।

3. **सम्मोहन के लिए :-** लगभग उपर्युक्त विधि से ही यह प्रयोग भी होता है। इन सभी कार्यों के लिए मंत्र जप की एक सरलतम विधि यह है कि साधक, पूजनोपरांत देवी से प्रार्थना करे- 'हे माताजी! मेरी..... समस्या है। आप कृपा करके मेरा यह कार्य पूर कर दीजिए। मेरा यह संकट दूर कर दीजिए, अमुक व्यक्ति..... को मेरे अनुकूल कर दीजिए, मेरी दरिद्रता का निवारण कीजिए.....आदि।

इसके बाद हाथ जोड़कर प्रणाम करें और पूर्वोक्त पांच मंत्रों में से कोई भी एक मंत्र जपना प्रारंभ कर दें। नियमित रूप से एक निश्चित संख्या में प्रतिदिन मंत्र जप किया जाय, तो उसका अद्भुत प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

4. **औषधीय प्रयोग :-** आयुर्वेद और तंत्र शास्त्र में हाथाजोड़ी को अनेक रोगों के निवारण में प्रयोजनीय कहा गया है। कुछ प्रमुख समस्याओं में इसकी प्रयोग विधि निम्न प्रकार से की जा सकती है। :-

हाथाजोड़ी को पीसकर लेप बनायें। यह लेप पेट पर चुपड़कर लेटे रहें। इसके प्रभाव से मलावरोध (कब्ज) का विकार नष्ट हो जाता है।

5. **प्रसव सुविधा :-** यदि प्रसव काल में किसी महिला को कष्ट हो रहा हो, तो हाथाजोड़ी को पानी में घिसकर, चंदन की भांति लेप तैयार करें। यह लेप गर्भिणी की नाभी पर अथवा नाभी, पेट, पेडू के पूरे क्षेत्र पर चुपड़ दें। इसके प्रभाव से वह सुखपूर्वक प्रसव कर सकेगी।



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



6. **गर्भ निवारण** :- हाथाजोड़ी का चूर्ण सेवन करने अथवा गर्भिणी के पेट पर हाथाजोड़ी घिसकर लेप करने से गर्भ नष्ट हो जाता है। किंतु यह प्रयोग बहुत सावधानी से, किसी विशेष संकट की स्थिति में ही, चिकित्सक से परामर्श लेकर करना चाहिए। कारण कि किसी-किसी महिला को इसके प्रभाव से, गर्भपात के बाद कुछ दिनों के लिए मूर्च्छा (हिस्टीरिया) की व्याधि ग्रस्त कर लेती है। वैसे, गर्भपात जैसे घातक प्रयोग न किए जाएं, वही उत्तम है।
7. **मूत्रावरोध निवारण** :- किसी भी कारण से यदि पेशाब बंद हो गया हो तो हाथाजोड़ी को पानी में घिसकर, इसका लेप नाभि से पेड़ तक (मूत्राशय के ऊपर) करें। इसके प्रभाव से मूत्रावरोध दूर होकर, पेशाब खुलासा उतरने लगेगा।
8. **मासिक स्राव शोधन** :- अनियमित, अवरुद्ध, अल्प, मासिक स्राव की स्थिति में—हाथाजोड़ी का चूर्ण कपड़े की पोटली द्वारा जनेन्द्रिय में रखें — समस्त विकार दूर होकर, मासिक स्राव खुल जाएगा।



❀ गोरोचन ❀

सामान्य परिचय :- तंत्र शास्त्र में जिन अनेक वस्तुओं को अति आवश्यक और निश्चित प्रभाव बताया गया है, उसमें गोरोचन भी एक पदार्थ है। यह धातु अथवा वनस्पति न होकर गाय के शरीर से उत्पन्न होने वाला एक पदार्थ है। वस्तुतः यह गाय का 'पित्त' है। जैसे मानव तथा अन्य जीवों में चर्बी, हड्डी, मांस, रक्त आदि उनकी शरीर रचना के आधार हैं, वैसे ही 'पित्त' भी एक विशेष पदार्थ (शरीर का अंग) है। गोरोचन नाम का यह पदार्थ, जो गौ का पित्त माना जाता है, गाय के सिर में होता है। यह पीले रंग का एक टुकड़ा जैसे (गोल, चपटा, लंबा, तिकोना, चौकोर—किसी भी आकृति में) दीखता है और मरी हुई गाय को चीरने पर उसके मस्तक से निकलता है। तत्काल मस्तक चीरे जाने पर यह मुलायम (पनीर या मोम की तरह) होता है। बाद में सूखकर—कड़ी पपड़ी या कंकड़ जैसा, सूखी सरेस जैसा हो जाता है।

शरीरधारियों से प्राप्त कुछ वस्तुएं बहुत पवित्र और उपयोगी होती हैं। इस कारण से वे मूल्यवान वस्तुओं की श्रेणी में गिनी जाती हैं। हाथी दाँत, मृगचर्म, मकरध्वज (घड़ियाल की नाभी), कस्तूरी आदि ऐसे ही पदार्थ हैं। मीनमुक्ता, गजमुक्ता, शूकरमुक्ता भी ऐसी ही दुर्लभ वस्तुएं हैं। इतना दुर्लभ तो नहीं, फिर भी कठिनाई से और कम मात्रा में प्राप्त होने वाला एक पदार्थ यह भी है—गोरोचन।

पर्यायवाची :- आध्यात्म के क्षेत्र में (पूजा—पाठ, तंत्र—मंत्र) में गोरोचन को बहुत उच्च स्थान प्राप्त है। यह अनेक प्रयोगों में काम आता है। तांत्रिक ग्रंथों में इसके कई नाम प्राप्त होते हैं। कमल, जल, वायु, सूर्य, चंद्रमा आदि की भांति इसे भी अनेक पर्यायवाची शब्दों से प्रयोज्य बताया गया है। इसके कुछ नाम (पर्याय) इस प्रकार हैं :-

1. **शिवा** :- सदैव कल्याणकारी होने से यह 'शिव' प्रभाव वाली अर्थात् 'शिवा' मानी गयी है। हालांकि पर्याय शब्द केवल साहित्यिक दृष्टि से ही विवेच्य और प्रयोज्य है। व्यावहारिक क्षेत्र में यह गोरोचन ही कहा जाएगा।
2. **मंगला** :- यह जहाँ भी रहे, सदैव मंगलमय वातावरण की सृष्टि करता है। वस्तु रूप में इसका संबोधन (शिवा, मंगला आदि) स्त्रीलिंग में होता है, जबकि 'गोरोचन' संज्ञा में यह पुरुष—वाचक है। मंगला नाम से प्रसिद्ध यह वस्तु जहाँ भी रहे, मंगलमय वातावरण बनाए रहती है। इसके रहते अशिव, अमंगल, अशुभ प्रभाव दूर ही रहेगा।
3. **वन्द्य (वन्दनीया)** :- गोरोचन का एक नाम यह भी है—वन्दनीया। कारण कि भक्त साधकजन पूजा—अर्चना के समय इसे आराध्यदेव को अर्पित करते हैं। तिलक लेपन बनाने के लिए गोरोचन तांत्रिक जगत की सर्वश्रेष्ठ वस्तु है। भगवान श्रीकृष्ण इसे प्रेम से तिलक रूप में धारण करते थे।
4. **मेध्या** :- शरीर और मेधाशक्ति को (प्रयोग भेद से) बढ़ाने का गुण रखने के कारण यह 'मेध्या' भी कहलाती है। इस वस्तु को अनेक प्रकार की औषधियों में प्रमुख घटक की मान्यता प्राप्त है।
5. **भूत—निवारणी** :- गोरोचन जहाँ भी रहेगा—स्थान, वस्तु, व्यक्ति, प्रतिमा में कहीं भी दैवी शक्ति बनाए रखेगा। इसके रहते वहाँ भूत—प्रेतादि की बाधा भूलकर भी नहीं आती। अनेक प्रकार के दुष्टात्मा, प्रेत, वायव्य दोष, अतृप्त और अकाल मृत्यु के ग्रास बने दीन—दरिद्र प्राणियों की भटकती आत्माएं — ये सब गोरोचन की गंध, रंग, स्पर्श और दर्शन से ही भाग जाते हैं।





6. **गो-पित्त :-** गोरोचन शब्द के बाद इसका सर्वाधिक प्रचलित नाम 'गो-पित्त' है। क्योंकि यह वस्तुतः गो-पित्त (गाय का पित्त) ही है। इस प्रकार गोरोचन के अनेक नाम हैं, जो इसके गुणों पर आधारित हैं।

यंत्र आदि की साधना में, यंत्र लेखन में तिलक रचना में, षट्कर्म और दशकर्म के अनेक प्रयोगों में तथा कितनी ही औषधियों के निर्माण में — गोरोचन का प्रयोग होता है।

यंत्र रचना में 'अष्टगंध' स्याही में इसका प्रयोग किया जाता है। अष्टगंध कोई एक वस्तु नहीं है, अपितु यह आठ वस्तुओं का मिश्रण है। अष्टगंध के आठों घटक जब तक शुद्ध और पूर्ण रूप में न मिलाये जायें— अष्टगंध शुद्ध और पूर्ण प्रभावी नहीं होगा। अष्टगंध की संरचना में घटक भेद भी है। कुछ आचार्यों ने जो आठ वस्तुएं प्रयोज्य बतायी हैं, दूसरे आचार्यों ने उनमें कुछ परिवर्तन कर दिया है। पाठकों की जानकारी के लिए अष्टगंध का विवरण इसी पुस्तक में अन्यत्र (परिशिष्ट) वर्णित है।

यह तथ्य सर्वविदित है कि जिन यंत्रों की रचना में अष्टगंध का विवरण है, वे इसके बिना पूरे नहीं होते। और जिस अष्टगंध में गोरोचन प्रयुक्त होगा, उससे निर्मित यंत्र अवश्य ही प्रभावशील होगा। परंतु यह सारे लाभ तभी संभव है, जब गोरोचन असली हो। आज के नकली युग में जब नमक ही शुद्ध नहीं मिलता, तो फिर गोरोचन और कस्तूरी जैसी अलभ्य वस्तुओं का मूल शुद्ध रूप में प्राप्त होना कठिन है। फिर भी, अनेक संस्थान, विक्रय केन्द्र और व्यक्ति इन्हें मौलिक रूप में बेचते हैं। जब तक प्रयोज्य वस्तुओं में शुद्धता, पूर्णता नहीं होगी—वह दोषमुक्त नहीं होगी। इससे वांछित प्रभाव की आशा करना, स्वयं को भुलावे में डालना है।

यहाँ हम साधकों के हितार्थ गोरोचन के कुछ अति प्रभावी और सहज—साध्य तांत्रिक प्रयोग लिख रहे हैं। यदि आपको कहीं से शुद्ध गोरोचन मिल जाता है और आप उसका विधिवत प्रयोग करते हैं तो कोई कारण नहीं कि आपको अपने उद्देश्य में सफलता नहीं मिले। श्रद्धा, संयम, नियम और धैर्य—यह प्रत्येक साधना में आवश्यक होता है। अतः जब भी गोरोचन तंत्र का प्रयोग करें, इन बिंदुओं पर ध्यान दें —

कल्याणकारी प्रयोग :- शुद्ध गोरोचन ले आयें। रविपुष्प या गुरुपुष्प के दिन उसे धूप—दीप और इष्टदेवता के मंत्र से शोधित करके सोने या चांदी के ताबीज में भर लें। इस ताबीज को भी पहले धो—पोछकर, धूप—दीप से शुद्ध कर लेना चाहिए। गोरोचन भरने के बाद उसे सुरक्षित रूप में बंद कर दें। चांदी की कसे हुए ढक्कन वाली डिब्बी भी प्रयुक्त हो सकती है। पूजनोपरांत यह ताबीज गले में, भुजा में, कमर में—कहीं भी धारण कर लें। धारण न करके, यदि घर में कहीं सुरक्षित रख दिया जाय तो भी इसका प्रभाव सक्रिय रहता है। गोरोचन की यह डिब्बी (ताबीज) जहाँ भी रहेगी, वहाँ के सारे दुष्प्रभाव, अमंगल समाप्त हो जाएंगे। मंगलमय वातावरण और शुभ प्रभाव की सृष्टि में यह प्रयोग निश्चित रूप से फलदायी होता है।

ग्रहदोष निवारक प्रयोग :- भौतिक विज्ञान ने भी इस सत्य को स्वीकार किया है कि आकाश में स्थित तारा समूह की प्रकाश किरणें पृथ्वी के प्राणियों को प्रभावित करती हैं। आकाश में असंख्य तारे हैं। सामूहिक रूप में वे विभिन्न वर्गों में विभक्त हैं। नक्षत्र और राशि ऐसे ही तारा समूह हैं। ग्रह नामक तारे स्वयं में तो तारा हैं हीं, वे एक बहुत बड़े तारा—समूह का प्रतिनिधित्व भी करते हैं। इन ग्रहों की संख्या नौ है, जिनमें सात दृश्य हैं और दो अदृश्य हैं—छाया ग्रह। भौतिक विज्ञान में, खगोल शास्त्र भी नौ ग्रहों की उपस्थिति और उनका विकरणीय प्रभाव स्वीकार करता है। भारतीय संस्कृति और ज्योतिष शास्त्र के अनुसार, आकाश स्थित नवग्रहों के नाम इस प्रकार हैं :-

1. सूर्य 2. चंद्रमा 3. मंगल 4. बुध 5. बृहस्पति 6. शुक्र, 7. शनि, 8. राहु एवं 9. केतु

जिस समय कोई प्राणी जन्म लेता है, ग्रहों की तत्काल स्थिति उनकी पारस्परिक और पृथ्वी से दूरी, समय और प्रकाश का माप—यह सब उनके भावी जीवन, शरीर, स्वास्थ्य, रुचि, प्रवृत्ति, स्वभाव और धारणा शक्ति को प्रभावित करते हैं। यद्यपि यह नियम समस्त प्राणिजगत पर लागू होता है, परंतु हम यहाँ अकेले मानव के संदर्भ में ही लिख रहे हैं, क्योंकि मानव सृष्टि का सबसे चैतन्य, बुद्धिमान और विवेकवान प्राणी होता है।

प्रत्येक बालक अपने भावी जीवन में, अपने जन्मकाल की ग्रहीय स्थिति से अवश्य ही परिचालित प्रभावित रहता है। जन्म काल की स्थितियों में लग्न, वार, तिथि, मास, पक्ष, अयन, समय और नवग्रहों की उपस्थिति, दशा, दूरी, संयुति आदि का



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



विचार किया जाता है। सर्वाधिक प्रभाव लग्न का पड़ता है। इसके बाद नवग्रहों की प्रभावशीलता व्यक्ति को नियंत्रित करती है। बल्कि ग्रहीय स्थिति से लग्न का प्रभाव भी परिवर्तित हो जाता है। कोई भी जन्मांग-चक्र (कुण्डली) देखें, कहीं विघ्नकारी ग्रह अवश्य ही दिख पड़ेगा। वास्तविकता तो यह है कि सैकड़ों में कहीं एक कुण्डली ही सशक्त होती है, वह भी सर्वांग नहीं। कम-से-कम 10-5 प्रतिशत कोई उसमें भी होगा। फिर भी कुण्डली के 12 भावों में स्थित नवग्रहों की उपस्थिति का अनुपात (शक्ति की दृष्टि से) यदि सबल है, तो वह जातक अपेक्षाकृत सुखी होगा।

तात्पर्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति नवग्रहों के प्रभाव से परिचालित, पोषित और पीड़ित होता रहता है। यद्यपि शनि, मंगल, सूर्य, राहु और केतु—ये ग्रह क्रूर, कठोर और कष्टप्रद माने जाते हैं। शेष को शुभ और सौम्य (सोम, बुध, गुरु और शुक्र) कहा गया है। परंतु यथार्थ की कसौटी पर परखें तो पता चलता है कि समय और स्थिति के आधार पर प्रत्येक ग्रह शुभ और अशुभ दोनों तरह के फल देते हैं। स्थान भेद और संग भेद से कोई ग्रह दुःखद, मारक अथवा पोषक और सुखद हो जाता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि एक ग्रह शुभ स्थिति में है, परंतु दूसरे का संपर्क, स्पर्श, छाया अथवा दृष्टिपात उसके शुभ प्रभाव को समाप्त कर देता है। ऐसी स्थिति में जातक अपने शुभ ग्रह के प्रभाव से वंचित हो जाता है। मैंने ऐसे कई जन्मांग चक्र देखे हैं, जिनमें विडम्बनात्मक स्थिति थी।

यह एक अनुभूत और बहुविख्यात प्रयोग है कि गोरोचन में नवग्रहों के दोष को निवारण करने की क्षमता निहित होती है। इसके लिए साधक को चाहिए कि वह 'रविपुष्प योग' के दिन गोरोचन को गंगाजल से स्नान (स्पर्श मात्र) कराकर, धूप-दीप द्वारा शोधन करें, तत्पश्चात् उसका एक टुकड़ा चांदी के नये शोधित कवच से भरकर सुरक्षित बंद लें और दूसरा टुकड़ा भी किसी डिब्बी में सुरक्षित रखें। उसे नित्य स्नानोपरांत घिसकर चंदन की भांति माथे पर तिलक लगाता रहे। कवच को किसी भी रूप में धारण कर लें। इस प्रकार गोरोचन का कवच और तिलक धारण करने वाला व्यक्ति नवग्रहों के कोप से मुक्त हो जाता है।

प्रेतबाधा निवारण :- गुरुपुष्प योग के दिन भोजपत्र पर, स्नान पूजा से निवृत्त होकर गोरोचन के लेप से, अनार की कलम से 'ह्रीं' लिखें। फिर से धूप-दीप देकर अपने इष्टदेव का ध्यान करते हुए अथवा शिवजी या दुर्गाजी की स्तुति करते हुए भोजपत्र का टुकड़ा लाल वस्त्र में बांधकर या चांदी अथवा तांबे के ताबीज में भरकर रोगी को पहना दें। यह प्रयोग समस्त प्रकार के भूत-प्रेतावेश, प्रेत-पीड़ा, वायव्य दोष आदि को दूर कर देता है।

धन-समृद्धिकारी प्रयोग :- रुपया, पैसा, धन-दौलत, सोना-चांदी और अन्न भंडार यही सब समृद्धि के आधार हैं। इनके अभाव में जीवन, विपन्न, दरिद्रता ग्रस्त और दुर्भाग्यपूर्ण हो जाता है। भोजन, वस्त्र, स्वास्थ्य, प्रसन्नता, संपन्नता, सम्मान और विचार शक्ति—यह सब क्षीण होने लगते हैं। फलतः ऐसा व्यक्ति, कुंठा, नैराश्य और अवसाद की पीड़ा सहते-सहते अन्ततः विक्षिप्त हो जाता है। इसी मनोदशा में कुछ लोग अपराध मार्ग पर चल पड़ते हैं। धनाभाव से पीड़ित होने के कारण वे समाज-द्रोही हो जाते हैं और अनैतिक कार्यों द्वारा धनार्जन करके अपने अभावों की पूर्ति और प्रतिशोध भावना को शांत करते हैं। आशय यह है कि धन मानव जीवन की पूर्ति में सबसे बड़ा अवलम्ब है। परंतु वास्तविकता यह है कि अधिकांश परिवार धनाभाव से पीड़ित रहते हैं। ऐसे लोगों के लिए गोरोचन बहुत लाभकारी है। गुरुपुष्प के दिन इसे पूजनोपरांत गल्ला, बक्सा, तिजोरी या गोलक आदि में रख दें। यह प्रयोग निश्चितरूपेण धन-वर्द्धक होता है।

वशीकरण प्रयोग :- रविपुष्प के दिन से गोरोचन का तिलक माथे पर लगाना प्रारंभ करें। फिर नित्य स्नानोपरांत लगाते रहें। इसके रहते व्यक्ति जहाँ भी जाए, इसका प्रभाव अवश्य पड़ता है।

सौन्दर्य प्रसाधन के रूप में :- सौन्दर्य प्रेम सभी में होता है। पशु-पक्षी और कीट-पतंग तक इसके प्रति मोहासक्त रहते हैं। मानव सर्वाधिक तर्कशील होता है। अतः वह नाना-प्रकार के प्रसाधन और अलंकरण अपने सौन्दर्य की वृद्धि के लिए प्रयोग में लाता है।

हमारे देश में उबटन का प्रयोग सौन्दर्य वृद्धि और वर्ण शोधन के लिए प्राचीन काल से होता आ रहा है। चिरौंजी, बादाम, सरसों, हल्दी, चंदन, केसर, जौ का आटा आदि पदार्थ उबटन के रूप में सौन्दर्य वर्द्धक माने जाते हैं। इधर, पश्चिमी सभ्यता ने हम भारतीयों की अस्मिता कीलित कर रखी है। फलतः हमने अपने स्व को भूलकर परिधान, प्रसाधन, भोजन,





तांजौक्त वनस्पतियाँ : वनस्पति तंत्र



चिंतन, क्रिया—कलाप सब में भारतीयता की उपेक्षा करके पश्चिमी सभ्यता, संस्कृति प्रसाधन और परिधान ग्रहण कर लिया है और इस मानसिकता में स्वयं को गौरव—गर्वित अनुभव करते हैं।

आज तरह—तरह के लोशन, पाउडर, क्रीम आदि प्रचलित हैं, जो रंगशाला के अभिनेता जैसा कृत्रिम रूप विन्यास देकर अंततः हमारी त्वचा को, हमारी अर्थ—व्यवस्था को और अंत में हमारी शांति और बौद्धिक शक्ति को क्षीण कर देते हैं। फिर भी हम हैं कि नित्य नये उत्पादन को खोजने में बाजार छानते रहते हैं और यदि संयोग से कोई 'इम्पोर्टेड आइटम' मिल गया तो अभूतपूर्व संतुष्टि का अनुभव करते हैं। परंतु 'गोरोचन' के सामने संसार के सभी सौन्दर्य प्रसाधन व्यर्थ हैं। गोरोचन का लेप लगाने से सौन्दर्य में चमत्कारी वृद्धि हो जाती है। इसे अन्य घटकों के साथ मिलाकर उबटन के रूप में अथवा घिसकर लेप के रूप में लगाना चाहिए।

अपस्मार नाशक :- गुलाबजल में दो माशा गोरोचन घिसकर तीन दिनों तक तीन—तीन बार पिलाने से अपस्मार (मिर्गी), हिस्टीरिया, मूर्च्छा, चक्कर आदि दोष मिट जाते हैं। यह प्रयोग किसी रविवार या मंगलवार से प्रारंभ करें।

कृशता निवारण :- चार बादाम और चार जौ—भर गोरोचन एक साथ पीसकर या दूध में घिसकर 21 दिनों तक सेवन करें, साथ में दूध भी पीयें। यह प्रयोग शरीर की कृशता दूर करके उसे स्वस्थ और मांसल बना देता है। यह प्रयोग मंगलवार से प्रारंभ करना चाहिए।



गुंजा

सामान्य परिचय :- गुंजा एक वनलता की फली का बीज है। इसे गुंजा, चिरमिटी, घुंघुची, रत्ती आदि नामों से जाना जाता है। इसकी जड़ दीर्घजीवी होती है। फाल्गुन के बाद यह लता मुरझाने लगती है और गर्मी में सूखकर नष्ट हो जाती है। परंतु भूमि के नीचे इसकी जड़ें हरी रहती हैं। प्रथम वर्षा में धरती भींगते ही उस जड़ में अंकुर निकल आते हैं। इस तरह आषाढ़ में वह लता पुनः उग आती है और क्रमशः बढ़ती हुई, समीप के पेड़—पौधों पर चढ़कर ऊर्ध्वगामी हो जाती है।

गुंजा लता की पत्तियाँ इमली की पत्ती से साम्य रखती हैं। मटर अथवा सेम के जैसे फूल इसमें आते हैं, जो अपने गुलाबीपन के कारण प्रिय दीखते हैं। प्रायः आश्विन महीने में इस लता में फूल आते हैं और अगहन में इसकी फलियाँ दृष्टिगोचर होने लगती हैं। फलियाँ पककर चटक जाती हैं और उनके भीतर लगे हुए (कभी—कभी टूटकर नीचे गिरे हुए) घुंघुची के दाने स्पष्ट दीखने लगते हैं।

घुंघुची की दो जातियाँ हैं—लाल और सफेद। लाल घुंघुची की उत्पत्ति अधिक होती है। सफेद वाली की जाति की लता यदाकदा ही मिलती है। तांत्रिक प्रभाव की दृष्टि से दोनों ही प्रजातियाँ प्रयोजनीय हैं, परंतु श्वेत गुंजा (सफेद घुंघुची) को कुछ विशेष मान्यता प्राप्त है। लेकिन उसके अभाव में रक्त गुंजा से भी अनेक प्रकार के प्रयोग किए जा सकते हैं। उत्तमता और शक्ति की दृष्टि से श्वेत गुंजा को विशेष महत्व दिया जाता है, परंतु रक्त गुंजा भी लगभग वैसी ही होती है और श्वेत गुंजा की रिक्तता की पूर्ति करने में पर्याप्त सफल रहती है।

रत्ती अथवा घुंघुची माप—तौल की एक बहुत—ही छोटी इकाई है। जौहरी और सुनार लोग सोना—चांदी तथा रत्नादि की तौल में इसका प्रयोग बाट के रूप में करते हैं। कैरेट और मिली—ग्राम तो अभी आज—कल से ही चालू हुए हैं, परंतु भारतीय इतिहास में रत्ती का प्रयोग तौल के क्षेत्र में हजारों वर्षों से चला आ रहा है।

हिन्दू परिवारों में विवाह के समय वर को कंगज पहनाया जाता है, उसमें यह घुंघुची (लाल रत्ती) पिरोयी रहती है। वस्तुतः यह एक तांत्रिक प्रयोग है, जो वर की सुरक्षा—समृद्धि और सुखद दाम्पत्य के लिए संपन्न किया जाता है। इसे मनका के रूप में पिरोकर मालायें बनायी जाती हैं। आदिवासियों का यह प्रिय आभूषण है। वे हीरे—मोती की कद्र नहीं जानते, अतः गुंजा उनके लिए सर्वश्रेष्ठ रत्न है। उनकी इस मनोवृत्ति को नीतिकारों ने इस प्रकार वर्णित किया है :-

न वेत्ति यो यस्य गृणंप्रकर्ष, सतं यदा निन्दति नाऽत्र चित्रम्।



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥



35

तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



यथा किराती करिकुम्भ लब्धा, मुक्ता परित्यज्य विभर्ति गुञ्जाम् ॥

कहीं-कहीं उल्लेख मिलता है कि भगवान श्रीकृष्ण भी गुंजामाला धारण किया करते थे। अस्तु जो भी हो, गुंजा का उपयोग आभूषण (माला-कंगन) के रूप में होता ही है। भार तौलने में भी इसकी महत्वपूर्ण स्थिति रहती है और इन सबसे अधिक महत्व इसे तंत्र के क्षेत्र में प्राप्त है। गुंजा के बहुविध तांत्रिक प्रयोगों का वर्णन विभिन्न ग्रंथों में उपलब्ध होता है।

जैसा कि प्रारंभ में लिखा जा चुका है, गुंजा की दो जातियाँ होती हैं— लाल और सफेद। एक तीसरी जाति का उल्लेख भी कहीं-कहीं प्राप्त होता है—काली गुंजा। किंतु यह दुर्लभ है। अपवाद स्वरूप ही कहीं दिख पड़ती है। तंत्र साधना में उसे बहुत ही प्रभावशाली, उपयोगी, मूल्यवान और दुर्लभ कहा गया है। किंतु उसके स्थान पर सफेद और सफेद न मिलने पर लाल गुंजा के प्रयोगों का निदेश मिलता है। यहाँ हम पाठकों के लिए संक्षेप में घुंघुची की कुछ तांत्रिक विशेषताओं का उल्लेख कर रहे हैं।

औषधीय क्षेत्र में भी घुंघुची को स्थान प्राप्त है। यह घुंघुची दाना स्वयं में अमृत और विष दोनों का प्रभाव रखती है। इसी की जड़ को (अनेक विद्वान) मुलहठी कहते हैं। मुलहठी (मुरैठी) एक मीठी जड़ है, जो खाँसी, शक्ति-क्षय, कफ-विकार आदि के निवारण हेतु प्रयुक्त होती है। मुलहठी के रस से एक यूनानी दवा बनायी जाती है, जिसे 'रब्बेसूस' कहते हैं। यह खाँसी की श्रेष्ठ औषधि है। किंतु यहाँ हमारा प्रतिपाद्य विषय आयुर्वेद नहीं वरन् तंत्र है। अतः गुंजा संबंधी कुछ तांत्रिक प्रयोगों का वर्णन किया जा रहा है।

गुंजा मूल :- जिसे ऊपर मुलैठी या मुरैठी कहा गया है (भले ही वह मुरैठी किसी दूसरी लता की जड़ हो, यहाँ हम घुंघुची की जड़ का वर्णन कर रहे हैं।) उसे तांत्रिक विधि से प्राप्त करें। अर्थात् एक दिन पूर्व संध्या को लता के पास जाकर उसे विधिवत् निमंत्रण दे आयें। (निमंत्रण विधि के लिए देखें— वनस्पति तंत्र अध्याय 2 के प्रारंभ में बदरी बांदाल) फिर दूसरे दिन प्रातः जाकर उसे (गुंजा की जड़) ले आयें।

मूल प्राप्ति का मुहूर्त :- कोई भी कार्य हो, उसकी सफलता बहुत कुछ उसको प्रारंभ करने के मुहूर्त पर निर्भर करती है। कार्य-भेद, वस्तु-भेद और प्रयोग-भेद से, मुहूर्त का विचार अलग-अलग करना पड़ता है। गुंजा मूल प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित में से कोई भी एक मुहूर्त ले सकते हैं :-

1. रविपुष्य योग 2. शुक्र-रोहिणी योग (यदि ग्रहण पड़ रहा हो तो अति-उत्तम) 3. कृष्ण-अष्टमी-हस्त योग
4. कृष्ण-चतुर्दशी-स्वाति योग 5. कृष्ण चतुर्दशी-शतभिषा योग
6. अनेक विद्वान गुरुपुष्य योग को भी मान्यता देते हैं।

उपर्युक्त विवरण के अनुसार यदि निकट भविष्य में कोई अनुकूल मुहूर्त नहीं मिल रहा और साधक को तात्कालिक आवश्यकता है, तो वह स्थानीय पुरोहित से किसी शुभ-मुहूर्त की जानकारी (सिद्धियोग, सर्वार्थ- सिद्धियोग, अमृतयोग आदि) प्राप्त कर लें। फिर तदनुसार निमंत्रण के उपरांत दूसरे दिन प्रातः काल जाकर वही जड़ी ले आयें।

गुंजा के तांत्रिक प्रयोग :- गुंजा अर्थात् घुंघुची के दाने तथा इसकी जड़-दोनों ही तांत्रिक साधना में प्रयुक्त होते हैं। नीचे कुछ प्रमुख व्यावहारिक विषयों पर इसकी उपयोगिता लिखी जा रही है। परंतु ध्यान रहे कि ये प्रयोग तभी सफल होते हैं, जब प्रयोक्ता ने वांछित वस्तुओं को शुभ-मुहूर्त में तंत्र साधना में वर्णित विधि के अनुसार प्राप्त किया हो।

कलहकारी (विद्वेषण) प्रयोग :- रक्त गुंजा के दाने रविवार या मंगलवार के दिन यह कामना करते हुए कि 'हे वनस्पतिदेव! आप मेरे कार्य की सिद्धि के लिए अमुक घर-परिवार में कलह (विद्वेषण) उत्पन्न कर दो।' किसी घर में फेंक दिए जाएं तो उस परिवार में कलह उत्पन्न हो जाता है। यह तांत्रिक प्रयोग प्रायः किसी दुष्ट, सबल, उत्पाती और पर-पीड़क परिवार के पतन हेतु किया जाता है। सात्विक विचारों वाले साधक इसे नहीं करते।

विष निवारक प्रयोग :- 1. यदि कोई व्यक्ति विष के प्रभाव से अचेत हो रहा हो, तो उसे गुंजा की जड़ पानी में धोकर, वही पानी पिलायें। ध्यान रहे कि प्राप्त होने के समय जड़ को भली-भाँति धो-सुखा लिया जाता है, ताकि उसमें धूल-मिट्टी न रहे। गुंजा जल विष-निवारक है।



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)
परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.
Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



2. पानी में घुंघुची को चंदन की भांति घिसकर रोगी को पिलाने से विष उतर जाता है।

सम्मानदायी प्रयोग :- शुद्ध जल में (गंगाजल या अन्य किसी तीर्थ का जल या फिर कुएं का ही सादा साफ जल) गुंजा मूल को चंदन की भांति घिसें। उत्तम होगा—किसी कुमारी कन्या या ब्राह्मण के हाथों घिसवा लें। यह लेप माथे पर चंदन की भांति लगायें। ऐसा व्यक्ति (चंदन चर्चित मस्तक वाला) जहाँ भी जाता है—सभा, समाज, सामारोह आदि में उसे विशेष सम्मान प्राप्त होता है।

पुत्रदाता प्रयोग :- शुभ नक्षत्र में, गुंजा मूल को ताबीज में भरकर कमर में धारण करने वाली स्त्री, यदि स्वस्थ है, तो पति संपर्क करने पर पुत्र लाभ प्राप्त करती है।

शत्रु दमन प्रयोग :- गुंजा मूल को किसी स्त्री के मासिक स्राव (रजःस्वला स्थिति के रक्त) में घिसकर, अंजन की भांति आँखों में लगाकर शत्रु के सामने जाने पर वह देखते ही भाग जाएगा। इस तंत्र का प्रभाव यह है कि प्रयोक्ता की आँखों में एक प्रकार की अदम्य भयावहता और ज्वलन्तता आ जाती है। उसे देखकर शत्रु और उसके साथ सब भयभीत हो जाते हैं। अंजन का प्रयोक्ता व्यक्ति उन्हें बहुत ही विकराल और प्रचण्ड शक्ति संपन्न प्रतीत होता है। फलतः वे सब स्वयं को असहाय—निर्बल मानकर पलायन कर जाते हैं।

अलौकिक शक्ति दर्शन :- देवी—देवता और भूत—प्रेतादि अलौकिक, पारभौतिक शक्तियाँ हैं। जड़—विज्ञान इनके अस्तित्व का उपहास करता है, परंतु धर्म—संस्कृति, आध्यात्म और मनोविज्ञान के ज्ञाता इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि संसार में कुछ गुप्त, अलौकिक और रहस्यमयी शक्तियाँ अवश्य हैं, जो यदा—कदा प्रकट होकर अपने अस्तित्व का परिचय देते हुए, मानव समाज को, बुद्धिवादियों को दिग्भ्रमित करती रहती है। अस्तु, प्राचीन ग्रंथों में उल्लेख है कि यदि रविपुष्प योग में अथवा मंगलवार के दिन गुंजामूल को शुद्ध मधु (शहद) में घिसकर वह लेप आँखों में अंजन की भांति लगायें, तो गुप्त शक्तियों के दर्शन होते हैं। ये शक्तियाँ सात्विक कम, तामसिक ज्यादा होती हैं। अतः दुर्बल हृदय और भीरु प्रकृति वाले व्यक्तियों के लिए यह प्रयोग वर्जित है।

ज्ञान वर्द्धक प्रयोग :- बकरी के दूध में गुंजामूल को घिसकर हथेलियों पर रगड़ें, लेप करें। कुछ समय तक यह प्रयोग करते रहने से प्रयोक्ता व्यक्ति की बुद्धि तीव्र हो जाती है और वह जटिल—दुरुह विषयों को भी सरलता से समझ लेता है। मेधा, चिंतन शक्ति, धारणा और विवेक तथा स्मृति की प्रखरता के लिए यह प्रयोग उत्तम होता है।

पुंस्त्व वर्द्धक प्रयोग :- भैंस का घी लेकर उसमें गंजा को चंदन की भांति घिसकर लेप तैयार करें। इस लेप की मालिश करने से काम—शक्ति बढ़ती है, मन में उत्तेजना आती है और वीर्य स्तम्भन होता है। ध्यान रहे कि यह लेप बहुत धीरे—धीरे समूची पुरुषेन्द्रिय पर (ऊपर से नीचे तक) मलना चाहिए।

गुप्त धन दर्शन :- अंकोल के तेल में (अंकोल को ग्राम्य भाषा में 'अँकोहर' कहते हैं, इसके बीजों से तेल निकाला जाता है।) गुंजामूल को घिसकर आँखों में काजल की भांति लगायें। यह प्रयोग रविवार या मंगलवार को अथवा 'रविपुष्प' जैसे किसी शुभ योग में ही करना चाहिए। यह अंजन दिव्य दृष्टिदायक होता है और इसके प्रयोग से व्यक्ति को पृथ्वी में गड़ा हुआ आस—पास का धन दिखायी देता है।

मृत चैतन्य प्रयोग :- गुलाब के रस (फूलों को पीसकर रस निकालें) में गुंजामूल को घिसकर लेप तैयार करें। यह लेप किसी तत्काल मृत व्यक्ति के शव पर (नाड़ी संस्थान पर) लेप कर दिया जाय, तो वह सक्रिय हो जाता है। संभवतः कुछ देर के लिए उसकी चेतना लौट आती है।

परंतु मेरे विचार से यह प्रयोग वांछित नहीं है। किसी मृत व्यक्ति को 1—2 घंटे के लिए सचेत कर लेने से क्या लाभ? 'जनमत—मरत दुसह दुख होई' के अनुसार यदि प्रथम बार वह व्यक्ति दारुण भोगकर मरा है, तो उसे घंटे—दो घंटे के लिए जिलाकर, बाद में फिर वही यंत्रणा सहने के लिए विवश करना मानवीय दृष्टि से उचित नहीं है। यों प्रसंग—पूर्ति के लिए यह प्रयोग यहाँ लिख दिया गया है, परंतु मात्र चमत्कार के लिए—ऐसे कार्यों में शक्ति का अपव्यय ही होता है।





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



साधना वही सराहनीय और शाश्वत होती है, जो पर-हितकारी, लोक-रंजक और मानवता की रक्षा में समर्थ हो। केवल कौतूहल और क्षुद्र मनोरंजन के लिए तंत्र जैसे विषय को माध्यम बनाना-तंत्र शास्त्र और इसके प्रणेताओं का उपहास ही माना जाएगा।

सुरक्षाकारी प्रयोग :- सिंहनी (बाघिन) के दूध में गुंजा की जड़ को चंदन की भांति घिसकर पर्याप्त मात्रा में लेप तैयार करें। फिर एकांत में नग्न होकर सारे शरीर पर वह लेप लगा लें। सूख जाने पर कपड़े पहन लें और विरोधी के समाने जाएं। वह चाहे मौखिक वाद-विवाद हो या मार-पीट की स्थिति हो सशस्त्र सेना में युद्ध का अवसर हो अथवा दस्यु-दल के बीच घिर जाने की स्थिति हो-हर हालत में साधक की सुरक्षा रहेगी। इस तंत्र प्रयोग के प्रभाव से शत्रु अथवा उसका कोई अस्त्र-शस्त्र साधक का अनिष्ट नहीं कर पाता।

आतंककारी प्रयोग :- यदि कोई साधक काले तिल के तेल में गुंजामूल को घिसकर वह लेप सारे शरीर में मल ले तो उसके प्रभाव से वह बहुत-ही सबल, अजेय और भयानक प्रतीत होगा। फलस्वरूप शत्रुदल चुपचाप भाग जाएगा।

मारण प्रयोग :- गुंजा और गोरोचन को एक साथ घिसकर (पीसकर) उस लेप से मृत्यु यंत्र की रचना करें। मृत्यु यंत्र में शत्रु का नाम लिख दें। बाद में उसे कहीं धरती में गाड़ दें। इस क्रिया से शत्रु की मृत्यु हो जाएगी। लोकहित तथा मानवता की दृष्टि से मृत्यु यंत्र का विवरण देना उचित नहीं है। अतः उसकी रूपरेखा नहीं दी जा रही। कारण कि आज के क्षुद्र, स्वार्थी और अपराध प्रवण युग में ऐसे प्रयोग शेर के हाथ में तलवार दे देने के समान होंगे।

कुष्ठ निवारक प्रयोग :- गुंजामूल को अलसी के तेल में घिसकर लगाने से कुष्ठ के घाव ठीक हो जाते हैं।

अंधत्व निवारक प्रयोग :- गुंजामूल को गंगाजल में घिसकर आँखों में लगाने से आंसू बहुत आते हैं। घी में जड़ को घिसकर आँखों में लगाने से अंधत्व में लाभ होता है। परंतु ये सभी प्रयोग सार्वजनिक हित में और शुभ मुहूर्त में ही करने चाहिए।



❀ सियारसिंगी ❀

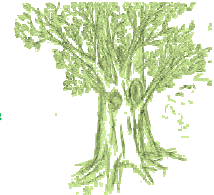
सामान्य परिचय :- पशु तंत्र के अंतर्गत सियारसिंगी (शृंगालशृंग, गीदड़सिंगी, जम्बुकशृंग, जम्बुकी) को बहुत महत्व प्राप्त है। इसके विषय में अनेक रोचक तथ्य प्रचलित हैं। परंतु यह सत्य है कि सियारसिंगी है अस्तित्व है अवश्य और वह तांत्रिक चमत्कारों से आपूरित भी होती है। परंतु मुख्य प्रश्न यह है कि क्या बाजार में मिलने वाली सियारसिंगी असली होती है? इसकी उत्पत्ति और उपलब्धि के विषय में बहु-प्रचलित धारणा है कि- नर सियार के माथे पर एक सींग होता है, उसी को सियारसिंगी कहते हैं।

जंगल में बहुत से सियार पाए जाते हैं। यों, अब वन विनाश के कारण वन्य जीवों की संख्या भी लुप्तप्राय होने लगी है। फिर भी जहाँ जंगल हैं, आज भी सियार पाए जाते हैं। भारतीय जंगलों में सियार, लोमड़ी, भेड़िया, वन विलाव, वन बडैल (जंगली सूअर), हिरण, साही आदि पशुओं की अधिकता है। सामान्य गाँवों में भी मामूली वन्य झाड़ियों, नदी-तट की खोहों और घने बागों के क्षेत्र में सियार, लोमड़ी, खरगोश आसानी से देखे जा सकते हैं।

सियार एक बहुत-ही काइया (धूर्त, चालाक और स्वार्थी) जीव होता है। कुत्ते से मिलता-जुलता यह जानवर मांसाहारी तो है, किसानों की फसलों पर भी बराबर दाँत गड़ाये रहता है। मूंगफली, शकरकंद, आलू, गन्ना, ककड़ी, तारबूज, खरबूजा आदि की फसलें यह चौपट कर देता है। अकेला सियार बहुत कम चलता है। यह 2-4 या अधिक के समूह में रहता है। इसकी आवाज बड़ी तेज, मीठी, किलकारी भरी होती है-‘हुंआ-हुंआ, हुंआ-हुंआ।’ गाँवों के आस-पास शाम के झुरमुटे में, जब ये समूहबद्ध होकर खेतों में निकलते हैं, उस समय इनका कोलाहल कानों के पर्दे फाड़ देता है। वैसे, इक्का-दुक्का सियार तो प्रायः ही देखे जाते हैं।

यद्यपि सब सियार एक ही जाति के हैं-सियार ही। परंतु अन्य सभी जीवों की भांति इनमें भी सामान्य रूप में प्रजातीय अंतर पाया जाता है। ऐसा ही एक सियार वर्ग है-मोतिया सियार। यह अपेक्षाकृत कुछ मोटा, बड़ा, फुर्तीला, गहरे रंग





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंज



का और नेतागिरी के गुणों से संपन्न होता है। जैसे देशी बंदरों में कोई-कोई बहुत मोटा-ताजा, भारी-भरकम, हिंसक, उग्र, तानाशाही प्रकृति वाला दिख पड़ता है। वह जिस समूह में होता है, सारे बंदर उसी के नियंत्रण में रहते हैं। वह अपने वर्ग-समूह का महंत होता है। महंत बंदरों में एक और होता है-सुपर महंत। वह भी भारी-भरकम लेकिन निरा एकाकी रहता है। शायद वह किसी कुण्ठा के कारण वीतराग हो चुका रहता है। समूह के प्रति उसमें लगाव नहीं रहता। परंतु व्यक्तिवादी स्वभाव के कारण वह अपने खाने-पीने का चौकस ध्यान रखता है। इस नाते वह समूह वाले महंत बंदरों से कहीं अधिक बलिष्ठ, मोटा-ताजा और निर्भय होता है। फिर भी आक्रमण बहुत कम करता है। उपद्रव और अराजकता के बदले उसमें आत्म-रक्षा, आरामतलवी और एकांत सेवन की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है। एक तरह से वह परमहंस होता है। बोलचाल की भाषा में उसे 'अकेलवा' कहते हैं। शायद उसी की जीवन सारणी को देखकर टैगोर ने लिखा था- 'एकला चलो रे'।

अस्तु, महंत बंदर की तरह एक महंत सियार भी होता है-उसी मोतिया वर्ग का। संभव है, वह यही सामान्य सियार हो और वह अपने डीलडौल, स्वभाव, नेतृत्व-शक्ति (महंतपन) के कारण 'मोतिया' कहा जाता है। परंतु यह निश्चित है कि सामान्य नर सियारों की अपेक्षा इसमें कुछ विशिष्टता (शारीरिक और स्वभावगत) अवश्य होती है। रात में प्रथम प्रहर के बाद, जंगल में पेट भरने के चक्कर में घूम रहे सियार बोलना बंद कर देते हैं। उस समय लगभग आधी रात (दोपहर रात बीतते-बीतते) को उस मोतिया महंत पर एक तरह की सनक सवार हो जाती है और वह अपने स्वाभाविक स्वर में गाने (चिल्लाने) लगता है। उसका चिल्लाना आरोह-अवरोह के साथ बहुत-ही संगीतात्मक होता है। उसका यह संगीत आस-पास के सियारों के लिए आह्वान गीत होता है। वे सब उसकी आवाज सुनते ही चिल्लाते हुए, उसकी ओर दौड़ पड़ते हैं। थोड़ी देर तक प्रचण्ड कोलाहल मचा रहता है। फिर अन्य सियार तो गाते-चिल्लाते हुए इधर-उधर हो जाते हैं। परंतु वह महंत अपनी जगह पर ही खड़ा अलाप भरता रहता है। थोड़ी देर के बाद अन्य सियार तो वहाँ से चले जाते हैं, महंत वहीं गिरकर अचेत हो जाता है। प्रभातकालीन वायु (उषा वेला) का स्पर्श उसे जगाता है और तब उठकर वह अपनी मांद की ओर चल देता है। उसी महंत मोतिया के पास सियारसिंगी होता है।

यह तथ्य सर्वस्वीकृत है कि सियारसिंगी, केवल नर सियार के पास होती है और वह नर सियार, सामान्य जाति का न होकर, एक विशेष वर्ग (मोतिया) का होता है। शिकारी लोग, जिन्हें सियारसिंगी की तलाश रहती है-जंगलों में ऐसे मौकों पर छिपे बैठे रहते हैं। रात में सियारों का 'संगीत सामारोह' समाप्त हो जाता है और सबके चले जाने पर मोतिया सियार गिरकर अचेत हो जाता है। उस समय पास की झाड़ी में छिपे शिकारी दौड़कर सियारसिंगी निकाल लेते हैं। सियार के माथे पर या दोनों कानों के बीच, भौहों के ऊपर एक छोटी-सी गोल गांठ उभरी रहती है, जिसमें कील जैसी छोटी-सी नोंक भी टटोलने पर महसूस होती है। वही गोल गांठ सियारसिंगी है। बेहोश पड़े सियार के सिर से वह गांठ काट लेना आसान रहता है। अब तो आग्नेयास्त्र भी बन गये हैं। अतः शिकारी लोग मोतिया को पहचान लेते ही गोली मार देते हैं और दौड़कर चाकू से सियारसिंगी काट लेते हैं। जो भी हो, है यह सियार से प्राप्त एक अंग ही।

अन्य कई जानवरों जैसे बकरे, हिरण, भेंडा, बैल, कुत्ता आदि के शरीर में भी कभी-कभी नाभी के पास अथवा अन्य किसी अंग में ऐसी गोल गांठ देखी जाती है। मैंने स्वयं एक दिन कानपुर स्टेशन पर वन्य जातियों के एक समूह को देखा था। वे एक लंबी पतली डोरी में 84 गांठे पिरोये, धूप में सुखा रहा था। पूछने पर बताया गया कि सियारसिंगी है। एक ने कहा, कस्तूरी है। लेकिन मैंने पहचान लिया-वह सब बकरे की नाभियाँ थीं। ऐसे ही लोग जाल-फरेब करके, सियारसिंगी और कस्तूरी बताकर, बकरे-भेड़ की नाभी-ग्रंथियों को मुंह-मांगे दामों में बेचकर सामान्य जनता को ठगते रहते हैं।

मैंने स्वयं पचासों सियारसिंगी देखी हैं। परंतु उनके रूपाकारों में इतनी भिन्नता मिली कि मैं शंकाग्रस्त हो गया। निर्णय नहीं कर पाया कि कौन असली है, कौन नकली? एक तो साधारण चमड़े की थैलियाँ थीं, जिनमें किसी जानवर का नाखून भरकर गोंद से चिपकाकर गोल गांठ का रूप दिया गया था। आशय यह है कि सियारसिंगी कदाचित ही मिल पाती है। लेकिन यदि वह प्राप्त हो जाय तो अनेक प्रकार के विस्मयकारी तांत्रिक प्रयोग किए जा सकते हैं। दैनिक-जीवन में समस्याओं से संबंधित कुछ विशेष तांत्रिक प्रयोग यहाँ लिखे जा रहे हैं। यदि किसी को असली सियारसिंगी प्राप्त हो जाये और वह उसे विधिवत शोध करके (पूजनादि से सशक्त बनाकर) नियमानुसार प्रयोग करे, तो अवश्य ही उसके चमत्कारी प्रभाव का लाभ उठा सकता है।



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



सियारसिंगी को तामसिक और सात्विक—दोनों प्रकार के कार्यों में प्रयुक्त किया जाता है। परंतु उसके शोधन की प्रक्रिया सभी के लिए अनिवार्य है। किसी शोधन के सियारसिंगी (बल्कि कोई भी तांत्रिक वस्तु) प्रभावशील नहीं होती।

शोधन विधि :- सियारसिंगी प्राप्त हो जाने पर उसे साफ करके शुद्ध जल से स्नान कराये (धो लें)। फिर पीले या लाल वस्त्र पर स्थापित करके उसे साक्षात् लक्ष्मी मानकर पूजा करें। पूजा में लाल चंदन, हल्दी, अक्षत, पुष्प तथा सिंदूर प्रयुक्त होता है। धूप—दीप देकर नैवेद्य के साथ कोई सिक्का भी चढ़ाये। उसके पश्चात् 'ॐ श्रीं श्रिये नमः' अथवा 'ॐ श्री महालक्ष्म्यै नमः' मंत्र का जप कम—से—कम पाँच माला अवश्य करें। इस विधि से सियारसिंगी शोधित होती है।

तांत्रिक प्रयोग :-

1. शोधित सियारसिंगी को अन्न—भंडार, कोष, गल्ला, तिजोरी आदि धनामय वाले स्थान पर रखा जाय तो धन—धान्य की वृद्धि होने लगती है।
2. स्नानोपरांत नित्य देव—प्रतिमा की भांति इसका दर्शन, अभिवादन, पूजन भी साधक को यश, सौख्य, सुख—शांति प्रदायक है।
3. उच्चाटन, शत्रु विद्वेषण आदि पातक कार्यों में इसकी महती भूमिका का शास्त्रों में वर्णन है। किंतु मैं अभिचार कर्मों का पक्षधर नहीं हूँ। अतः उन क्रियाओं का उल्लेख यहाँ नहीं किया जा रहा है।



❀ एकाक्षी नारियल ❀

सामान्य परिचय :- नारियल से आप सभी परिचित हैं। नारियल, नारिकेल, कोला, कोकोनट, गरी, गोला, खोपरा, श्रीफल आदि इसी के नाम हैं। (श्रीफल— बेल को भी कहते हैं और समुद्रतट पर पाए जाने वाले एक अन्य फल को भी श्रीफल कहते हैं।) भारतीय आध्यात्म में यह एक शुभ वनस्पति और पूजा—पाठ आदि में प्रयुक्त होने वाला पवित्र फल है। इसकी रचना विचित्र होती है। फलों में बेल और बादाम सर्वाधिक कठोर आवरणधारी फल माने गये हैं। परंतु नारियल इनसे भी अधिक कठोर आवरण में रहता है।

पौराणिक मान्यता है कि नारियल की रचना ब्रह्माजी ने नहीं की थी, बल्कि यह विश्वामित्र मुनि की सृष्टि है। प्रसिद्ध है कि एक बार ब्रह्माजी और विश्वामित्र में विवाद हो गया। ब्रह्माजी अखिल सृष्टि के रचनाकार हैं। संपूर्ण जगत में जो कुछ भी चर—अचर दृष्टिगोचर होता है, जीव—जंतु, पशु—पक्षी, कीट—पतंग और वानर—मानव सब उन्हीं का कृतित्व है।

परंतु एक बार विश्वामित्र जी ने जो अपनी उग्र तपस्या के कारण अलौकिक शक्तियों के स्वामी हो गए थे, ब्रह्माजी के विरुद्ध घोषणा कर दी—तुम पंचतत्व से सृष्टि रचना करते हो, मैं वृक्षों से मानव की उत्पत्ति करूंगा। और यह कहकर उन्होंने कमण्डल से थोड़ा जल लेकर भूमि पर छिड़क दिया। तत्काल वहाँ अंकुर निकले, जो कुछ ही देर में बढ़ते हुए गगनचुम्बी वृक्ष बन गए। फिर उन वृक्षों से मानव मुण्ड की उत्पत्ति हुई। चेहरा बन गया, दो आँखें बन गयीं, मुख बन गया, रोम राशि के स्थान पर रेशे भी उत्पन्न हो गए। निकट था कि मुण्ड के बाद शेष शरीर का भी निर्माण होता। परंतु देवताओं ने ब्रह्माजी की गरिमा सुरक्षित रखते के लिए विश्वामित्रजी से क्षमा याचना करते हुए उनका कोप शांत किया और ब्रह्मा कृत सृष्टि में व्यवधान अथवा विकल्प उत्पन्न न करने की प्रार्थना की। तब विश्वामित्र जी ने शांत होकर सृष्टि रचना का कार्य रोक दिया।

भले ही इस प्रसंग को एक मिथक मान लिया जाय। परंतु 'नारियल' की उपयोगिता असंदिग्ध है। भारतीय संस्कृति में नारियल बहुत शुभ, पवित्र और कल्याणकारी माना जाता है। पूजा—पाठ के अवसर पर देवताओं को नैवेद्य के रूप में, हवन, यज्ञ आदि में नारियल का उपयोग होता है। भेंट, उपहार, तिलक, मंगल कलश, फलाहार, औषधि के संदर्भ में भी यह फल प्रयुक्त होता है। इसके पेड़ समुद्र तटीय क्षेत्रों में अधिक होते हैं।

मैंने दक्षिण यात्रा में मद्रास से कन्याकुमारी तक इसके लाखों पेड़ देखे थे। ताल (ताड़) की भांति ऊँचे, सीधे, गगनचुम्बी वे नारियल के पेड़ अपने आस—पास के परिवेश में, ऊर्ध्वरेता तपस्वियों की भांति उत्पन्न कर रहे थे। मुझे प्राकृतिक





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



दृश्य बहुत पसंद हैं। इसलिए दक्षिण यात्रा में वन्य हरीतिमा, नारियल के वन, ताल और सुपारी के बगीचे देखने में इतना तन्मय हो जाता था कि रेल या बस बीसों मील की दूरी पार कर जाती थीं, पर मैं अपने वाहन की विपरीत दिशा में भाग रहे पंक्तिबद्ध वृक्षों पर से निगाहें नहीं हटा पाता था। आम, जामुन के वृक्षों में शाखाएं होती हैं, इसलिए उनके रूपाकार में भिन्नता होती है। परंतु ताल, खजूर, नारियल और सुपारी के वृक्ष एक-समान होते हैं, इसलिए उनकी छवि-छटा मानसपटल पर बहुत-देर तक अंकित रहती है।

नारियल बहु-उपयोगी वृक्ष है। मैंने बंगाल के गाँवों (सुंदरवन) में देखा था, नारियल के पत्तों में छप्पर छाये हुए थे। पंखे बनाकर बेचे जा रहे थे। हस्त शिल्प की तमाम चीजें-पर्स, बैग, डोलची आदि बाजार में बिक रहे थे। हरे नारियल का पानी (डाभ) पौष्टिक, पाचक और शीतल होता है। अनेक रोगों में वह औषधि का काम करता है। नये फल का डाभ गाढ़ा मीठा होता है, पर ज्यों-ज्यों फल कड़ा होकर पकने की स्थिति में आता है, उसके भीतर का दूध (डाभ) जमकर सादे पानी जैसा रह जाता है। फिर भी लोग उसे बड़े चाव से पीते हैं। मैंने स्वयं भी कई बार डाभ पीकर तृप्ति का अनुभव किया है।

नारियल का फल सर्वसुलभ है। मद्रास क्षेत्र, बम्बई क्षेत्र और बंगाल में यह भारी मात्रा में आता है। आप किसी भी नगर या कस्बे में देखें, बरसात के माह में (जुलाई से अक्टूबर तक) में नारियल के हरे (दूधिया) गोले हथठेलियों पर बिकते मिलेंगे। फल पर मोटे रेशों का छिलका जैसा आवरण होता है। वे रेशे निकाल देने पर बेल जैसा कड़े छिलके का अंडाकार नारियल फल दीख पड़ता है। इसे सामान्यतः 'गोला' कहते हैं। उसे पटक कर या किसी चीज से तोड़ें तो वह मोटा छिलका तड़कदार टूटन के साथ अलग होता है। उसके भीतर गरी होती है। सावधानी से पूरा छिलका निकालने पर गरी का समूचा अभंग गोला प्राप्त होता है। पका हुआ सूखा गोला 'मेवा' की श्रेणी में आता है। उसमें दूध नहीं रहता, बल्कि दूध सुखकर तेल(घी) का रूप ले लेता है। नारियल का तेल, वही गरी का घी है। यह ठंडा, मीठा, पौष्टिक, केश वर्द्धक, नेत्र-ज्योति रक्षक और शांतिदायी होता है। पचमेवा में गरी भी एक घटक है।

अस्तु जहाँ नारियल की जटा से रस्सी बनती है, वहीं कई तरह की अन्य प्रयोजनीय वस्तुएं जैसे कारपेट, पैरपोश, कुशन, गद्दे इत्यादि बनते हैं। गरी के पानी (डाभ) का उल्लेख पहले-ही किया जा चुका है। इन सबके अलावा और सबसे महत्वपूर्ण उपयोग हैं-नारियल का आध्यात्मिक साधना में प्रयुक्त होना। इस प्रकार अपनी उत्पत्तिगत, विचित्रता, बहुक्षेत्रीय उपयोगिता और आध्यात्मिक प्रभाव के कारण नारियल भारत का सर्वाधिक चर्चित फल है। देखने में भले ही यह कुरूप होता है, परंतु स्वाद, प्रभाव और गुणवत्ता में यह अनुपम है।

दुर्लभ एकाक्षी नारियल :- सामान्यतः नारियल के प्रत्येक फल पर रेशा उतारने के बाद टहनी की ओर तीन काले बिंदु दीख पड़ते हैं। मान्यता है कि इनमें से दो बिंदु नेत्रों के प्रतीक हैं और एक मुख का। गौर से देखें तो नारियल का गोला मानवाकृति से बहुत कुछ मिलता-जुलता होता है। यहाँ तक कोई विचित्रता नहीं, यह तो नारियल की प्राकृतिक रचना है ही। उसकी प्रमुख और अत्यधिक प्रभावशाली विचित्रता यह है कि किसी-किसी गोले पर तीन नहीं केवल दो बिंदु पाए जाते हैं। अर्थात् उस पर दो नेत्रों की जगह एक नेत्र और मुख होता है। तांत्रिक ग्रंथों में इस तरह के फल (गोले) को एकाक्षी नारियल कहा गया है-एक आँख वाला नारियल।

ऐसा फल बहुत कम प्राप्त होता है। कहीं निकला भी तो बहुत ऊँचे दामों में बिकता है। मैंने दक्षिण यात्रा में बहुत खोज की, परंतु कहीं न मिला। मद्रास, तिरुपति, ऊटी, रामेश्वरम, कन्याकुमारी, गोआ और बम्बई तक, मैं इसके लिए प्रयासरत रहा, परंतु कहीं नहीं दिख पड़ा। कई बार तो मेरे साथी और फल विक्रेता अविश्वास के सुर में मेरा परिहास भी करने लगे। उनकी मान्यता थी कि ऐसा फल होता ही नहीं। परंतु बाद में मुझे अपने नगर कानपुर में ही वह अलभ्य फल 'एकाक्षी नारियल' प्राप्त हो गया। फिर तो प्रभु की कुछ ऐसी कृपा हुई कि जहाँ मैं एक फल के लिए तरस रहा था, वहाँ मुझे एक दर्जन मिल गए। मैंने अपने कई स्वजनों, मित्रों और स्नेहियों को भी वे भेंट स्वरूप दिए।

तांत्रिक प्रयोग :- नारियल का फल सदैव शुभ होता है। प्रतिबंध यही है कि वह भग्न न हो। समूचा फल ही ग्राह्य होता है। बाद में पूजनोपरांत उसे तोड़कर प्रसाद रूप में गरी को ग्रहण करते हैं। परंतु यहाँ जिस एकाक्षी नारियल की चर्चा की जा रही है, वह प्रसाद के लिए नहीं, केवल पूजन के लिए प्रयुक्त होता है। उसे तोड़ना ही नहीं चाहिए।





तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



चूंकि यह फल दुर्लभ होता है, अतः यदि कहीं दिख पड़े तो तुरंत ले लेना चाहिए। क्योंकि मुहूर्त की प्रतीक्षा में यदि बिक गया, (हाथ से निकल गया तो बड़ा परिताप होता है।) और यदि कहीं ऐसी जगह पर है जहाँ से आप बाद में (शुभ मुहूर्त में) कभी प्राप्त कर सकते हैं, तो वहीं रहने दें और फिर किसी शुभ मुहूर्त में ले आयें।

तांत्रिक प्रयोगों के लिए अमृत सिद्धि योग, सिद्ध योग, रविपुष्प या गुरुपुष्प योग जैसा कोई शुभ मुहूर्त होना चाहिए। इसका पता पंचांग देखकर लगा ले। आशय यह है कि 'एकाक्षी नारियल' किसी शुभ मुहूर्त में ही लाकर घर में रखें। यदि ऐसा संभव नहीं है तो जब भी मिले, भगवान विष्णु और लक्ष्मीजी का ध्यान करते हुए उसे ले आयें और घर में किसी पवित्र स्थान में रख दें। बाद में, जब कोई शुभ मुहूर्त आ जाए तब उसकी विधिवत पूजा करें।

पूजन विधि (तांत्रिक साधना) :- रविपुष्प या गुरुपुष्प अथवा अन्य किसी शुभ मुहूर्त में जो भी सुलभ हो, प्रातः स्नान करके शुद्ध स्थान पर आम की लकड़ी की चौकी रखें। उस पर लाल कपड़ा बिछायें। दैनिक देव पूजा करके थाली में उस एकाक्षी नारियल को रखें। उस पर गंगाजल या शुद्ध कूप जल छिड़क कर उसे स्नान करायें। साफ कपड़े से पोछकर उसे पीढ़े पर बिछे लाल कपड़े पर रख दें। फिर यह कल्पना करें कि यह नारियल नहीं, साक्षात् लक्ष्मी जी की प्रतिमा है। उस पर लाल कपड़ा, लाल चंदन, सिंदूर इत्यादि चढ़ायें। पुष्प-अक्षत अग्नित करें, धूप-दीप दें। कोई मीठा प्रसाद चढ़ायें और कोई मुद्रा (सिक्का) चढ़ायें। इसके पश्चात् लक्ष्मीजी का स्तवन, ध्यान-पूजन करते हुए मंत्र जप आरंभ करें। मंत्र जप के पूर्व ही यह संकल्प कर लें कि मैं एकाक्षी नारियल रूपी लक्ष्मी प्रतिमा की पूजा प्रसन्नता हेतुमाला जप करूंगा। फिर उतनी ही माला जप करें। इस प्रकार अपनी संकल्पित संख्या में मंत्र जप करें। कम से कम 11 या 21 माला अवश्य जप करना चाहिए।

तदन्तर उस नारियल को कहीं सुरक्षित आसन वाले कपड़े सहित किसी थाली, तश्तरी, कटोरी इत्यादि में रखें। चांदी की तश्तरी, कटोरी हो अत्युत्तम। प्रथम दिन मंत्र की संख्या पूरी हो चुकने पर वही मंत्र पढ़ते हुए 21 आहुतियाँ देकर हवन भी करना चाहिए। हवनोपरांत कम से कम एक ब्राह्मण को भोजन कराकर कुछ दक्षिणा दें। तत्पश्चात् नारियल को किसी पात्र के आसन में कहीं सुरक्षित रख दें। फिर नित्य उसकी सिंदूर, अगर संभव हो तो पुष्प भी और धूप-दीप से पूजा करते रहें। यथासंभव कभी-कभी उस पर कोई मुद्रा/ सिक्का चढ़ाते रहें। एकाक्षी नारियल का यह प्रयोग आर्थिक दृष्टि से बहुत-ही लाभकारी, समृद्धिदायक होता है।

प्रभाव :- जिस घर में एकाक्षी नारियल की पूजा होता है, वहाँ लक्ष्मी जी सदैव वास करती हैं। अन्न के भंडार में, तिजोरी में, आलमारी में, देव प्रतिमाओं के साथ में, कहीं भी इसे रखें और दैनिक पूजन-दर्शन करें। इससे अन्न, धन और श्री संपत्ति की वृद्धि होती है। व्यापारिक प्रतिष्ठानों के लिए भी यह परम लाभकारी होता है।

मंत्र :- एकाक्षी नारियल की साधना में 'ॐ श्रीं श्रियै नमः' मंत्र का पूजा के समय तक जप करना चाहिए।

चूंकि एकाक्षी नारियल को माता लक्ष्मी का प्रतीक माना गया है। अतः एकाक्षी नारियल की साधना के पश्चात् निम्नलिखित श्लोक द्वारा विष्णु भगवान का स्तवन कर लेना भी साधना के प्रभाव में संवर्द्धनकारी सिद्ध होता है।

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्, प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ।

व्यासं वशिष्ठनप्तारं सक्तेः पौत्रकल्मषम्, पाराशरत्मजं वन्दे शुक्रतातं तपोनिधिम् ॥

व्यासाय विष्णुरूपाय व्ययसरूपाय विष्णवे, नमो वै ब्रह्मनिधये वशिष्ठाय नमो नमः ॥

चतुर्वदनो ब्रह्मा द्विबाहुरपरो हरिः, अभाललोचनः शम्भुर्भगवान् बादरायणः ॥

निषेध :- अपवित्र व्यक्ति उस नारियल को छुएं नहीं। उसे आसन पर रखते समय यह ध्यान रखें कि छोटा बिंदु ऊपर और बड़ा बिंदु नीचे रहे।





तांजीवत वनस्पतियाँ : वनस्पति तंत्र



❁ निर्गुण्डी ❁

सामान्य परिचय :- सड़क किनारे, नदी-नालों के कगारों पर, जंगलों और ऐसी ही स्थानों पर एक पौधा उगता है। यह अरहर के पेड़ जैसा होता है, परंतु लंबी शाखाओं के कारण विस्तार अधिक पा जाता है। इसकी पत्तियाँ भी अरहर की पत्तियों से मिलती-जुलती होती हैं। एक डण्डी में तीन या पाँच (प्रायः पाँच ही) पत्तियाँ पायी जाती हैं। पत्तियों की बनावट अरहर की पत्ती से बहुत साम्य रखती हैं, परंतु अरहर की पत्ती जहाँ हरी होती है, इसकी पत्ती पर सफेदी (जैसे कोई सफेद पावडर पुता हो) देखी जाती हैं। ये पत्तियाँ छुने में रोमयुक्त, मखमली प्रतीत होती हैं। वर्षा ऋतु में इसका पौधा खूब पनपता है। लेकिन जाड़े में इसकी बाढ़ रुक जाती है और बड़े पेड़ों की भांति वसंत ऋतु में इसकी पत्तियाँ झड़ जाती हैं। ग्रामीण भाषा में इस पौधे को 'मैउडी' कहते हैं।

वैसे, इसके अन्य कई नाम भी प्रचलित हैं। संस्कृत और आयुर्वेद में इसे 'निर्गुण्डी' कहते हैं। इसका एक नाम और भी बहुत प्रचलित है—सम्हालू। प्रादेशिक भाषाओं में यह सिन्दुवार, सिन्धुर, अर्थ—सिद्धक, भूतकेशी, इन्द्राणी आदि नामों से भी विख्यात है। यहाँ ध्यान रखें कि 'इन्द्राणी' निर्गुण्डी (सम्हालू) को कहते हैं, परंतु 'इन्द्रायण' एक भिन्न वनस्पति है, जिसके फल सुंदर होकर भी बहुत कड़वे होते हैं। यह इन्द्रायण भी एक स्वतंत्र वनस्पति है। औक, आयुर्वेद में इसके भी बहुत प्रयोग बताए गये हैं। अस्तु, यहाँ हम 'निर्गुण्डी' अर्थात् सम्हालू नामक वनस्पति के कुछ औषधीय गुण जो तंत्र साधना से संबंध रखते हैं, लिख रहे हैं :-

निर्गुण्डी के तांत्रिक प्रयोग :- रविपुष्य योग में, पूर्व निमंत्रण देकर 'निर्गुण्डी' पौधे के प्रयोज्य अंग ले आयें। वैसे, जड़ विशेष उपयोगी होती है, अतः जड़ अवश्य लायें।

जड़ लाकर घर में धोयें। फिर पोछकर साफ कपड़े पर रखें और लाल चंदन, धूप—दीप से पूजा करें। तत्पश्चात् उसे कपड़े में लपेटकर रख दें। बाद में, प्रयोजनानुसार इसको शुभ मुहूर्त में ही निर्दिष्ट नियमों के अनुसार काम में लायें।

स्वर शोधक प्रयोग :- निर्गुण्डी मूल को सुखाकर पीस लें। यह चूर्ण प्रतिदिन प्रातः काल 3 माशे की मात्रा में गुनगुने पानी के साथ सेवन किया जाय, तो कण्ठावरोध दूर होकर समस्त प्रकार के उच्चारण दोष समाप्त हो जाते हैं। और स्वर अत्यधिक मधुर हो जाता है। संगीत साधकों के लिए यह प्रयोग बहुत लाभकारी होता है।

कृशता निवारक प्रयोग :- निर्गुण्डी का चूर्ण प्रतिदिन प्रातः—सायं काल घी में मिलाकर सेवन करने से शारीरिक कृशता दूर होकर, व्यक्ति हृष्ट—पुष्ट हो जाता है। योग सेवन के पश्चात् थोड़ा—सा दूध भी पीना चाहिए। यह प्रयोग शक्ति वर्द्धक और रक्त शोधक है। अतः पाचन क्रिया और रक्त संचार को ठीक करके शरीर में रस रक्त की वृद्धि करता है। दुबले—पतले कृशकाय और क्षीण व्यक्ति इस प्रयोग से अपने शरीर को स्वस्थ सबल बना सकता है।

रक्त शोधक प्रयोग :- 'तंत्र शास्त्र' आयुर्वेद के बहुत निकट है। कुछ विद्वानों की मान्यता है कि 'आयुर्वेद' वस्तुतः तंत्र शास्त्र का एक अंग है। आयुर्वेद में विभिन्न घटकों के मिश्रण से औषधियाँ तैयार की जाती हैं। तंत्र शास्त्र में पदार्थ प्रयोग के साथ—मंत्र, क्रिया, मुहूर्त, स्थान और व्यक्ति को भी महत्व प्राप्त है। अतः जो प्रयोग आयुर्वेद में सामान्य रूप से वर्णित है, वही तंत्र शास्त्र में विस्तार से प्राप्त होता है। अस्तु, तंत्र प्रयोगों के क्रम में निर्गुण्डी का वर्णन करते हुए यहाँ उसके कुछ महत्वपूर्ण प्रयोग प्रस्तुत किए जा रहे हैं, उन्हीं में से एक है — 'रक्त शोधक तंत्र'।

यदि शरीर में रक्त दूषित हो जाये तो अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होकर व्यक्ति को पीड़ित करने लगती है। खाज, खुजली, दाद, घाव, फोड़ा, फुन्सी अनेक प्रकार के चर्म विकार यहाँ तक कि कुष्ठ जैसा भयंकर और घृणाजनक रोग भी। यह सब रक्त दोष के कारण उत्पन्न होते हैं। अतः रक्त शोधन का महत्व सर्वोपरि है। जहाँ चिकित्सा शास्त्र में रक्त शुद्ध होने की बहुविधि औषधियाँ प्राप्त होती हैं, वहीं तंत्र शास्त्र में भी ऐसे सरल किंतु चमत्कारी प्रयोग प्राप्त होते हैं कि उनका प्रभाव देखकर बड़े—बड़े चिकित्सा विशेषज्ञ और भिषगाचार्य दिङ्मूढ़ रह जाते हैं।

रक्त शोधन के लिए निर्गुण्डी का प्रयोग इस प्रकार है —

निर्गुण्डी मूल का चूर्ण बनायें। इसको नित्य प्रातः—सायं तीन माशा की मात्रा में, शहद में मिलाकर सेवन करें, ऊपर से साफ ताजा पानी पी लें। रक्त शोधन के साथ इस प्रयोग से, रक्त विकारों से उत्पन्न अनेक प्रकार के चर्म रोग, जैसे



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०— हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥



तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



खाज-खुजली, दाद आदि दूर हो जाते हैं। रक्त शुद्धि के प्रयोग से व्यक्ति का शरीर स्वस्थ, सबल होने लगता है और चेहरे पर कांति आ जाती है।

ध्यान रहे कि औषधि सेवन और तांत्रिक प्रयोग सदैव शुभ मुहूर्त में ही आरंभ किए जाते हैं। अशुभ समय, दुर्योग, कुबेला और वर्जित काल में किया गया कार्य कभी सफल नहीं होता, बल्कि और घातक हो जाता है। इसलिए जहाँ वस्तु की शुद्धता और मात्रा पर ध्यान दिया जाना है, वहीं उसके प्रयोग काल (उपयुक्त समय मुहूर्त) को भी स्मरण रखना चाहिए।

निर्गुण्डी के कुछ ऐसे प्रयोग भी प्राचीन ग्रंथों में वर्णित हैं, जो कायाकल्प कर देते हैं। कायाकल्प का अर्थ है, शरीर को नवीनता प्राप्त होना। आयुर्वेद में भी इसके कई प्रयोग वर्णित हैं, जो मानव शरीर को स्वस्थ, सबल, युवा बना देते हैं। अस्तु, निर्गुण्डी के विषय में वनस्पति शास्त्रियों, तंत्राचार्यों और प्रयोक्ताओं ने बहुविधि अनुभव करके इसके 'कल्प' का वर्णन इस प्रकार किया है :-

निर्गुण्डी मूल का चूर्ण बनायें। इसके प्रतिदिन प्रातः-सायं अजामूत्र (बकरी के मूत्र) के साथ सेवन करें। यह प्रयोग मानव शरीर में निम्नलिखित परिवर्तन ला देता है :-

1. यह योग यदि एक सप्ताह तक नियमित रूप से सेवन किया जाय, तो नख, केश, दंत का परिवर्तन कर देता है। उल्लेख मिलता है कि वर्तमान, नाखून, दाँत, बाल सब ढीले होकर गिर जाते हैं और पुनः नये उग आते हैं।
2. ब्रह्मचर्य, सात्विक जीवनमय, योगासन, मंत्र जप, एकांत निवास, शुद्ध सात्विक फलाहार के साथ जो साधक इस योग को 21 दिनों तक लगातार सेवन करता है, वह अनेक सिद्धियाँ प्राप्त कर लेता है। उस व्यक्ति के लिए जल और शस्त्रादि से कोई भय नहीं रहता। मान्यता है कि यह प्रयोग जल स्तम्भन और शस्त्र स्तम्भन कर देता है। अर्थात् उस व्यक्ति को जल में डूबने का खतरा नहीं रहता और शस्त्र लगने पर उसे चोट-घाव की अनुभूति नहीं होती।
3. इसे 'खेचरी विद्या' का मूर्तरूप माना जाता है। यदि 40 दिनों तक कोई साधक पूर्ण मनोयोग से, संयम के साथ (ब्रह्मचर्य पालन और सात्विक आहार, भूमि शयन, ईश्वर चिंतन, शांति, अक्रोध, अलोभ, द्वेषादि मनोविकारों से सर्वथा मुक्त) इस प्रयोग को करता रहे तो वह अलौकिक शक्ति संपन्न होकर खेचरी विद्या में निपुण हो जाता है। खेचरी विद्या की सिद्धि व्यक्ति को आकाशगामी बना देती है। वह वायुचारी होकर पक्षी की भाँति कहीं भी उड़ सकता है। आज भी हनुमानजी तथा अन्य कितने ही ऋषि-मुनियों द्वारा वायु विहार करने के प्रसंग पढ़े-सुने जाते हैं।

शांतिदायी तंत्र :- शुभ मुहूर्त में लाकर विधिवत पूजी गयी 'निर्गुण्डी की जड़' बहुत ही शांतिदायक होती है। इसे लाकर घर में कहीं भी सुरक्षित (पवित्र स्थान में) रख दें तथा किसी कपड़े में बांधकर या ताबीज-कवच में भरकर गले या भुजा में धारण कर लें। इसके प्रभाव से घर में सुख-शांति रहती है। कलह के कारण घर में दरिद्रता आ गयी हो, मानसिक तनाव रहता हो, कार्य में अवरोध और आर्थिक हानि हो रही हो अथवा अशांति, उपद्रव, वैर-विरोध के कारण उत्पन्न कोई अन्य समस्या पीड़ित कर रही हो-उस समय यह प्रयोग बहुत ही लाभकारी होता है।

कभी भी शुभ मुहूर्त में लाकर इसे (निर्गुण्डी मूल को) घर में रख दें। यह अनेक प्रकार से लाभकारी सिद्ध होगी।



❀ कुश ❀

सामान्य परिचय :- धरती की गोद में एक-से-बढ़कर एक विचित्र वस्तुएं देखी जाती हैं। जहाँ हम हजारों तरह के पशु-पक्षी, जीव-जंतु, कीट-पतंग देखते हैं, वहीं असंख्य प्रकार की वनस्पतियाँ भी पायी जाती हैं। भारत और विदेशों के कितने ही स्वनामधन्य वनस्पति शास्त्रियों ने दीर्घकाल तक अनुसंधान रत रहकर कितने ही वनस्पतियों के नाम और गुण, उत्पत्ति स्थल और उनके अनुकूल जलवायु इत्यादि का पता लगा लिया है, तथापि हजारों पेंड़-पौधे और घासों अब भी विवेचना के लिए शेष हैं।

भारत में कई प्रकार की घासों होती हैं। ये सभी पशुओं के चारे के रूप में (कुछ एक को छोड़कर) प्रयुक्त होती हैं। दूब, मोथा, परबा, मंजूर आदि सुलभ घासों हैं, जो प्रायः सभी क्षेत्रों, गाँवों में उगती हैं। वैज्ञानिक खोज के आधार पर इनसे भी





तांजीवत वनस्पतियाँ : वनस्पति तंत्र



अनेक प्रकार के औषधीय प्रयोग पूरे किए जा सकते हैं। परंतु ऐसा है नहीं। सारी घासों केवल चारे के रूप में प्रयुक्त होती हैं। वैसे, किसी-किसी घास से चटाई, छप्पर, रस्सी आदि का निर्माण किया जाता है। औषधि के रूप में प्रायः मोथा (शिरोरोग नाशक तैल के निर्माण में) और दूर्वा का प्रदर-प्रमेह जैसे रोगों की चिकित्सा में उपयोग होता है। बाकी सब जानवरों का चारा है।

भारत की एक प्रसिद्ध घास है—कुश। इसकी पत्तियाँ नुकीली और दांतेदार होती हैं, इसलिए इसे पशु कम चरते हैं। चरते भी हैं, तो बहुत सावधानी से धीरे-धीरे अन्यथा यह उनके मुँह में घाव कर देती है। इसी तरह किसान—मजदूर भी इसे बहुत-कम छीलते हैं, क्योंकि हाथ-पैर में यह चुभकर कष्ट देती है। अगर यह पैर में चुभ जाए तो सुई की चुभन से भी अधिक पीड़ा होती है। एक घटना इतिहास में बहुत प्रसिद्ध है। मौर्यसमाज के संस्थापक 'चन्द्रगुप्त मौर्य' के गुरु आचार्य 'विष्णुगुप्त चाणक्य' जो एक बार मगध नरेश के यहाँ अपमानित हो जाने के कारण उसके वंश-परिवार को समूल नष्ट करने के लिए प्रतिबद्ध हो गए थे, और वैसा कर भी दिखाया था, अपनी युवावस्था में एक दिन कहीं जाते हुए मार्ग में कुशों की चुभन से क्षुब्ध होकर रास्ते के सारे कुश उखाड़-उखाड़ कर उनकी जड़ों में मट्टा डाल दिया था, ताकि वे फिर न पनप सकें और दूसरे यात्रियों को उनकी चुभन की दारुण वेदना न सहनी पड़े। वस्तुतः कुश की जड़ दीर्घजीवी होती है। ग्रंथि बाहुल्य के कारण वह अमरत्व जैसा प्राप्त किए रहती है। यदि इसकी एक भी गाँठ भूमि में रह जाए तो वह पौधे का रूप धारण कर लेती है।

प्रभाव :- भले ही कुश में भाले जैसा चुभन और आरी जैसी दांत-पंक्ति होती है, भले ही वह पथिकों के लिए सुखद नहीं है—पीड़क है, भले ही वह पशुओं के लिए श्रेष्ठ खाद्य नहीं है, तथापि उसकी गुणवत्ता उसके सारे अवगुणों को, सारे अंतर्विरोधों को समाप्त कर देती है। आध्यात्म के क्षेत्र में 'कुश' को जो मान्यता प्राप्त है, वह अन्य किसी घास को नहीं। यद्यपि किन्हीं अंशों में दूर्वा भी अति पवित्र पूज्य और प्रभावी है, परंतु कुश का स्थान उससे बहुत ऊँचा है।

आध्यात्म के क्षेत्र में :- गणेश जी की पूजा में दूर्वा को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। शिव, पार्वती की पूजा में भी उसे बड़ी श्रद्धा से प्रयोग किया जाता है। परंतु कुश एक ऐसी वनस्पति है, जिसका प्रयोग देवताओं, पितरों और प्रेतों तक के लिए समान रूप से होता है। कुश की पवित्री बनाकर, अनामिका अंगुली में धारण करने पर ही अनेक पूजन—विधान पूर्ण और शुद्ध माने जाते हैं। कोई भी धार्मिक अनुष्ठान हो, कोई पूजा—पाठ हो, कोई संस्कार हो—आपका पुरोहित आपको पवित्री जरूर पहनाएगा। वह पवित्री एक प्रकार की मुद्रिका होती है — कुश की बनी हुई अंगुठी। हवन—पूजन ही नहीं, पितरों का आह्वान, श्राद्ध—तर्पण और क्रिया—कर्म तक में भी पवित्री धारण की जाती है। दिवंगत व्यक्ति के नाम पर पिण्डदान के समय कुश को ही प्रमुख आधार बनाया जाता है। कुश से जल छिड़कना, कुश को व्यक्ति अथवा देवता—विशेष का स्थानापन्न मानकर उसकी पूजा करना, मण्डप आदि की रचना में उसका प्रयोग तथा अन्य कितने ही धार्मिक कृत्यों में उसकी अनिवार्यता, उसके आध्यात्मिक महत्व को स्वतः उजागर कर देती है।

कुश तंत्र :- तंत्र शास्त्र में कुश के अनेक प्रयोग बताए गये हैं। यह शांति, धन—धान्य, समृद्धि, पवित्रता, सात्विकता और विवेक की वृद्धि करता है। प्रयोग भेद से कुश तंत्र को इस प्रकार समझना चाहिए —

आसन :- कुश घास से बनाया हुआ आसन (बैठकर पूजा करने की छोटी चटाई) बहुत ही लाभकारी, सर्व—सिद्धिदायक, धन—वर्द्धक और देव—अनुकूलन में सहायक होता है। किंतु यह भी ध्यान रखें कि बाजार में 'कुशासन' के नाम से बिकने वाले आसन वस्तुतः कुश से नहीं, बल्कि काँस नाम के घास से बने होते हैं। काँस की पत्ती लम्बी, पतली और दाँत, काँटों से रहित होती है। जबकि कुश की पत्ती लंबाई में कम चौड़ी, चरचरी, दाँतेदार और मोटी होती है। शहर के लोग, जिन्होंने कभी घास देखी ही नहीं, वे इस भेद को नहीं समझ सकते, परंतु जिन्हें देहात का प्रकृति का, पेड़—पौधों का, जंगल—मैदान और घास—फूस का सामीप्य प्राप्त हो, ऐसे लोग आसानी से कुश और काँस का अंतर समझ जाते हैं। यों, दुकानदार भी चाहे तो भेद समझाकर असली दे सकता है। वह आसन बनकर बिकने आती है।

पवित्री :- कुश निर्मित पवित्री, यथा नाम, तथा गुण होती है। इसको धारण करने का मुख्य उद्देश्य होता है— साधक का उस समय, तन और मन से पवित्र और समस्त बाह्य—बाधाओं से सुरक्षित हो जाना। यद्यपि पवित्री निर्माण का मंत्र होता है, परंतु सामान्य साधक यह सब नहीं कर पाते हैं। ऐसी स्थिति में मध्यम मार्ग यह है कि किसी पुरोहित को दक्षिणा देकर,



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०— हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



किसी शुभ मुहूर्त में, उससे मंत्र सिद्ध कराकर पवित्री बनवा लें। उसे पूजन, अनुष्ठान के समय पहनें, बाद में उतारकर सुरक्षित रख दें। यहाँ यह भी स्मरण रहना चाहिए कि निकृष्ट कर्म, अभिचारादि की साधना में, तामसिक साधना में पवित्री धारण करना वर्जित है। यह केवल सात्विक साधना के समय प्रयुक्त होती है।

कुशमूल की माला :— रविपुष्प योग में कुश की पर्याप्त जड़ें खोद लायें और उन्हें धोकर एक-एक गांठ काट लें। फिर सुई-धागे से या केवल तागे के सहारे से एक-एक गाँठ को पिरोकर (बांधकर) माला बना लें। यदि कुशाग्रंथि के 108 दानों की माला बनाकर इससे मंत्र जप किया जाय तो बहुत लाभ होता है। धन-समृद्धि के लिए की जाने वाली पूजा-साधना के मंत्र जप में इसे वरीयता प्राप्त है। यह बनाने में कुछ असुविधाजनक अवश्य है, परंतु प्रभाव में अद्भुत और निश्चित फल देने वाली है। कार्तिक, अगहन में इसकी जड़ आसानी से प्राप्त हो सकती है। वैसे खोजने पर तो कभी भी, कहीं से भी ले सकते हैं।

जिस प्रकार कपास, ऊन, बेंत, चर्म, काष्ठ, पत्र, शिला आदि विभिन्न आसनों में कुश का आसन सर्वश्रेष्ठ होता है, वैसे ही मंत्र जप के लिए निर्धारित विभिन्न मालाओं (शंख, कौड़ी, मोती, मूंगा, पुत्र जीवा, तुलसी, वैजयन्ती, रुद्राक्ष, चंदन, स्फटिक आदि) में कुशमूल की माला श्रेष्ठ होती है। कुश को 'दर्भ' भी कहते हैं। दर्भासन के प्रसंग अनेक पौराणिक आख्यानों से प्राप्त होते हैं। भगवान श्रीराम ने वनवास काल में 'कुशासन' पर ही शयन-विश्राम किया था। केवट ने भी श्रीराम के लिए कुश की चटाई प्रस्तुत की थी। लंका प्रवेश के लिए समुद्रतट पर 'पथ याचना' के समय श्रीराम ने कुशासन पर ही बैठकर सागर स्तवन किया था। और भी कितने ही ऋषि-मुनियों के जीवन वृत्तांत में कुशासन का उल्लेख मिलता है। यह समस्त संदर्भ इस तथ्य को प्रभावित करते हैं कि भारतीय संस्कृति आध्यात्म और तंत्र के क्षेत्र में 'कुश' को बहुत पवित्र माना गया है, जो अवश्य ही उसकी अलौकिक प्रभावशीलता पर आधारित है।

धन-वर्द्धक प्रयोग :— रविपुष्प योग में कुशमूल ले आयें। उसको शुद्ध जल से स्नान कराकर, देव प्रतिमा की भांति पूजें और लाल कपड़े में लपेटकर भंडार या तिजोरी में रख दें। दैनिक धूप-दीप भी करते रहें। यह प्रयोग समृद्धकारी माना गया है।

कुशाग्रंथि (कुश का बांदा) :— कुशा-ग्रंथि का एक अर्थ है—कुश की गांठ। परंतु यह गांठ—ऊपर की नहीं जड़ की मानी जाती है। इस ग्रंथि का उपयोग माला बनाने में होता है। किंतु हम जिस ग्रंथि की चर्चा कर रहे हैं, वह कुश के पौधे के ऊपर होती है। प्रचलित भाषा में इसे कुश का बांदा कहते हैं। पौधे के बीच में तने पर कहीं भी एक काली गांठ पड़ जाती है, जो आकार में छोटे बादाम से लेकर, बेर, सुपारी तक के बराबर हो सकती है। यह बहुत-ही समृद्धकारी होती है। 'भरणी' नक्षत्र के दिन इसे घर लायें और लक्ष्मी का प्रतिरूप मानकर, विधिवत् लाल चंदनल, सिंदूर, कपूर, लौंग, इलायची, पुष्प, अक्षत इत्यादि से पूजा करें और लक्ष्मी मंत्र का जप करें। तदुपरांत लाल वस्त्र में लपेटकर कोष, भंडार, तिजोरी, कहीं भी सुरक्षित रख दें। यह निश्चित ही धन-वैभव वर्द्धक अनुभूत प्रयोग है।



✽ हरिद्रा ✽

सामान्य परिचय :— हरिद्रा को बोलचाल की भाषा में हल्दी कहते हैं। यह पीले रंग की एक जड़ी है, जो सुखाकर मसाले के रूप में प्रयुक्त की जाती है। भोजन, साग-सब्जी, मिठाइयाँ, मसाले, चटनी, आचार, अवलेह, पाक, मोदक से लेकर प्रसाधन (श्रृंगार सामग्री) तक में हल्दी का प्रयोग होता है।

हल्दी कांति वर्द्धक, अनेक रोग नाशक और शुभ पदार्थ है। इसके पौधे से भी सुगंध आती है। हल्दी का पौधा सामान्यतः दो-ढाई फुट ऊँचा होता है। वैजयन्ती पुष्प के पेड़ को देखिए, हल्दी का पेड़ इससे मिलता-जुलता होता है। ऊँचाई में कम होने के पर भी पत्तों की बनावट एक जैसी होती है। हल्दी के पत्ते को नोचकर मसलिये और फिर सूँघिये। बड़ी मादक सुगंध आती है।

पूजा-पाठ विवाह आदि में जहाँ भी पीला रंग चाहिए, सारे काम हल्दी से होते हैं। हिन्दू विवाहों में भी वर-कन्या के कपड़े हल्दी से रंगे जाते हैं। हल्दी का उबटन शरीर को स्वर्णिम आभा प्रदान करता है।





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



तांत्रिक प्रयोग :- हल्दी को तांत्रिक साधना में बहु उपयोगी द्रव्य माना जाता है। यहाँ कुछ प्रमुख विषयों पर हल्दी के तांत्रिक प्रयोग लिखे जा रहे हैं -

पुखराज का पूरक :- नवग्रहों में बृहस्पति को ज्ञान, विद्या, सम्मान, तेज और विवर्क का स्वामी माना जाता है। यदि किसी व्यक्ति का बृहस्पति मंद, अशुभ अथवा विरोधी है, तो उसकी अनुकूलता पाने के लिए वह 'पुखराज' रत्न पहनता है। पुखराज यद्यपि सुलभ रत्न है, किंतु हजारों रुपये में आता है, फिर भी उसकी शुद्धता और निदोषिता संदिग्ध रहती है। पुखराज का सर्वाधिक विश्वसनीय उपरत्न हल्दी की गांठ है। नयी कच्ची हल्दी की गांठ लेकर, उसे छील-धोकर पीले कपड़े पर रख दें। फिर चाकू से उसका गोल छोटा-सा दाना बनाकर, पीले धागे में पिरोकर, भुजा पर धारण कर लें। पुखराज का पूरक हो जाएगा। ध्यान रहे कि पुखराज अथवा उसके उपरत्न के रूप में हल्दी को धारण करने के लिए 'गुरुपुष्य' योग ही श्रेष्ठ मुहूर्त होता है। अतः गुरुवार के दिन पुष्य नक्षत्र होने पर, उसके समय में ही साधना की जानी चाहिए।

पुखराज की माला :- बृहस्पति की साधना में सिद्धि प्राप्त करने के लिए यदि पुखराज की माला पर जप किया जाय, तो बहुत लाभ होता है। परंतु जो लोग पीले कांच के पालिशदार नगीने भी नहीं पहन सकते, वहाँ पुखराज दानों की चर्चा करना-रत्नों का उपहास ही होगा। अस्तु, जिसे आस्था और उत्साह हो, वह हल्दी के गांठों को छीलकर गोल दाने काट लें, फिर उन्हें पीले धागे में पिरो लें। बृहस्पति का मंत्र जपते हुए उस माला की धूप-दीप से पूजा करें। तदन्तर गुरु ग्रह का मंत्र जपें। मंत्र जप के उपरांत उसी मंत्र से आहुति देकर हवन करें। हवन में आहुति संख्या 21 से सामर्थ्यानुसार तक हो सकती है। हवनोपरांत एक ब्राह्मण को पीला भोजन करायें, पीले वस्त्र दान दें। सिक्का हल्दी से रंगकर (पीले रंग की मुद्रा बनाकर) दान दें। माला को हवन के धूप में शोध लें। यह माला पुखराज माला से भी अधिक गुण-संपन्न होती है। फिर, प्रतिदिन उसी माला पर बृहस्पति का मंत्र जपें। सारे अनिष्ट दूर होकर, ज्ञान, बुद्धि, सम्मान आदि की वृद्धि होती है।

गणेश पूजा में हरिद्रा माला :- हरिद्रा माला पर गणेश जी के मंत्र जपे जाते हैं। एक विशिष्ट अनुष्ठान होता है-हरिद्रा गणपति साधना। उसमें हल्दी का प्रयोग अनिवार्य रहता है। गणेश और बृहस्पति दोनों के साधना में साधक के वस्त्र, आसन, भोज्य पदार्थ सब हल्दी के रंग से रंगे होने चाहिए।

हल्दी की माला पर मंत्र जप बहुत प्रभावशाली रहता है। पुखराज रत्न के रूप में हल्दी का टुकड़ा और हल्दी के ही रंग में रंगे हुए पीले वस्त्र धारण करना लाभकारी होता है।

धनवर्द्धक तंत्र - गुरुपुष्य योग में अथवा गणेश चतुर्थी के दिन नहाधोकर शुद्धतापूर्वक एक नयी गांठ (समूची हल्दी) लें। उसे पीले रुमाल में रखें। हल्दी में रंगे हुए कुछ चावल के दाने भी उसमें रखें और उसी प्रकार हल्दी रंजित नारियल का समूचा गोला और हल्दी से रंगी एक सुपारी (पाँच हो तो अत्युत्तम) भी रखें। तत्पश्चात् उसे धूप-दीप देकर कोई सिक्का जो कि हल्दी से रंगा हो, उसे भी उसमें रख दें। अब उस रुमाल को बांधकर कहीं भी रख दें। हाँ दैनिक धूप-दीप अवश्य करते रहें। यह प्रयोग धन-धान्य से समृद्ध बनाता है। इस संपूर्ण साधना में 'ॐ केशवाय नमः' अथवा 'ॐ श्री श्रियै नमः' मंत्र जपते रहना चाहिए।

विघ्न निवारक प्रयोग - हल्दी, चावल पीसकर उसके घोल से घर के प्रवेश द्वारा पर 'ॐ' बना दें। घर समस्त बाधाओं से सुरक्षित रहेगा। यदि चावल न मिलायें, केवल हल्दी के घोल से भी लिखें, तो यही फल प्राप्त होगा।

लक्ष्मी निवास तंत्र - हल्दी की गांठ जहाँ भी जैसे आलमारी, गोदाम, गल्ला, बक्स, आभूषण पेटिका में रखेंगे, वहाँ लक्ष्मी जी की कृपा अवश्य रहेगी। परंतु वहाँ रहने से पूर्व गांठ को धो-पोछकर, लोबान धूप से शुद्ध कर लेना चाहिए। प्रत्येक क्रिया में 'ॐ श्री श्रियै नमः' मंत्र का जप करते रहना आवश्यक है।

बृहस्पति का मंत्र - बृहस्पति साधना के लिए हल्दी का प्रयोग करते समय 'ॐ बृ बृहस्पतये नमः' मंत्र का जप करना चाहिए।

कृष्ण हरिद्रा :- सामान्य रूप में हल्दी का रंग पीला होता है। परंतु इसकी एक जाति काले रंग की होती है। उसे 'कृष्ण हरिद्रा' अथवा काली हल्दी कहते हैं। जहाँ पीली हल्दी पूजा-पाठ, औषधि निर्माण, तेल-उबटन और विविधि खाद्य





॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥



तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



पदार्थों में प्रयुक्त होती है, वहीं काली हल्दी को तांत्रिक क्षेत्र में धन वृद्धिकारक वस्तु के रूप में अत्यधिक मान्यता प्राप्त है। परंतु यह सरलता से नहीं मिलती। हल्दी का पूरा खेत, पूरा ढेर खोजने पर भी 'काली गांठ' नहीं मिल पाती। फिर भी यह सत्य है कि —है यह हल्दी ही। और हल्दी के खेत में ही एक फालतू अनुपयोगी वनस्पति के रूप में अपने आप उगती है। साधारण हल्दी के अलावा एक आँवा हल्दी होती है, एक दारु हल्दी होती है। इसी प्रकार इसे 'काली हल्दी' की संज्ञा प्राप्त है।

काली हल्दी की गांठ में एक विशेष प्रकार की सुगंध होती है — कपूर से मिलती—जुलती। मोथा (मोथैला) घास की जड़ भी अपनी सुगंध के लिए विख्यात है। खस की टट्टियाँ वस्तुतः उसी गाँड़र घास की जड़ से बनती है। उसी जड़ को 'खस' कहते हैं। ठीक उसी प्रकार इस सुगंधित काली हल्दी को 'कचूर' अथवा 'नरकचूर' कहते हैं। खेत या दुकान में पीली हल्दी के मध्य इसे खोजना बहुत दुष्कर काम है। अतः जब भी आवश्यकता हो— किसी पंसारी की दुकान या जड़ी—बूटी भंडार से 'कचूर' के नाम से मांग लें। पहचान के लिए भी देखें — ऊपर काली और तोड़ने पर भीतर हल्की पीली आभा दीख पड़ती है। कपूर जैसी सुगंध भी आती है। इसे किसी शुभ मुहूर्त में ले आयें और विधिवत् पूजन करके तांत्रिक प्रयोग करें। यह धन—सौभाग्य की वृद्धि करने वाली प्रसिद्ध वस्तु है। परंतु इसका लाभ तभी मिलता है, जब इसकी प्राप्ति और पूजा प्रयोग में मंत्र तथा मुहूर्त का बराबर ध्यान रखा जाय।

कृष्ण हरिद्रा के तांत्रिक प्रयोग :- काली हल्दी को सेवनीय तो नहीं, परंतु पूजनीय रूप में अत्यधिक सम्मान प्राप्त है। अनेक प्रकार के दुष्प्रभावों का शमन करने में यह अचूक सिद्ध होती है। नीचे इसके कुछ सरल और व्यावहारिक जीवन के लिए लाभकारी प्रयोग लिखे जा रहे हैं —

उन्माद नाशक तंत्र :- किसी शुभ दिवस पर पंसारी से काली हल्दी (नरकचूर) ले आयें। शुद्ध जल में भीगे कपड़े से पोछकर इसे कटोरी में रखें और लोबान या धूप की धूनी में शुद्ध कर लें और कपड़े में लपेट कर रख दें।

आवश्यकता पर इसका चूर्ण 1 माशा, ताजे पानी के साथ सेवन करायें तथा एक छोटा—सा टुकड़ा काटकर, उसे धागे में पिरोकर, रोगी के गले या भुजा में धारण करा दें। इस प्रयोग से मिर्गी, उन्माद, पागलपन, भ्रान्ति और अनिद्रा जैसे मानसिक रोगों में बहुत लाभ होता है।

अदृश्य बाधा नाशक तंत्र :- काली हल्दी के 7, 9 या 11 दाने बनायें। उन्हें धागे में पिरोकर, धूप, गूगल या लोबान के धुएं में शोधकर पहन लें। जो व्यक्ति ऐसी माला गले या भुजा में धारण करता है, वह ग्रह पीड़ा, वायव्य दोष, अदृश्य छाया पीड़ा, टोने—टोटके और नजर आदि से सुरक्षित रहता है।

धन वर्द्धक तंत्र :- गुरुपुष्प योग में काली हल्दी को सिंदूर और धूप—दीप देकर लाल वस्त्र में लपेटकर एक—दो मुद्राओं सहित बक्स में रख दें। इसके प्रभाव से बक्स में धन की वृद्धि होती रहेगी।

सौन्दर्य साधना :- काली हल्दी का चूर्ण दूध में सानकर चेहरे और शरीर पर लेप करने से सौन्दर्य में वृद्धि होती है। दूध के अभाव में पानी अथवा मीठा तेल भी ले सकते हैं।

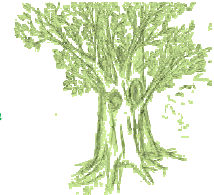
वशीकरण प्रयोग :- चंदन की भांति काली हल्दी का टीका लगायें। यह टीका सम्मोहनकारी होता है। टीके के बीच में अपनी कनिष्ठा अंगुली का रक्त लगाने से प्रभाव और बढ़ जाता है।



✻ नागकेसर ✻

सामान्य परिचय :- यह एक बहुत ही पवित्र और प्रभावशाली वनस्पति है। इसे नागकेसर अथवा नागेश्वर भी कहते हैं। कालीमिर्च के समान गोल, कबाबचीनी की भांति दाने में डण्डी भी लगी हुई, गेरु के रंग का यह गोल फूल घुण्डीनुमा होता है। यह फूल गुच्छों में फूलता है। पकने पर गेरु के रंग का हो जाता है। यद्यपि यह एक सामान्य वनस्पति है, फिर कहीं—कहीं जंगलों में अपने—आप उगती है, सामान्यतः प्राप्त नहीं होती। शौकीन लोग इसके पौधे फुलवाड़ी में लगाते हैं। उसी





तांत्रिक वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



के फूलों की भांति 'नागकेसर' के गुच्छे होते हैं। इसकी गणना सुगंधित और पूजा पाठ के लिए पवित्र पदार्थों में की जाती है। आयुर्वेद की दृष्टि से यह पोषक, सौन्दर्य वर्द्धक और कीटाणु नाशक होती है।

आध्यात्म के क्षेत्र में 'नागकेसर' को बहुत उच्च स्थान प्राप्त है। भगवान शिव को यह बहुत पसंद है। तांत्रिक साधना में भी इसके विविध प्रयोगों का वर्णन मिलता है। यदि पौधे से 'नागकेसर' के फूल प्राप्त नहीं हो रहे हैं, तो पंसारी की दुकान से आसानी से मिल सकते हैं। इसे 'नागकेसर' के नाम से किसी भी जड़ी-बूटी के विक्रेता या पंसारी से मांगें, मिल जाएगी। मूल्य में कुछ महंगी होती है। लगभग पाँच रुपये तोले में मिल जाती है। परंतु यह देख लेना चाहिए कि उसमें कूड़ा-कबाड़, धूल-मिट्टी और पुराने टूटे फूलों का चूरा न मिला हो। प्रयोग के लिए साफ बड़े-बड़े दाने बीनकर किसी डिब्बी में रख लेना चाहिए।

तांत्रिक प्रयोग :- 'नागकेसर' से अनेक प्रकार के तांत्रिक प्रयोग सिद्ध किए जाते हैं। यहाँ कुछ अति सरल और शीघ्र प्रभावी प्रयोग विधियों का उल्लेख किया जा रहा है। वैसे दैनिक पूजा में भी इसे प्रयुक्त किया जा सकता है।

समृद्धकारी शिव पूजन :- कहीं से स्वच्छ, सुंदर, अकीक पत्थर से प्रकृत्या निर्मित नर्मदेश्वर शिवलिंग प्राप्त करें। ध्यान रहे कि उस शिवलिंग में कहीं दरार, चटका, गड्ढा, बिंदु, भग्नता, छिद्र या विरूपता न हो। उसे अण्डाकार, सुडौल, चमकीला, चिकना होना चाहिए। यदि किसी शिवलिंग पर कोई विशेष चिन्ह हो तो अत्युत्तम है। ये चिन्ह इस प्रकार के हो सकते हैं :-

1. **धारालिंग :-** लंबाई में धारियों का घेरा डाले हुए यह लिंग लहलहाती जलधारा जैसा प्रतीत होता है।
2. **अर्द्धनारीश्वर :-** यदि कोई शिवलिंग दो रंग में है और दो समान भागों में उसका प्राकृतिक वर्ण विभाजन है, तो वह अर्द्धनारीश्वर शिवलिंग कहलाता है। मान्यता है कि ऐसा शिवलिंग गौरीशंकर (शंकर-पार्वती) के युग्म रूप का प्रतीक होता है।
3. **चन्द्रमौलीश्वर :-** यदि किसी शिवलिंग में कहीं सफेद रंग का अर्द्धचन्द्राकार चिन्ह बना हो, तो उसे चन्द्रमौलीश्वर कहते हैं। यह दुर्लभ होता है। परंतु प्रभाव की दृष्टि से इसे परम समर्थ माना जाता है। इसमें कहीं प्रायः अर्द्धभाग पर या ऊपर की ओर आधा चंद्रमा बना होता है, तो बादलों में तैर रहे-चंद्रमा की छवि से प्राकृतिक रूप में युक्त होता है। चन्द्रमौली शिवलिंग यदि पारदर्शी हो तो वह बहुत-ही उत्तम माना जाता है।
4. **चक्र लिंग :-** गौर से देखें, किसी शिवलिंग में कहीं 'चक्र' जैसा महीन धारियों से बना गोल अण्डाकार, अंगूठे की रेखाओं से ली गयी छाप जैसा चिन्ह दीख पड़े तो उसे 'चक्र लिंग' कहते हैं। यह भी दुर्लभ होता है।
5. **ज्योतिर्लिंग :-** किसी भी रंग में प्राप्त निर्दोष, चमकीले शिवलिंग से यदि लाल रंग की आभा निकल रही हो, तो उसे 'ज्योतिर्लिंग' कहते हैं। यह बहुत ही दुर्लभ माना जाता है।
6. **तिलक लिंग :-** यदि किसी शिवलिंग में ऊपर माथे पर लगाये गए 'टीके' जैसा चिन्ह हो, तो वह तिलक की भांति प्रतीत होने 'तिलक लिंग' कहलाता है।

इसी प्रकार और भी कई प्रकार के शिवलिंग होते हैं। उन सबका नामाकरण उनके रंग अथवा चिन्ह के आधार पर किया जाता है। अब तक प्रायः 60 प्रकार के शिवलिंग प्रकाश में आ चुके हैं। ये सर्वसुलभ न होकर, प्रारब्ध से ही प्राप्त होते हैं। कोई भी एक शिवलिंग, यदि किसी विशिष्ट श्रेणी का मिल जाए तो अहोभाग्य समझना चाहिए। ऐसा न मिले, तो जो भी सामान्य प्रतिमा मिल जाए उसे घर ले आएँ।

शिवलिंग को किसी सोमवार के दिन स्नान कराकर कटोरी में श्वेत वस्त्र बिछाकर स्थापित कर लें। पीतल और पत्थर के अरघे (जलहरी) भी प्रयुक्त होते हैं। शिवजी पर सफेद चंदन, बेलपत्र, धतूरा, मदार के पुष्प, कनेर पुष्प चढ़ायें। अक्षत का भी विधान है। पुष्प के समय 'नागकेसर' भी अर्पित करें। और कुछ न हो सके तो प्रतिमा को स्नान कराने के बाद उस पर 'नागकेसर' चढ़ायें और धूप-दीप दें। वैसे चंदन और अक्षत, पुष्प इत्यादि की व्यवस्था आसानी से हो सकती है। इस प्रकार श्रद्धाभक्ति पूर्वक नित्य शिवजी का पूजन करें और प्रतिमा पर 'नागकेसर' चढ़ायें। यह साधना बहुत लाभकारी होती है। शिवजी आशुतोष हैं। वे अपने भक्तों पर बहुत जल्दी प्रसन्न हो जाते हैं। 'नागकेसर' अप्रित करने वाला साधक-उनकी कृपा का पात्र अवश्य बनता है।



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



इस प्रकार 'नागकेसर' द्वारा शिवजी की पूजा से साधक को अभीप्सित भौतिक समृद्धि प्राप्त होती है।

नागकेसर पोटली :- एक नवीन पीत वस्त्र में नागकेसर, हल्दी, सुपारी, एक सिक्का, तांबे का टुकड़ा या सिक्का, अक्षत रखकर पोटली बना लें। इस पोटली को शिवजी के सम्मुख रखकर, धूप-दीप से पूजन करके सिद्ध कर लें। फिर आलमारी, तिजोरी या भण्डार में कहीं रख दें। यह परम समृद्धि दायक प्रयोग है। 'नागकेसर' के प्रत्येक प्रयोग में 'ॐ नमः शिवाय' मंत्र का अखण्ड जप करते रहना चाहिए।

नागकेसर और वशीकरण :- रविपुष्य योग अथवा गुरु पुष्य योग या अन्य फिर किसी शुभ मुहूर्त में निम्नलिखित वस्तुएं एकत्र करके खरल में कूट लें। फिर उसे कपड़छन करके घी में मिलाकर चंदन जैसा लेप बना लें। यह लेप माथे पर लगाने से चेहरे पर कुछ ऐसी दिव्य आभा उत्पन्न हो जाती है, जो देखने वालों पर वशीकरण का प्रभाव डालती है।

प्रयोज्य वस्तुएं इस प्रकार हैं – नागकेसर, चमेली के फूल, कूट, तगर, कुमकुम और घी।

स्मरण रहे कि प्रातः स्नान पूजा से निवृत्त होकर शुद्ध स्थिति में ही यह प्रयोग प्रारंभ करना चाहिए। फिर दैनिक पूजा के समय तिलक लगाते रहें। चूंकि लगाने में बहुत-थोड़ी सामग्री लगती है, अतः आवश्यकतानुसार ही प्रयोग करना चाहिए। यह भी हो सकता है कि पहले दिन चूर्ण तैयार करके, कपड़छन करके घी में तर कर लें और उसे किसी प्याली या डिब्बी में रख दें, ताकि उस पर कसाव आदि का प्रभाव न पड़े। काँच, स्टील, प्लास्टिक या चीनी मिट्टी के पात्र में प्रयुक्त करने से तिलक का लेप कई दिनों तक सुरक्षित बना रहता है। लगातार कुछ दिनों तक नियमित रूप में इस तिलक को लगाते रहने से साधक में वशीकरण की शक्ति उत्पन्न हो जाती है।



❀ कमल ❀

सामान्य परिचय :- प्रकृति में सबसे सुंदर देन 'वनस्पति जगत' है, और वनस्पति जगत की सबसे सुंदर उपलब्धि है – फूलों की सृष्टि। सौन्दर्य, चित्ताकर्षण, सुगंध, वर्णानुभूति, स्पर्श सुख और विभिन्न औषधीय प्रयोगों के फूलों का महत्व सर्वोपरि है।

फूल भी कई तरह के होते हैं। वैसे फूल शब्द ही सुंदरता का पर्याय है, परंतु गुण प्रभाव की दृष्टि से फूलों में अंतर होता है। सुगंधित पुष्प भी अपने गंध भेद के कारण व्यक्ति की अनुभूति और तजज्ज्य प्रभावशीलता में अंतर उत्पन्न कर देते हैं। आमतौर पर सुलभ गेंदा, गुलाब, गुलमहदी, गुलदाऊदी आदि पुष्प अपनी नेत्र रंजक मोहकता के लिए प्रसिद्ध हैं। इनमें (गुलाब) भी सुगंध भी होती है, लेकिन सिर्फ देशी गुलाब में। आजकल के प्रचलित कलमी-गुलाब तो मात्र कागजी खिलौने होते हैं-निर्गन्ध और प्रभावहीन। वे केवल अपने आकार से भड़कीले मालूम होते हैं, बस। प्रयोग क्षेत्र में उसका कोई मूल्य नहीं है।

बेला, चमेली, कुन्द, चम्पा आदि पुष्पों में सर्वाधिक सुगंधित और सर्वप्रिय किंतु दुर्लभ केतकी पुष्प होता है, केवड़े का फूल। इसकी मादक सुगंध से साँप भी इसके पेड़ के पास खींचे चले आते हैं। इसकी सुगंध मोहक, मादक, मधुर, दूरगामी और स्थायी होती है। हिन्दू धर्म ग्रंथों में लिखा है कि भगवान दत्तात्रेय को केतकी पुष्प बहुत प्रिय है। उनकी पूजा में इसका पुष्प अथवा इत्र प्रयुक्त होता है। किंतु भगवान शिव की पूजा में इसका निषेध है।

ये समस्त फूल- पौधों, लताओं और बेलों से उत्पन्न होते हैं। किंतु कुछ ऐसे भी पुष्प हैं, जो पानी में पैदा होते हैं। ऐसे पुष्पों को जल पुष्प, जलज अथवा वारिजात कहा जाता है। जलज पुष्पों में सर्वोच्च स्थान 'कमल' को प्राप्त है। द्वितीय स्थान पर कोक (कुमुद) का नाम लिया जाता है। यद्यपि कमल और कुमुद में पर्याप्त साम्य है, परंतु इनमें अंतर तो साम्य से भी अधिक है-रूप, गुण, प्रभाव सभी दृष्टियों से।

भारतीयता का प्रतीक :- कमल भारतीय धर्म, दर्शन, कला, संस्कृति, आध्यात्म और वानस्पतिक सौन्दर्य का बहु चर्चित पुष्प है। इसे इन विषयों का संदेशवाहक भी कहा जाता है। कमल के विषय में कई एक भारतीय मिथक (पौराणिक संदर्भ) लोक विश्रुत है, जैसे –





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



1. महाप्रलय के पश्चात सर्वप्रथम जिस वस्तु की सृष्टि हुई, वह कमल का फूल ही था। सागर तल (क्षीर— सागर) में शेषशायी भगवान विष्णु की नाभि ऐसे एक कमल दण्ड उत्पन्न हुआ, जो जल सीमा पार करके ऊपर आया। उसमें एक सुंदर पुष्प कली के रूप में लगा हुआ था। बाह्य वातावरण के स्पर्श से जब वह कली विकसित हुई, (फूल का रूप धारण किया) तो उससे चतुरानन ब्रह्मा जी उत्पन्न हुए। उन पद्मासीन ब्रह्माजी ने संसार की शून्यता मिटाने के लिए सृष्टि रचना आरंभ की। सृष्टि रचना का आरंभ उन्होंने एक पुरुष और नारी की उत्पत्ति से किया। वही नर—नारी युग्म मनु और शतरूपा के नाम से विख्यात हुए।

2. मान्यता है कि 'लक्ष्मी जी' की उत्पत्ति कमल से हुई है। इसी कारण उन्हें 'पद्माजी' भी कहते हैं।

3. भगवान विष्णु और लक्ष्मी दोनों को कमल पुष्प अति प्रिय है। अतः भक्तजन उनकी कृपा के लिए पूजा में कमल पुष्प अर्पित करते हैं।

4. कमल का पुष्प समृद्धकारी होता है। यह जहाँ भी रहेगा, लक्ष्मी वहाँ अवश्य वास करेंगी। जैसा कि उन्होंने स्वयं ही भगवान विष्णु को अपने वास स्थानों के संदर्भ में बताया है — वसामि पद्मोत्पल शंख मध्ये..... (मैं पद्म, उपल और शंख में वास करती हूँ।)

संदर्भ प्रतीकों में भी कमल को प्रमुखता प्राप्त है। मुख, नेत्र, हथेली, पादतल आदि की कोमलता, शोभा और अरुण वर्णीय आभा के प्रसंग में कमल को सर्वाधिक प्रभावशाली उपादान माना गया है।

कमल के पर्याय :- कमल इतना लोकप्रिय पुष्प है कि उसे अनेक भाषाओं में काव्य और सौन्दर्य के क्षेत्र में प्रयुक्त किया गया है। अपनी भारतीय भाषाओं में भी उसके विभिन्न नाम हैं। केवल हिन्दी, संस्कृत में ही देखें, तो इसकी अनेक संज्ञा मिलती है—अब्ज, अम्बुज, जलज, वारिज, उत्पल, पद्म, कोकनद, शतदल, सहस्रदल, तामरस, राजव आदि। परंतु सर्वाधिक प्रचलित यही नाम है — कमल।

तंत्र साधना में कमल :- तंत्र और आयुर्वेद में कमल के अनेक प्रयोग वर्णित हैं। यह एक द्रष्टव्य बिंदु है कि कमल के अधिकांश प्रयोग सात्विक हैं—पुष्टिकर्म प्रधान। तामसिक साधना में इसका प्रयोग बहुत कम (नगण्य) बताया गया है।



❀ लवंग ❀

सामान्य परिचय :- दक्षिण भारत में मालावार तट और केरल के क्षेत्रों में कई प्रकार के मसालों की प्रचुरता है। कालीमिर्च, जावित्री, इलायची, जायफल, लौंग, दालचीनी, सुपारी आदि के पेड़ वहाँ बहुतायत में पाये जाते हैं। मैंने गोआ, वास्कोडिगामा, पणजी आदि में छोटे—छोटे बच्चों को बंदरगाह, स्टेशन, पार्क आदि में मसाले की पुड़िया बेचते देखा था। वे एक रुपये का एक पैकेट दे रहे थे। हर पैकेट में कोई एक मसाला—दालचीनी, कालीमिर्च, लौंग, इलायची, जावित्री भरा रहता था। मैंने अनुमात निकाला तो पता चला कि एक रुपये का पैकेट अपने यहाँ (उत्तर भारत के नगरों) की अपेक्षा सस्ता है। पैकेट में जो सामान जितनी मात्रा में भरा था, वे यहाँ के ड्योढ़े से भी अधिक था। अस्तु वहाँ, विभिन्न प्रकार के मसाले, में जो यहाँ काफी मंहगे बिकते हैं— विपुलता से उपलब्ध थे। इतिहास बताता है कि सोलहवीं में सदी में जब पुर्तगाल व्यापारी—वास्कोडिगामा यहाँ आया तो इन मसालों की सुगंध और विपुलता देखकर मुग्ध हो उठा था। उसके बाद तो, भारत से मसालों की दुलाई ही प्रारंभ हो गयी थी। इन मसालों की गुणवत्ता से परिचित होने पर वहाँ से वैज्ञानिक इनसे अनेक प्रकार की दवाएं और प्रसाधन तथा पौष्टिक—खाद्य तैयार करने लगे थे। 'लौंग' भी उन मसालों में एक प्रमुख वस्तु थी।

लवंग अर्थात् लौंग—एक लता का पुष्प है। यह लता अपनी कमनीयता और शोभा—सुगंध के लिए प्रसिद्ध है। कवियों ने भी इसे आलम्बन बनाया है :-

'ललित लवङ्ग लते परिशीलन, कोमल मलय समीरे..... (गीत गोविन्द — जयदेव)





॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥



तांजौवत वनस्पतिर्यौ : वनस्पति तंज



सामान्य प्रयोग :- हमारे देश में साग-सब्जी और विभिन्न प्रकार के भोजनों में कुछ विशेष वस्तु डाली जाती है, जिन्हें 'मसाला' कहते हैं। हल्दी, धनिया, मिर्चा, जीरा, मेथी, अजवायन आदि मसाला पदार्थ माने जाते हैं। उन्हीं में कुछ विशेष वस्तुओं को मिला देने पर वह खाद्य सामग्री और स्वादिष्ट बन जाती है। उन विशेष वस्तुओं से सम्मिलित रूप को 'गरम मसाला' कहते हैं। गरम मसाले के घटक ये हैं — कालीमिर्च, लौंग, जावित्री, बड़ी इलायची, तेजपत्ता और दालचीनी। जायफल, चित्रक भी आवश्यकतानुसार मिला लिए जाते हैं। इस प्रकार 'लौंग' को गरम मसाले में प्रमुखता प्राप्त है। इसके अतिरिक्त यह मुख शोधन के लिए पान में भी प्रयुक्त होती है।

हमारे देश में पान-सुपारी खाने का पुराना रिवाज है। पान में रखकर खाने के लिए विभिन्न प्रकार के मसाले बनाये जाते हैं। उनमें लौंग भी डाली जाती है। मसाला न होने पर भी, लोग पान में लौंग डाल लेते हैं। जो पान नहीं खाते हैं, केवल सुपारी खाते हैं, वे भी सुपारी, कत्था, लौंग का प्रयोग करते हैं। वस्तुतः मुख-शोधन के लिए लौंग सर्वश्रेष्ठ वस्तु है।

तांत्रिक प्रयोग :- प्रयोग भेद से लौंग को तंत्र शास्त्र में बहुत उपयोगी माना जाता है। भूत-प्रेत निवारण, सम्मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, विद्वेषण, रोगनाश और सुरक्षा जैसे कार्यों में मंत्र सिद्ध, लौंग का प्रयोग निश्चित लाभ देता है।

वशीकरण हेतु :- सम्मोहन-वशीकरण के लिए किसी रविपुष्य योग के दिन सात लौंग (फूलदार) लेकर, उन्हें धूप-दीप देकर निम्नलिखित मंत्र द्वारा सिद्ध करें — ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ।

यह मंत्र 11 माला (1100 बार) जपना चाहिए। तदुपरांत इसी मंत्र से 21 आहुतियाँ देकर हवन करें। फिर लौंग को कहीं सुरक्षित रख दें। आवश्यकतानुसार एक लौंग पुनः सात बार वही मंत्र पढ़कर अभीष्ट व्यक्ति को खिला दें। यह कार्य रविवार या मंगल के दिन विशेष प्रभावी रहता है। संभव हो तो, उसे 3-4 दिनों तक वह लौंग खिलाते रहें। यह प्रयोग उस व्यक्ति को आपकी ओर आकृष्ट कर देगा। (यथासंभव ऐसे प्रयोग किसी दुष्कामना-दुरभिसंधि से प्रेरित होकर नहीं करने चाहिए।)

श्री समृद्धि के लिए :- धन की लालसा सभी को होती है। यदि आपको अर्थ संकट ने ग्रस्त कर रखा है, तो उससे त्राण पाने के लिए — आप किसी देवी स्वरूप की उपासना करें और नित्य पूजा के समय, उस देवी की प्रतिमा (यंत्र या चित्र जो भी उपलब्ध हो) पर लौंग भी अर्पित करें। यह प्रयोग आपकी आर्थिक स्थिति में भी संतोषजनक परिवर्तन कर देगा।

भुज युग्म साधना में :- भुजयुग्म अर्थात् हाथाजोड़ी की साधना में लौंग अवश्य चढ़ायें। इसके साथ ही माता महाकाली जी का मंत्र प्रतिदिन 7 या 11 माला जपें। ध्यान रहे कि भुजयुग्म में देवी चामुण्डा का वास रहता है, जो देवी महाकाली का प्रतिरूप है। अतः महाकाली जी का मंत्र जपने से उनकी कृपा अवश्य प्राप्त होती है। महाकाली जी का सबसे सरल मंत्र इस प्रकार है — ॐ किलि किलि स्वाहा ।

इस मंत्र को नित्य जपें। जप के पूर्व हाथाजोड़ी को लौंग एवं धूप-दीप से पूजा करें और कोई सिक्का चढ़ायें। यह प्रयोग साधक की आर्थिक दशा सुधार देगा।

जुम्बकी साधना में :- हाथाजोड़ी की तरह 'जुम्बकी' अर्थात् सियारसिंगी की साधना में भी लौंग का प्रयोग होता है। कुछ लोग हाथाजोड़ी और जुम्बकी— दोनों को एक साथ रखकर पूजते हैं। कारण कि जुम्बकी में भी चामुण्डा देवी का वास माना जाता है। जो भी हो, यह निश्चित है कि जुम्बकी साधना में लौंग का प्रयोग अवश्य ही लाभकारी रहता है। श्री-समृद्धि पाने के लिए, भयमुक्त होने के लिए, सम्मान और अनुकूलन वातावरण के लिए, वांछित कार्य में सफलता पाने के लिए जुम्बकी साधना बहुत लाभकारी होता है। लौंग अर्पित करने से जुम्बकी और अधिक प्रभावशाली हो जाता है।

प्रेतबाधा निवारण :- यदि किसी व्यक्ति को भूत-प्रेत की बाधा ने ग्रस्त कर रखा है, तो रविवार या मंगलवार के दिन स्नान करके, धूपबत्ती जला लें और आसन पर बैठकर सामने किसी कटोरी में 11 लौंग रख लें। इन्हें धूपबत्ती के धुएँ में शोध लें। उत्तम होगा कि धूपबत्ती पर लोबान भी छिड़क दें और उसके धुएँ में लौंग का शोधन करें। तत्पश्चात् नीचे लिखे मंत्रों में से कोई एक मंत्र 11 माला जपें। माला में 108 दाने होने चाहिए। मंत्र जप के पश्चात् माला को लौंगों से स्पर्श करा दें, फिर उन्हें सुरक्षित रख दें। यह 'लौंग' प्रेत-बाधा निवारक हो जाती है। आवश्यकता पड़ने पर 2 लौंग निकालें और सात





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



बार पुनः वही मंत्र पढ़कर उन पर फूंक मारें और किसी कपड़े के सहारे, रोगी की भुजा पर बांध दें। वह समस्त प्रकार की वायव्य बाधाओं से मुक्त हो जाएगा।

मंत्र :- 1. ॐ ह्रीं हनुमते रामदूताय नमः। 2. ॐ दुं दुर्गायै नमः। 3. ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे।

दंतपीड़ा नाशक प्रयोग :- 1. लौंग चबाने से दंतपीड़ा नष्ट हो जाती है। 2. लौंग का तेल लगाने से दाँत— मसूढ़ों की सारी व्याधियाँ मिट जाती हैं। 3. किसी भी मंजन में लौंग पीसकर मिला दें, उसकी गुणवत्ता बढ़ जाएगी।

स्वर भंग निवारण :- लौंग चबाकर चूसते रहें। इसके पूर्व गर्म पानी में नमक डालकर गरारा भी करें, कण्ठावरोध दूर हो जाएगा। कुछ लोगों की धारणा है कि लौंग का प्रयोग स्वर को भारी कर देता है। यानी आवाज कर्कश (मोटी) हो जाती है। कुछ लोग कहते हैं कि इसके सेवन से जीभ मोटी हो जाती है। वैसे, यह सब अंधविश्वास है। लौंग में कीटाणु नाशक शक्ति होती है। इसका तेल तीक्ष्ण सुगंध वाला और उड़नशील होता है, अतः खुला नहीं रखना चाहिए। लौंग का तेल पानी में मिलाकर पीने से चित्त प्रसन्न हो जाता है।



❀ कर्पूर ❀

सामान्य परिचय :- मोम की तरह कोमल, मिश्री की भांति सफेद, सुगंध में प्रिय और तीव्र, मणियों को सामूहिक लेकर पतली पर्त में जमा हुआ, लगभग सभी जातियों—धर्मों में पूजा—पाठ, मंगल कार्य, आरती—हवन आदि में प्रयुक्त होने वाला कर्पूर नामक पदार्थ सर्वत्र उपलब्ध रहता है। किसी भी पंसारी, औषधि विक्रेता और सुगंध भंडार से इसे प्राप्त किया जा सकता है। इसे विविध कार्यों में प्रयुक्त किया जा सकता है। बॉक्स में कपड़ों के साथ, आरती में, दीपक पर, दवाओं में पीड़ा और विष निवारक घटक के रूप में, तंत्र—मंत्र आदि में एक पवित्र उपादान के रूप में कर्पूर का प्रयोग हम आये दिन करते रहते हैं। इसकी सुगंध तीव्रगामी, तीखी, ठण्डी, मादक, चेतनाकारी और प्रदूषण नाशक होती है। अपने अद्भुत गुणों के बावजूद यह पदार्थ सस्ता और सुलभ होता है। किसी भी छोटे—बड़े बनिये की दुकान से इसे खरीद सकते हैं।

वस्तुतः कर्पूर एक पौधे का मानवकृत सुगंधित तत्व है। इधर वैज्ञानिक प्रगति ने मिलावट और धोखाधड़ी की भी प्रगति कर दी है। अतः अन्य वस्तुओं की भांति कर्पूर भी नकली मिलने लगा है। फिर भी इसकी पहचान सरलता से हो जाती है। असली कर्पूर की सुगंध तीखी टिकाऊ और ठंडी होती है। जबकि नकली कर्पूर में महक कम, धीमी और अस्थायी होती है। असली कर्पूर कुछ अधिक समय तक टिकता है, जबकि नकली कर्पूर थोड़े समय में उड़ जाता है। वैसे तो यह उड़नशील होता ही है, परंतु यदि इसको डिब्बे में ऐसे ढंग से बंद कर दिया जाय कि हवा का प्रवेश न हो सके, तो यह उड़ने नहीं पाता। हवा का स्पर्श ही इसे उड़ा देता है। इसकी सुरक्षा और स्थायित्व के लिए इसकी डिब्बी में लोग 5—7 लौंग रख देते हैं। लौंग के साथ रहने पर यह उड़ने से बचा रहता है।

उत्पत्ति की अद्भुत मान्यता :- भारतीय ज्योतिष में 27 नक्षत्रों की अवस्थिति विभिन्नता तारा समूहों के रूप में आकाश में मानी गयी है। ये सभी नक्षत्र चलायमान हैं और विभिन्न ग्रहों की परिक्रमा करते रहते हैं। देखने में भले ही ये सभी तारे आकाश की नीली चादरों में टंगे हुए से प्रतीत होते हैं, परंतु वास्तविकता यह है कि ये सब एक—दूसरे से सर्वथा स्वतंत्र मुक्त इधर—उधर बिखरे हुए हैं। पारस्परिक आकर्षण शक्ति ने इन्हें एक—दूसरे से बांध रखा है, इसलिए विशृंखल न होकर, एक नियमित गति से, नियमित मार्ग पर चलायमान विभिन्न ग्रहों (तारों) की परिक्रमा करते रहते हैं।

इन 27 नक्षत्रों में एक नक्षत्र है—स्वाति। मान्यता है कि जिस समय स्वाति नक्षत्र आकाश में उदित हो, उस समय की वर्षा (हालांकि स्वाति नक्षत्र की अवधि में ऐसा बहुत कम होता है।) का जल यदि केले के पौधे पर (पत्तों से उद्गम संधिस्थल में) गिरे तो उससे कर्पूर की उत्पत्ति होती है। इसी प्रकार उक्त स्वाति नक्षत्र का जल साँप के मुँह में गिरे तो महा भयंकर विष बन जाता है। सीपी के मुख में गिरे तो मोती को जन्म देता है।

कहा नहीं जा सकता है कि इस धारणा का आधार क्या है, परंतु यथार्थ यह है कि आज के युग में प्राप्त मोती, विष और कर्पूर की रचना—स्वाति बूंदों से न होकर मानवकृत उपायों से होती है। बांस की कोठी से स्वाति बूंद के द्वारा बंसलोचन



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०— हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



की उत्पत्ति भी ऐसी ही मिथकीय कहानी लगती है। आज ये सभी वस्तुएं विभिन्न घटकों के संयोग से मानव द्वारा तैयार की जा रही है। अस्तु, कपूर जिसे कर्पूर, काफूर, कैम्फर भी कहते हैं, उसी रूप में ग्राह्य और प्रयोज्य है, जैसा वह बाजार में मिलता है। तांत्रिक प्रयोगों के लिए वह निश्चित रूप से लाभकारी सिद्ध होता है।

कपूर के विभिन्न तांत्रिक प्रयोग :- तंत्र साधना में सात्विक प्रयोगों के लिए कपूर को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। विभिन्न प्रकार के लेप और तिलक तैयार करने में इसका प्रयोग होता है। आरती-दीप में भी यह बहुत शुभ और प्रभावशाली माना जाता है। प्रयोग भेद से इसको ज्वरादि रोगों के निवारण हेतु औषधीय घटक के रूप में प्रयोग किया जाता है। यहाँ कुछ विशिष्ट तांत्रिक क्रियाओं में इसकी उपयोगिता पर प्रकाश डाल रहे हैं :-

- 1. धन वृद्धि की अद्भुत मान्यता :-** श्रीयंत्र, हाथाजोड़ी, दक्षिणावर्ती शंख, दत्त यंत्र, जुम्बकी, श्रीफल, एकाक्षी नारियल आदि की साधना में (जो भी आप कर रहे हों, पुष्पादि के साथ) कपूर भी अप्रति करें। इससे उक्त तांत्रिक वस्तुओं की प्रभावशीलता बढ़ जाती है।
- 2. मस्तक पीड़ा में :-** कपूर को सूँघते रहें। किसी तेल या गो-घृत में घिसकर, माथे पर लगायें, पीड़ा शांत हो जाएगी।
- 3. दुर्गंध और कीटाणु निवारण के लिए :-** कहीं दुर्गन्ध फैल रही हो अथवा किसी प्रकार के कीटाणु फैल गये हों, वहाँ कपूर का चूर्ण छिड़क देने से वातावरण शुद्ध सुगंधित और स्फूर्तिदायक हो जाता है।
- 4. सौभाग्य वर्द्धन हेतु :-** घर में पूजा के समय इष्टदेव की आरती में कपूर का प्रयोग करें। यह अत्यधिक ज्वलनशील पदार्थ है। यह जहाँ भी जलता है—समस्त प्रकार के वायव्य दोष समाप्त हो जाते हैं।
- 5. हवन सामग्री में :-** तामसी साधना को छोड़कर सभी साधनाओं के हवन में कपूर का प्रयोग उसके प्रभाव को बढ़ा देता है।
- 6. मृत-आत्माओं के आह्वान में :-** आकर्षण के प्रयोगों के अंतर्गत, किसी मृतात्माओं के बुलाने के लिए कपूर का धुआँ और कपूर के दीप का प्रकाश विशेष प्रभावी होता है। ध्यान रहे कि प्रेतात्मा ग्रस्त व्यक्ति को कपूर नहीं देना चाहिए, अन्यथा उसका कष्ट बढ़ जाता है।
- 7. यंत्र निर्माण की स्याही :-** आध्यात्मिक साधना में मंत्र और तंत्र की तरह यंत्र को भी बहुत महत्व दिया गया है। यंत्र प्रायः भोजपत्र पर लिखे जाते हैं। ताम्रपत्रों पर भी यंत्रों की रचना की जाती है। उत्कीर्णित यंत्र स्थायी और सुरक्षित होते हैं। यंत्र रचना में विभिन्न प्रकार के पदार्थ स्याही के रूप में इस्तेमाल किए जाते हैं। अष्टगंध एक ऐसा ही मिश्रण है, जो यंत्र रचना के लिए सर्वमान्य स्याही है। किंतु प्रयोग भेद से अन्य प्रकार की स्याहियाँ भी तैयार की जाती हैं। कितने ही प्रयोगों में रक्त, वसा, वनस्पति विशेष का रस, दूध, घी आदि को स्याही की तरह प्रयुक्त करने का विधान मिलता है। परंतु वह काली स्याही सामान्य बाजारू स्याही न होकर—कर्पूर कज्जल निर्मित स्याही होती है। इसके लिए कपूर को जलाकर उसके ऊपर कोई शुद्ध पात्र ढंक दिया जाता है। उत्तम होगा कि नीचे कटोरी में मिट्टी की ही कोई नयी कटोरी ओँध दें। चांदी या धातु की कटोरी भी लेकिन पीतल की नहीं प्रयुक्त हो सकती है। इस तरह कपूर की लौ का धुआँ—ऊपर वाली कटोरी में जम जाएगा। बाद में उसे निकाल कर साफ कागज की पुड़िया में रख लें। यह काजल विभिन्न प्रकार के यंत्रों की रचना में काम आता है। शनि यंत्र या यक्षिणी-भैरवी आदि की साधना में इस काजल को वरीयता प्राप्त है।

हस्त रेखा मर्मज्ञ भी इसी काजल को हस्त चित्र प्राप्त करने के लिए प्रयोग में लाते हैं। सामान्य रूप से यह काजल आँखों में लगाने पर विभिन्न नेत्र दोषों को शांत कर देता है।

कर्पूर कज्जल जब भी बनायें, कोई शुभ मुहूर्त अवश्य रहे। रविपुष्य, गुरुपुष्य, दीपावली की रात्रि या विजयादशमी जैसे योग इस कार्य के लिए उपयुक्त होते हैं।





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



❀ सिंदूर ❀

सामान्य परिचय :- सिंदूर से सभी परिचित हैं। हिन्दू समाज के तो घर-घर में इसका प्रयोग होता है। महिलाएं इसे सौभाग्य (सुहाग) का प्रतीक मानकर माथे और सिर पर, माँग में धारण करती हैं। कुमारी कन्याएं माँग नहीं भरतीं। माँग भरने का अधिकार केवल विवाहिता स्त्री को होता है। वैधव्य की स्थिति में पति से वंचित होने के साथ-साथ वह पति के इस गौरवशाली चिन्ह (सिंदूर धारण-माँग भरना तथा बिन्दी लगाना) से भी वंचित हो जाती हैं।

किंतु सिंदूर को महिलाओं के लिए सौभाग्य चिन्ह होने के अतिरिक्त अन्य कारणों से भी महत्व प्राप्त होता है। लगभग सभी देवी-देवताओं पर यह अप्रित किया जाता है। सीताजी, राधाजी, पार्वती और दुर्गाजी तथा उनके समस्त प्रतिरूप सिंदूर से अलंकृत किए जाते हैं। गणेशजी और हनुमानजी को भी सिंदूर अप्रित किया जाता है।

सिंदूर दो प्रकार का होता है—लाल और पीला। महिलाओं द्वारा प्रायः लाल सिंदूर ही प्रयोग किया जाता है। परंतु पूजन-विधान में पीले सिंदूर को विशेष महत्व प्राप्त है।

सिंदूर विष भी है और अमृत भी। प्रयोग भेद से दोनों तरह के (पोषक और मारक) प्रभाव दिखाता है। अब यह बात अलग है कि प्रयोग किया जाने वाला सिंदूर असली है या नकली। नकली सिंदूर का प्रभाव—आशा के प्रतिरूप भी हो सकता है। वह चाहे तंत्र से संबंधित हो, चाहे आयुर्वेद से। श्रृंगार के लिए भी शुद्ध सिंदूर ही ठीक रहता है। मिलावटी चीजें बाद में हानिकारक हो जाती हैं। सिंदूर से अनेक प्रकार के घाव—पूरक मलहल आदि बनाये जाते हैं। बंदर-कुत्ता जैसे जानवरों के काट लेने पर घाव भरने के लिए सिंदूर का प्रयोग किया जाता है।

तांत्रिक प्रयोग :-

1. मंगलवार के दिन शुद्ध घी में सिंदूर मिलाकर वह लेप यदि हनुमान जी की प्रतिमा पर चढ़ाया जाय, तो इससे वे भक्त पर प्रसन्न होते हैं।
2. प्रत्येक पूजा में—गौरी, गणेश, दुर्गा, पार्वती, सीता आदि देवियों के चित्र, यंत्र, प्रतिमा पर सिंदूर अवश्य अप्रित किया जाता है। ध्यान रहे कि देवी प्रतिमा पर श्वेत चंदन का लेप वर्जित है। उन्हें केवल सिंदूर ही चढ़ाना चाहिए। कहीं-कहीं प्रयोग भेद से दुर्गाजी तथा उनके प्रतिरूपों पर लाल चंदन का लेप अर्पित करने का विधान है।
3. सिंदूर धनदायक भी होता है।
4. हाथाजोड़ी पर सिंदूर चढ़ाकर पूजा करने से वह समृद्धि और सम्मोहन प्रदान करती है।
5. सियारसिंगी पर चढ़ाया गया, सिंदूर भी वशीकरण और सम्मोहन का प्रभाव उत्पन्न करता है।
6. हनुमानजी की प्रतिमा पर चढ़ाया हुआ सिंदूर माथे पर टीका रूप में लगाने से ओज-तेज की वृद्धि होती है।
7. माता पार्वती की प्रतिमा पर चढ़ाये गये सिंदूर को धारण करने वाली महिलाएं सौभाग्य संपन्न होती हैं। उसे वे पार्वती जी का प्रसाद मानकर उनकी कृपा की आकांक्षा रखती हैं।
8. आयुर्वेद में सिंदूर के शोधन का विधान है। शोधित सिंदूर अनेक रोग-विकार दूर करता है। इसके विपरीत यदि कोई व्यक्ति सादा सिंदूर (नित्य प्रयोग में काम आने वाला) खा ले या चाट ले, वह अनेक व्याधियों से ग्रस्त हो जाता है।
9. सिंदूर भार में अधिक होता है। अतः पूजा या औषधि के लिए हल्का सिंदूर कभी नहीं लेना चाहिए। वह नकली होने के कारण वांछित प्रभाव नहीं दे पाता।



❀ श्री फल ❀

सामान्य परिचय :- विभिन्न ग्रंथों में बेल फल, नारियल और अनार को श्रीफल कहा गया है। परंतु तंत्र शास्त्र में जिस विशिष्ट फल को 'श्रीफल' की संज्ञा दी गयी है, वह एक बहुत ही छोटा फल है। देखने में यह बड़ी इलायची जैसा, रूपाकार में नारियल के फल जैसा होता है। इसके फल पर रेशे (जटाएं) होते हैं। टहनी की ओर इस पर भी तीन बिंदु पाए



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)

परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.

Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥



55

तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



जाते हैं। इस तरह यह नारियल का संक्षिप्त संस्करण कहा जा सकता है। अंतर केवल आकार और रंग का है। यह सफेद, हल्का पीलापन लिए ठीक छोटी इलायची के रंग का होता है। बनावट बिल्कुल नारियल जैसी होती है। इसे मिनी कोकोनट कह सकते हैं। अस्तु श्रीफल नामक यह फल भी समुद्रतट की उपज है और तांत्रिक वस्तुएं बेचने वाले के पास आसानी से, बहुत कम दामों में मिल जाता है। देखने में छोटा, उपयोग में नगण्य, मूल्यवत्ता में सामान्य, परंतु प्रभाव में अद्भुत और गुणवत्ता में असामान्य यह फल यदि विधिवत प्रयुक्त किया जाय तो चमत्कारी प्रभाव दिखाता है।

तांत्रिक प्रयोग :- इसे किसी शुभ दिवस पर घर ले आएं और धो-पोछकर एकांत पवित्र स्थान में कपड़े में लपेट कर रख दें। गुरुपुष्य अथवा अन्य किसी अति शुभ मुहूर्त में इसे लाल कपड़े पर रखें। (स्नान पूजा के बाद पूरी पवित्रता से यह साधना करें।) सिंदूर, कपूर, लौंग, छोटी इलायची चढ़ाएं। धूप-दीप दें और कोई मुद्रा (सिक्का) अप्रित करें। तदुपरांत 7, 9 या 11 माला का मंत्र जप करें। फिर उसे किसी कटोरी में (कपड़े सहित) रख दें। उसकी नित्यप्रति देव प्रतिमा की भांति सिंदूर, धूप-दीप आदि से पूजा करते रहें। कभी-कभी सिक्के भी चढ़ाते रहें। श्रीफल की यह साधना द्रव्यदायी होती है। ऐसा विधिवत् पूजित 'श्रीफल' जहाँ भी रहता है, वहाँ लक्ष्मीजी की पूर्ण कृपा रहती है। धन, धान्य, संपदा की वृद्धि के लिए यह प्रयोग बहुत ही सरल और प्रभावशाली है। इसका भी मंत्र वही है :- ॐ श्रीं श्रियै नमः ॥

दुकान में रखें :- नवरात्रि के अवसर पर किसी दिन या फिर अष्टमी के दिन, अपनी दुकान, प्रतिष्ठान, कार्यालय-जहाँ भी लेन-देन या कोई व्यवसाय होता हो, यह मंत्र सिद्ध 'श्रीफल' किसी सुरक्षित स्थान पर रख दें। उसे नित्य धूप-दीप दें और कोई सिक्का चढ़ाकर 7 बार मंत्र जप द्वारा स्तुति करें। यह प्रयोग उस प्रतिष्ठान/दुकान की आर्थिक स्थिति में लाभकारी परिवर्तन कर देगा।

बक्से में रखें :- उपरोक्त विधि से 'श्रीफल' को यदि बक्स में रख लिया जाय तो उसमें मुद्रायें बढ़ने लगती हैं। किंतु यह तथ्य भी ध्यान में रखना चाहिए कि उस बढ़ती हुई राशि से कभी पैसे निकाले नहीं। निकालने से वृद्धि रुक जाती है। सामान्य खर्च के लिए अलग पैसे रखे रहें, परंतु बक्से में रखे श्रीफल के पैसे कभी न लें। बल्कि उस पर कुछ-न-कुछ चढ़ाते रहें। यह प्रयोग अनुभूत है और चमत्कारी प्रभाव दिखाता है।

गोलक में रखें :- यदि आपको गोलक से प्रेम है, तो उसमें बड़ा छेद बनाकर पूजित-शोधित 'श्रीफल' रख दें। तदुपरांत गोलक का वह बड़ा छेद बंद कर दें-केवल सिक्का डालने भर की दरार रह जाय। गोलक को नित्य धूप-दीप दें और सुविधानुसार उसमें पैसे भी डालते रहें। इस प्रयोग से वह अपेक्षाकृत कम समय में ही भर जाएगी।

अन्न भंडार में :- अनाज के गोदाम (अन्न भण्डार) में श्रीफल रखने से वह कभी रिक्त नहीं होता, उसमें सदैव अन्न का ढेर लगा रहता है। यदि कीड़े-मकोड़ों, चूहों और आग-पानी से सुरक्षित रखा जा सके तो अन्न का संग्रह सर्वश्रेष्ठ होता है -

धान्यानां संग्रहोः राजनुत्तम सर्व संग्रहात्। बुभुक्तं हि मुखे रत्नं प्राण धारणाम् ॥



❀ नागदमन ❀

सामान्य परिचय :- वनस्पति जगत में असंख्य पेड़-पौधे और लताएं प्राप्त होती हैं। सबका विवरण बता सकने वाला आज तक कोई भी ग्रंथ संसार की किसी भी भाषा में नहीं रचा जा सका। कितने ही पौधे तो ऐसे हैं, जिन्हें हम साधारण मानकर उपेक्षित किए रहते हैं, जबकि तथाकथित तुच्छ और अनुपयोगी पौधे अपने में स्वर्ण के समान मूल्यवान, अमृत के समान आरोग्य गुण और वज्र के समान सुरक्षात्मक शक्ति संजोये रहते हैं। किंतु अज्ञानवश हम उनसे परिचित नहीं हैं, इसलिए उनका कोई उपयोग नहीं कर पाते।

'नागदमन' का एक ऐसा पौधा है, जो अपनी हरियाली और दण्डाकार संरचना के लिए शोभायमान घोषित है। फलतः उसे हम शौक पूरा करने के लिए गमलों में लगा देते हैं। इसके पत्ते छोटे तनिक लंबाई में गोल गहरे हरे रंग के होते हैं। यह पौधा अपनी सीध में ऊपर की ओर बढ़ता है। इसकी शाखाएं भी ऊर्ध्वमुखी होती हैं। इसका एक मात्र आकर्षण इसकी



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)
परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.
Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



हरीतिमा है, जो बारह महीने समान रहती है। कहीं से भी उखाड़कर इस पौधे की शाखा लगायी जा सकती है। यह एक सस्ता और सर्वसुलभ पौधा है। बहुत से लोग इसे बाड़ के रूप में अपनी फुलवारी या पार्क में किनारे-किनारे लगा देते हैं।

पर्यायवाची शब्द :- मान्यता है कि जहाँ यह पौधा होगा, वहाँ साँप नहीं आएगा। साँप इसके वर्ण से, इसके गंध से और इसके अदृश्य प्रभाव से आतंकित रहता है। सप्र का दमन करने की शक्ति से संपन्न होने के आधार पर ही इसे यह नाम 'नागदमन' दिया गया है। पर्यायवाची के रूप में इसके लिए ये शब्द भी प्रचलित हैं — नागपुष्पी, नागदमनी, सप्रदमन, वनकुमारी, महायोगेश्वरी आदि।

तांत्रिक प्रयोग :- रविपुष्य योग के दिन 'नागदमन' की जड़ को विधिवत् लायें। उसे धोकर साफ करें। फिर अन्य वानस्पतिक प्रयोग की भांति इसकी भी पूजा करें। पूजा के समय अपने इष्टदेव का मंत्र 11 माला जपें। यदि ऐसा कोई मंत्र आपके पास नहीं है तो शिवजी को स्वामी मानकर, उनकी स्तुति में शिव मंत्र का जप करें। शिव मंत्र का सबसे सरलतम रूप यह है :- ॐ नमः शिवाय ॥

11 माला मंत्र जपकर सामान्य हवन सामग्री से हवन करें। आहुति देते समय भी उपर्युक्त मंत्र पढ़ते रहें। हवन में कम से कम 51 या 108 आहुतियाँ देनी चाहिए। आहुति के पश्चात हवनकुण्ड के धुएँ में इसे शोध लें और फिर कहीं सुरक्षित रख दें। तांत्रिक प्रयोग के लिए परम उपयोगी होता है। नागदमन की जड़ के कुछ तांत्रिक प्रयोग इस प्रकार बताये गये हैं :-

मेधा शक्ति बढ़ाने के लिए :- किसी-किसी व्यक्ति की बुद्धि मंद होती है। वह न तो किसी बात को दूर तक सोच पाता है और न देर तक याद रख सकता है। उसकी स्मरण शक्ति और धारणा शक्ति बहुत क्षीण होती है। ऐसे लोगों को नागदमन का प्रयोग लाभकारी होता है। किसी 'रविपुष्य' के दिन नागदमन का जड़ लायें। उसे धोकर धूप-दीप से पूजा करें। फिर 'ऐं ह्रीं नमः' मंत्र का 11 माला जप करके, वह जड़ किसी ताबीज (कवच) के सहारे गले में पहन लें। यह प्रयोग बुद्धि का विकास करने में बहुत सक्षम होता है।

सम्मान और विजय प्राप्ति के लिए :- समाज में अपने वर्ग-विभाग में, संस्था और दल में कहीं भी मान-सम्मान पाने की लालसा हो, तो नागदमन की जड़ उपर्युक्त विधि से धारण करें। सर्वत्र सम्मान और विजय प्राप्ति की स्थिति बनेगी। प्रतियोगिता, युद्ध, विवाद, प्रतिस्पर्धा आदि में यह प्रयोग साधक की पूरी रक्षा करता है।

ग्रह-दोष निवारण :- उपर्युक्त विधि से 'सप्रदमन की जड़' धारण करने से समस्त प्रकार के ग्रहदोष तथा भूत-प्रेतादि की बाधा समाप्त हो जाती है।

धन-समृद्धि के लिए :- घर में 'नागदमन का पौधा' गमले में रविपुष्य के दिन लाकर लगायें। साथ-ही पूर्वोक्त विधि से इसकी जड़ धारण करें। धनाभाव दूर हो जाएगा।



❀ उदुम्बर ❀

सामान्य परिचय :- भारतीय वनस्पतियों में क्षीरद-वृक्षों को विशेष महत्व दिया गया है। यहाँ तक कि क्षीरद घासों भी महत्वपूर्ण मानी जाती हैं। क्षीरद शब्द का अर्थ है-दूध देने वाली (क्षीर=दूध, द = देने वाली)। अर्थात् वह वनस्पति, जिससे दूध निकलता हो। ऐसी वनस्पतियों में प्रमुख हैं-बरगद, पीपल, कटहल, बड़हल, पाकर, गूलर, मदार और सेंहुड़ आदि। इनमें गूलर नामक वृक्ष एक सर्वसुलभ पेड़ है, जो कहीं भी देखा जा सकता है।

आम, नीम की तरह अधिक तो नहीं, फिर भी हर गाँव या उसके आसपास कहीं-न-कहीं एकाध गूलर का पेड़ अवश्य प्राप्त होता है। यह भारी-भरकम होता है। इसकी लकड़ी जल में सड़ती नहीं, अतः कुँआ बनवाने वाले ईंटों की दीवार खड़ी करने के पूर्व आधार रूप में नींव के स्थान पर गूलर की लकड़ी का एक गोल पहिया जैसा बैठा देते हैं। उसी के ऊपर ईंटे जमाकर गोलाकार दीवार खड़ी की जाती है। इस प्रकार नींव में पड़ी गूलर की वह लकड़ी दशाब्दियों तक पानी में पड़ी रहने पर भी सड़ती नहीं। इसी गूलर वृक्ष को उदुम्बर कहते हैं।





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



गूलर में झरबेरी के बराबर फल लगते हैं, जो क्रमशः बढ़ते हुए नींबू के बराबर तक हो जाते हैं। ये फल कच्ची अवस्था में हरे और पकने पर लाल हो जाते हैं। पके फल मीठे, पौष्टिक, ठण्डे और पाचक होते हैं। किंतु एक कठिनाई यह भी होती है कि प्रायः गूलर के फलों में छेद करके छोटे-छोटे उड़ने वाले पतंगे (भुनगे) घुस जाते हैं, जो उसका रस चूसा करते हैं। अतः गूलर खाने वाले को यह सावधानी बरतनी पड़ती है कि वे छेददार फल न लें। और कोई भी फल (गूलर) खाने के पहले उसे तोड़कर भीतर भली-भांति देख लें कि कहीं कोई पतंगा तो नहीं बैठा है? कच्चे गूलर में पतंगे नहीं होते। उसको सब्जी तथा अन्य अनेक खाद्य पदार्थों के रूप में (पकौड़ी आदि) लोग बड़े चाव से खाते हैं।

तांत्रिक प्रयोग :- गूलर को तंत्र साधना में महत्वपूर्ण घटक माना जाता है। यहाँ उसके कुछ प्रयोग लिखे जा रहे हैं -

1. **दत्त साधना में :-** गूलर की लकड़ी हवन में प्रयुक्त होती है। दत्त साधना में गूलर वृक्ष के नीचे जप करने तथा हवन में गूलर की लकड़ी करने का विधान है।
2. **धन-वर्द्धक प्रयोग :-** रविपुष्य के दिन प्रातःकाल शुभ-मुहूर्त में, पूर्व निमंत्रण के अनुसार उदुम्बर की जड़ ले आयें। घर लाकर इसे विधिवत स्नान करायें। और धूप-दीप से उसकी पूजा करें। पूजनोपरांत निम्नलिखित मंत्र का 11 माला जप करें - ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ।

जप के पश्चात् यही मंत्र पढ़ते हुए 21 आहुतियाँ देकर हवन करें और एक ब्राह्मण बालक या बालिका को भोजन-दक्षिणा दें। तदुपरांत उस जड़ को लाल कपड़े में बांधकर, वही मंत्र पढ़ते हुए बक्से या तिजोरी में रख दें। ध्यान रहे कि जड़ की पूजा करते समय उस पर कोई सिक्का भी चढ़ाना चाहिए। कपड़े में लपेटते समय उस पर सिंदूर, कपूर, लौंग, इलायची, सिक्का आदि सभी वस्तुएं ज्यों की त्यों चढ़ी रहनी चाहिए। इन्हें हटाए नहीं, कपड़े में लपेट दें। यह पोटली चाहे पूजा स्थान में रखें और नित्य धूप-दीप दें, चाहे बक्से या तिजोरी में रखें। यह पोटली जिस घर में रहेगी, वहाँ धन-संपत्ति की निरंतर वृद्धि होती रहेगी। सुविधा-सामर्थ्य हो तो उस जड़ को कपड़े में लपेटकर चाँदी या ताबीज में भरकर रखें। यह ताबीज पहनने से या पास रखने से साधक को कभी धनाभाव नहीं होता। यह बहुत ही सरल और सहज सुखकर प्रयोग है। आस्थावान जन विधिवत् इसकी साधना से लाभ उठा सकते हैं।

संतान सुख :- जिन घरों में संतान न होती हो या होकर जीवित न रहती है, या रोगी रहती हो या उपद्रवी स्वभाव की हो, तो गूलर की जड़ उपर्युक्त विधि से लाकर पूजें और घर में कहीं सुरक्षित रखकर नित्य उसे धूप-दीप देते हुए संतान सुख की याचना करें। प्रत्येक कार्य के लिए उक्त मंत्र का जप आवश्यक है। इस प्रयोग से संतान सुख अवश्य प्राप्त होता है।

प्रेम और सम्मोहन के लिए :- समाज में उपेक्षित, प्रणय में असफल, यश और प्रतिष्ठा तथा स्नेह के इच्छुक जन (यदि वास्तव में स्वभाव चरित्र की दृष्टि से सौम्य और सभ्य, शिष्ट हैं) इस जड़ी के द्वारा निश्चित रूप में लाभान्वित हो सकते हैं। विधि वही पूर्वोक्त है-रविपुष्य योग में गूलर की जड़ लायें। और उसकी पूजा करें, तदुपरांत उसे चंदन की भांति घिसें और वह लेप माथे पर लगायें। ऐसा लेप (माथे पर लगाया गया तिलक) व्यक्ति में कुछ ऐसा प्रभाव उत्पन्न कर देता है कि वह समाज में सर्वत्र प्रेम, प्रशंसा और स्नेह का पात्र बन जाता है।

सुख-शांति के लिए :- पूर्व वर्णित विधि से प्राप्त और पूजित उदुम्बर की जड़ को घर में देव-प्रतिमा की भांति स्थापित करें (कहीं रख दें) और नित्य धूप-दीप से, मंत्र जप से पूजन करते रहें। यह प्रयोग घर में सर्व प्रकार से मंगलदायी होता है। सुख-शांति, शुचिता और समृद्धि के लिए यह बहुत सहज और सर्वसाध्य प्रयोग है। इसे ग्रामीणजन, सामान्य गृहस्थ भी सरलता से कर सकते हैं।

दत्त साधना :- भगवान् दत्तात्रेय को त्रिदेवों (ब्रह्मा, विष्णु और शिव) का संयुक्त रूप माना जाता है। दत्त भगवान् की उपासना बहुत जल्दी और निश्चित फल देने वाली है। इसके लिए या तो किसी रविपुष्य के दिन गूलर वृक्ष की जड़ें लें आयें या उत्तम यही होगा कि किसी रविपुष्य योग के दिन से, गूलर वृक्ष के नीचे जाकर, वहाँ दत्त मंत्र का जप करें। ज पके पूर्व वह स्थान बना लें। स्वच्छतापूर्वक लिपे-पुते स्थान में बैठें। मुख ठीक पेड़ के सामने हो। यह भी ध्यान रहे कि साधक को उत्तर या पूर्व की ओर मुँह करके बैठना चाहिए। दत्त यंत्र या दत्त भगवान् की प्रतिमा का पूजन करें। तदुपरांत यह मंत्र जपें-





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



ॐ द्रां दत्तात्रेयाय नमः। पूजा में प्रतिमा पर श्वेत चंदन, श्वेत पुष्प और केतकी गंध (केवड़े का इत्र) भी चढ़ायें। इक्कीस दिनों की नियमित साधना से निश्चित ही चमत्कारी लाभ होता है।



❀ पीपल ❀

सामान्य परिचय :- पीपल एक सर्वज्ञात, सर्वत्र सुलभ, बिना किसी पोषण के स्वयं ही विशालकाया हो जाने में समर्थ और हिन्दू धर्म में चिर-प्राचीन काल से पूज्य एक ऐसा वृक्ष है, जिसके साथ शताधिक मान्यताएं, विश्वास, अंधविश्वास, लोक कथाएं और पूजन विधान प्रचलित हैं।

यह वृक्ष बरगद और पाकर-गूलर की जाति का है। किंतु उसके फल सबसे छोटे होते हैं। यह फल मूंगफली के छोटे दाने के बराबर होता है, जो बरगद, गूलर की भांति बीजों से भरा होता है। ये बीज राई के दाने के आकार में होते हैं। परंतु उससे उत्पन्न वृक्ष विशालतम रूप धारण करके, सैंकड़ों वर्षों तक खड़ा रहता है।

पीपल की छाया बरगद से कम होती है, फिर भी इसके पत्ते अधिक सुंदर कोमल और चंचल होते हैं। नाममात्र की वायु में भी ये दोलायमान हो उठते हैं। अन्य किसी पेड़ के पत्ते इस तरह नहीं हिलते-कांपते जैसे पीपल के पत्ते थरथराते हुए हिलते रहते हैं। रामायण में राजा दशरथ के मनःस्थिति के वर्णन में दोलायमान पीपल-पत्र की उपमा दी गयी है :- पीपल पात सरिस मन डोला।

वसंत ऋतु में पीपल की नयी कोपलें (धानी रंग की चमक से) बहुत ही शोभायमान लगती हैं। बाद में वह हरा, रंग और फिर गहरा हरा हो जाता है।

पीपल के पत्ते जानवरों को चारे के रूप में खिलाये जाते हैं और लकड़ी ईंधन के काम आती है। वैसे हिन्दू धर्म की मान्यता है कि पीपल का वृक्ष (डाल, पत्ते, टहनी, तना कुछ भी) काटना नहीं चाहिए। ब्राह्मणों में इस वर्जना को विशेष मान्यता प्राप्त है। यद्यपि अपने आप गिरे हुए, टूटे-फूटे वृक्ष की लकड़ी ईंधन के काम में लायी जाती है। तथापि यह वृक्ष पवित्र माना जाता है और इसे तोड़ने, काटने, जलाने वाले लोग, भय, शंका, वर्जना तथा अमंगल की दुष्कामना से प्रभावित रहते हैं।

जहाँ तक काष्ठोपयोग की बात है, पीपल की लकड़ी किसी भी इमारती काम या फर्नीचर के लिए अनुकूल नहीं होती। होली या भट्टी में जलाने के अलावा इसे लोग चूल्हे में जलाते भी भय/शंका में पड़ जाते हैं। कारण कि यह पेड़ 'देव वृक्ष' कहा जाता है। इस पर देवताओं का वास माना जाता है। और देवता चाहे न भी रहते हों, परंतु इस वृक्ष पर भूत-प्रेत, पिशाच और वैताल आदि का तथा डाकिनी-शाकिनी का निवास अवश्य माना जाता है। 'ब्रह्मराक्षस' नाम का प्रेतयोनि प्राणी प्रचलित मान्यता के अनुसार पीपल के पेड़ पर ही निवास करता है।

कारण चाहे जो भी हो, चाहे कोई वैज्ञानिक दुष्प्रभाव हो अथवा यही सब आध्यात्मिक निषेध हो, पीपल वृक्ष के नीचे रात में कोई सोता नहीं। पीपल तले लघु-शंका और अन्य कोई अशुद्ध, घृणित, अपवित्र कार्य करना मना है। ऐसा कई बार सुनने-पढ़ने में आया है कि किसी व्यक्ति ने पीपल के पेड़ तले लघुशंका कर दिया और उसी शाम घर पहुंचते-पहुंचते वह गंभीर रूप में किसी असाध्य बिमारी से ग्रस्त हो गया। ऐसे लोग ज्वर, उन्मत्तता, भ्रम-मूर्च्छा और ऐसी ही अन्य मनोव्याधियों से ग्रस्त हो जाते हैं। पीपल का वृक्ष पवित्र, पूज्य, देव स्थान माना जाता है। साथ ही प्रेतों का निवास भी होने के कारण यह आतंक का पर्याय माना जाता है। शुभ और अशुभ दोनों तरह के कृत्य इसकी छाया में संपादित होते हैं।

यज्ञ, हवन, पूजा-पाठ, पुराण कथा आदि के लिए पीपल की छाया श्रेष्ठ मानी गयी है। इसी तरह पीपल के नीचे मृतक का दशगात्र विधान (क्रिया-कर्म, पिण्डदान) आदि पूरा करने का विधान है। हिन्दू धर्म में क्रिया-कर्म के पश्चात मृतात्मा की शांति के लिए, पीपल के वृक्ष में घट बांधने और सायंकाल उस पर दीपक जलाने का नियम है। इस विवेचन से सिद्ध है कि पीपल वृक्ष को हमारे हिन्दू समाज में बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त है और यह असंदिग्ध रूप में पवित्रता का प्रतीक माना जाता है।





॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥



तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



तंत्र साधना में पीपल का महत्व :- नवग्रहों में 'शनि' सर्वाधिक पीड़क होता है। शास्त्रों में लिखा है कि शनि-पीड़ा से त्राण पाने के लिए पीपल पर जल चढ़ाना चाहिए। यही नहीं, शनिवार की संध्या को पीपल के नीचे बैठकर दीपक जलाना और पश्चिमाभिमुख होकर शनि की पूजा करना भी परम लाभकारी होता है।

भूत-प्रेत, भैरव आदि की साधना :- देव वर्ग से इतर प्रेतयोनि वाली शक्तियों-वैताल, भैरव आदि तथा यक्षिणी साधना के लिए पीपल की छाया, पीपल के पास (जड़ के पास) बैठना, अनिवार्य होता है।

और कुछ न करें, पीपल के वृक्ष पर नित्य स्नानोपरांत एक लोटा जल चढ़ाते रहें, तो भी उसमें निवास करने वाली अदृश्य आत्मा (प्रेतयोनि) तृप्त होकर सहायक बन जाती है।

देवोपासना और पीपल :- कितने ही मंदिर पीपल के वृक्ष के पास बने होते हैं। कभी-कभी मंदिर के पास पीपल स्वतः उग आता है। इसके विपरीत कभी-कभी श्रद्धालु जन पीपल के नीचे जड़ के पास स्थान बनाकर, कुछ मूर्तियाँ स्थापित कर देते हैं। इस तरह पीपल वृक्ष और मूर्तियाँ दोनों की पूजा होने लगती हैं।

यह भी एक बहु अनुभूत सत्य है कि पीपल की सेवा करने वाले व्यक्ति किसी न किसी चमत्कारिक ढंग से लाभान्वित अवश्य हो जाते हैं।

दरिद्रता निवारण के लिए :- पीपल के वृक्ष के नीचे शिव-प्रतिमा/लिंग स्थापित करके, नित्य उस पर जल चढ़ायें और पूजन-अर्चन करें। कम से कम 5 या 11 माला मंत्र का जप (ॐ नमः शिवाय) करें। कुछ दिन की नियमित साधना से परिणाम सामने आ जाता है। प्रतिमा को धूप-दीप से शाम को भी पूजना चाहिए। दिन में तो चंदन, पुष्प और अक्षत आदि का प्रयोग होता ही है।

हनुमान जी के दर्शन :- पीपल के वृक्ष के नीचे बैठकर नियमित रूप से हनुमान जी का पूजन, स्तवन, मंगलवार का व्रत, रात्रि में एकांत शयन, ब्रह्मचर्य और मंत्र का नियमित जप (ॐ ह्रीं हनुमते रामदूताय नमः) करने से हनुमानजी के दर्शन हो जाते हैं। परंतु इस साधना में साधक को आस्थावान, साहसी, ब्रह्मचारी, संयमी और सात्विक होना चाहिए। हनुमानजी स्वप्न में अथवा प्रत्यक्ष में आकर दर्शन अवश्य देते हैं।



❀ बरगद ❀

सामान्य परिचय :- भारतीय संस्कृति में बरगद सबसे दीर्घायु, विशालकाय, स्वयंजीवी और घनी छाया वाला वृक्ष है। यद्यपि यह भी पीपल-पाकर वर्ग का वृक्ष है तथापि इसमें अन्य वृक्षों से कई बातों का मौलिक और बहुत बड़ा अंतर है।

बरगद अथवा वट हिन्दू संस्कृति में पूज्य वृक्ष है। इनके नाम पर सुहागिनी स्त्रियाँ 'वट सावित्री पूजन' करती हैं। यह व्रत उनके लिए अक्षय सौभाग्यदायी माना जाता है। और कई प्रकार के पूजन विधान तथा तांत्रिक प्रयोग वट वृक्ष के संबंध में प्राप्त होते हैं।

बरगद की लकड़ी सिवा जलाने के और किसी काम में नहीं आती। इसके पत्तों की छाया बहुत घनी होती है। पत्तों को लोग पशुओं को चारे के रूप में भी देते हैं। इसके पत्ते कड़े-मजबूत होते हैं। अतः गाँवों के नाई-बारी इनसे दोना-पत्तल भी बनाते हैं।

बरगद का पौधा आसानी से तैयार हो जाता है। इसकी हरी डाल काटकर, कहीं भी गाड़ दें, वृक्ष के रूप में पर्याप्त छाया और लकड़ी देने के लिए तैयार हो जाएगी।

यह भी बहुत पवित्र वृक्ष है। मान्यता है कि भगवान श्री हरि विष्णु बाल रूप में बरगद के पत्ते पर, अकेले लेटे, क्षीरसागर की तलहटी में, अपना अंगूठा चूसते रहते हैं। महाप्रलय के पश्चात जब समस्त पृथ्वी मण्डल जलमय हो जाता है, भगवान श्री हरि विष्णु का विराट रूप, एक छोटे शिशु के रूप में वट-पत्र पर लेटा, सागरतल में शयन करता रहता है। वट वृक्ष का नाश नहीं होता, कहीं न कहीं वह अवश्य पाया जाता है। कुछ ऐसे भी वट वृक्ष हैं, जो अनादि काल से पृथ्वी पर





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



उपस्थित माने जाते हैं। इन्हें कल्पवृक्ष या अक्षयवट कहते हैं। प्रयाग और उज्जैन में तो ऐसे एक-एक वट-वृक्ष आज भी खड़े हैं, जिन्हें स्थानीय जनता ही नहीं, इतिहास और संस्कृति के मर्मज्ञ विद्वान भी बहुत प्राचीन होने के नाते 'अक्षयवट' कहते हैं। इसके पत्ते पर श्रीकृष्ण के शयन का, उनकी बाल-सुलभ छवि का वर्णन इस श्लोक में देखें।

करारविन्देन पदारविन्दं, मुखार विन्देन विनिवेशयन्तम्। वटस्य पत्रस्य पुटे शयानां बालमुकुन्दं मनसाऽस्मरामि॥

तांत्रिक प्रयोग :- रविपुष्य नक्षत्र के दिन बरगद की जटा (बरोह) ले आयें। उसे सुखाकर कूट लें और कपड़छन करके रख लें। यह चूर्ण दांतों पर मलने से अनेक प्रकार के मुख-रोग दूर हो जाते हैं।

वट की जटा (हरी-ताजी) लाकर, उसको दातून की भांति प्रयोग करें। समस्त दंत रोग मिट जायेंगे।

त्यागी, संन्यासी, साधु वनवासी, विरक्त बनने के पूर्व, गृहस्थाश्रम का परित्याग करने के पश्चात वटक्षीर (बरगद का दूध) बालों में लगाकर जटाएं बनाते हैं। तपस्या के लिए सिर पर जटाजूट का होना भी एक नियम है।

धन वृद्धि के लिए :- बरगद के फल टूट-टूट कर गिरते रहते हैं। उनमें से कभी-कभी कोई बीज उग आता है। पीपल की अपेक्षा बरगद के पेड़ कम उगते हैं। यदि आपको किसी बरगद के तले, उसकी छाया के क्षेत्र में वट-बीज में उत्पन्न कोई पौधा दीख जाये, हालांकि यह बहुत दुर्लभ संयोग है-अलभ्य जैसा, फिर भी यदि प्राप्त हो ही जाये, तो उसे रविपुष्य के दिन विधिवत ले आयें और उसकी पूजा अर्चना करके, कहीं दरवाजे या फुलवाड़ी में लगा दें। यह पौधा जिस गति से बढ़ेगा, तदनुसार ही साधक की संपत्ति भी बढ़ती जाएगी।

बरगद का बांदा :- बांदा प्रकरण में इसका उल्लेख किया जा चुका है। अतः पुनरुक्ति से बचने के लिए दुबारा नहीं लिखा जा रहा है।

अन्य प्रयोग :- बरगद के कई तांत्रिक प्रयोग और भी हैं। वर्णन क्रम से उनका उल्लेख यथा-स्थान किया गया है। आवश्यकतानुसार देख सकते हैं।



❀ विजया ❀

सामान्य परिचय :- विजया से सभी लोग परिचित हैं। प्रचलित भाषा में इसे 'भाँग' कहते हैं। यह एक मादक वनस्पति है। नशे के शौकीन लोग इसका दैनिक सेवन करते हैं। यह मादक होकर भी सौम्य और स्मृति वर्द्धक होती है। भगवान शिव को यह इतनी अधिक प्रिय है कि वे अपनी पत्नी भवानी जैसा अनुराग-स्नेह इस पर भी रखते हैं। इसी कारण इसे 'भंग भवानी' भी कहा जाता है। देवतावर्ग इसे व्यंग्योक्ति में 'शम्भुप्रिया' भी कहते हैं। इसके सर्वांग में मादकता होती है और लोग पत्तियों को चबाकर (पीसकर गोली या शर्बत के रूप में भी सेवन करके) नशे में हो जाते हैं। अधिक मात्रा में सेवन कर लने पर यह निद्रा, अवसन्नता और जड़ता उत्पन्न करती है और व्यक्ति अपनी चेतना गँवा बैठता है। यों, सामान्य रूप में इसको कुछ विशेष घटकों के साथ (बादाम, कालीमिर्च, सौंफ, इलायची, मुनक्का, गुलाब-केसर औरी दूध शक्कर) पीसकर थोड़ी मात्रा में पीने से बहुत लाभ होता है। यह मेधावर्द्धक, पौष्टिक और ओज प्रदायक पेय है। किंतु यह तभी लाभकारी होता है, जब व्यक्ति को खाने-पीने की सुविधा हो। दूध, घी, मलाई, भ्रमण, वायु-सेवन, व्यायाम, शांति और सत्संग यह जिन्हें सुलभ हो- उन्हीं को भांग का सेवन हितकर होता है। आज की अभावग्रस्त परिस्थितियों जबकि नमक, रोटियों का भी जुगाड़ कठिन ही है, कोई भी नशा हानिकारक है। अतः भांग का प्रयोग बहुत सावधानी से अपनी सामर्थ्य को देखते हुए ही करना चाहिए। केवल नशे में मस्त हो जाने के लिए भांग या अन्य किसी भी मादक पदार्थ का सेवन उचित नहीं है।

अस्तु, तांत्रिक विधि से यदि भांग का सेवन किया जाय तो उसका चमत्कारी प्रभाव सामने आता है। ऐसे प्रयोग में, यदि पूर्व-वर्णित विधि से भांग प्राप्त की जाय, तो निश्चित लाभ होता है। चूंकि यह सरकारी प्रबंध में है, अतः दुकान से किसी शुभ दिन लाकर शेष नियमों की पूर्ति घर में कर लेनी चाहिए। भांग के कुछ विशिष्ट तांत्रिक प्रयोग (विजयाकल्प) यहाँ प्रस्तुत हैं। जिज्ञासु और आस्थावान साधक इनसे लाभ उठा सकते हैं।





तांजौवत वनस्पतियाँ : वनस्पति तंत्र



1. चैत के पूरे महीने भर यदि भांग की पत्ती स्वल्प मात्रा में घटकों (सौंफ, बादाम, मुनक्का, कालीमिर्च, इलायची, गुलाब, केसर और दूध-शक्कर) के साथ पीसकर एक गिलास पेय पी लिया जाय, तो मस्तिष्क का नाड़ी संस्थान स्वस्थ-प्रबल हो जाता है। किंतु इस प्रयोग में मादकता प्राप्ति की लालसा से भांग की मात्रा अधिक नहीं कर देना चाहिए। वरन् औषधि के रूप में केवल 1 माशा (8 रत्ती भांग) का प्रयोग लाभकारी होता है। मेधा शक्ति को बढ़ाने (धारण, चिंतन, कल्पना, स्मरण शक्ति की वृद्धि) में यह प्रयोग बहुत ही प्रभावशाली सिद्ध होता है।
 2. उपरोक्त विधि से यदि कोई व्यक्ति पूरे बैशाख माह भर भांग का सेवन करे, तो उसका रक्त और स्नायु संस्थान विष के दुष्प्रभाव से मुक्त रहता है। खाने-पीने वाली वस्तुओं की विषाक्तता इस प्रयोग से नष्ट हो जाती है।
 3. जेठ के महीने भर विजया पेय (उपरोक्त घटकों के साथ बनाया गया शर्बत) नित्य सेवन करने से (प्रातः सूर्योदय के पूर्व ही) शारीरिक कांति, सौन्दर्य की वृद्धि होती है।
 4. आषाढ़ के महीने में विजय का सेवन केश-कल्प कर देता है। इस प्रयोग में विजया को पेय रूप में न लेकर, चित्रक के साथ चूर्ण रूप में प्रयोग करना चाहिए।
 5. शिवलिंगी के बीज और विजया पूरे सावन भर घोटकर पीने से (चूर्ण भी लिया जा सकता है, किंतु पेय में ताजगी रहती है।) शरीर पुष्ट होता है और शक्ति में वृद्धि होती है।
 6. रुद्रदन्ती और भांग को एक साथ पीसकर (पेय, गोली या चूर्ण के रूप में) पूरे भादो के महीने भर सेवन करने से मन-मस्तिष्क को शांति मिलती है। मानसिक तनाव दूर में यह प्रयोग बहुत लाभकारी रहता है।
 7. विजया की पत्ती और ज्योतिष्मती (मालकांगनी) एक साथ पीसकर आश्विन के महीने में सेवन करने से शरीर निरोग, कांतियुक्त और बलिष्ठ हो जाता है।
 8. ठीक यही प्रभाव (आश्विन माह वाला) तब भी होता है, यदि कार्तिक के महीने भर भांग की पत्ती को (संभव हो, तो समस्त घटकों के साथ ही) बकरी के ताजे दूध के साथ सेवन किया जाय।
 9. अगहन के महीने में विजया चूर्ण-घी, शक्कर के साथ नित्य सेवन करते रहने से नेत्रों की सुरक्षा होती है। अनेक प्रकार के नेत्र रोगों में यह प्रयोग लाभकारी होता है।
 10. पौष के महीने में काले तिल और विजया पत्ती का सेवन करने से दृष्टि शक्ति में पर्याप्त वृद्धि होती है।
 11. माघ के महीने में नागरमोथा की जड़ के चूर्ण में, विजया चूर्ण मिलाकर सेवन करना चाहिए। इस प्रयोग से शरीर पुष्ट होकर बल और कांति की वृद्धि होती है।
 12. फाल्गुन के पूरे महीने आंवले के चूर्ण अथवा रस के साथ भांग का सेवन (दोनों को एक में मिलाकर) करने से शरीर का संपूर्ण नाड़ी जाल (स्नायु तंत्र) सतेज हो जाता है। वात और रक्त के समस्त अवरोध दूर हो जाते हैं। इस प्रकार व्यक्ति में अद्भुत स्फूर्ति आ जाती है। शरीर की सक्रियता और गतिशीलता बढ़ाने में यह प्रयोग चमत्कारी लाभ देता है।
- बारह महीनों तक विभिन्न अनुमानों के साथ विजया को सेवन 'विजया कल्प' कहलाता है। यदि कोई स्वस्थ व्यक्ति पूरे वर्ष तक इन अनुपात भेदों के आधार पर, नियमित रूप से विजया कल्प का प्रयोग करे, तो वह निश्चय ही सबल तन और मन का स्वामी बन सकता है।

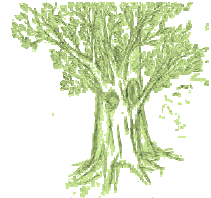


❀ सहदेवी ❀

सामान्य परिचय :- सहदेवी अर्थात् सहदेई एक सुलभ वनस्पति है। ग्रामीण क्षेत्रों में इसका पौधा आसानी से मिल जाता है। अज्ञानवश लोग इसे एक सामान्य घासफूस की श्रेणी में मानते हैं, किंतु तांत्रिक दृष्टि से यह बहुत ही लाभप्रद और अद्भुत गुणों से संपन्न अमूल्य वनस्पति है। तंत्र शास्त्र में इसकी महिमा का बखान करते हुए अनेक प्रकार के लोकोपकारी प्रयोग वर्णित हैं। निम्नांकित विधि से 'सहदेवी' का पौधा प्राप्त करके उसके प्रभाव का लाभ उठाया जा सकता है।



प्रस्तुति :- श्री अभिषेक कुमार, (मंत्र, तंत्र यंत्र विशेषज्ञ, महाविद्याओं के सिद्ध साधक एवं शक्ति सिद्धांत के व्याख्याता)
परमपूज्य गुरुदेव श्री निखिलेश्वरानंद जी महाराज के परम प्रिय शिष्य, शक्ति अनुसंधान केंद्र, मो०:- हजारी, नून का चौराहा, पटना सिटी.
Mob:- 9852208378, 9525719407. E-mail:- shaktianusandhankendra@gmail.com



तांजोक्त वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



सर्वप्रथम किसी 'रविपुष्प योग' में सहदेवी का पौधा घर ले आए। यहाँ यह बात भी ध्यान रखने की है कि पूर्व वर्णित विधि के अनुसार पौधे को एक दिन पहले (शनिवार की शाम को) विधिवत् निमंत्रण दे आना चाहिए। फिर दूसरे दिन प्रातः (रविपुष्प योग में) पौधे के समक्ष जाकर उस पर मंत्र पढ़ते हुए जल चढ़ाये। तत्पश्चात् मंत्र पढ़ते हुए ही उसे समूचा उखाड़ लें और घर ले आए। घर आकर, उसे देव प्रतिमा की भांति पंचामृत से स्नान कराकर, शुद्ध आसन पर रखें और धूप-दीप आदि से पूजा करके निम्नलिखित मंत्र को 21 बार जपते हुए, पौधे की स्तुति करें।

प्रातः काल पौधे के पास जाने से लेकर, पूजा समाप्ति तक साधक को सर्वथा मौन रहना चाहिए। यथासंभव एकांत में भी रहें, कारण कि दूसरे की उपस्थिति से तन्मयता भंग हो जाती है। साथ ही लोगों की अशुभ दृष्टि से साधना में विघ्न भी आ जाता है। अस्तु मंत्र जप के बाद पौधे को आवश्यकतानुसार प्रयोग में लाना चाहिए। चाहे तांत्रिक प्रयोग के लिए हो, चाहे आयुर्वेदिक प्रयोग के लिए। यदि पौधे को विधिवत् (उपरोक्त तांत्रिक पद्धति से, रविपुष्प योग में) प्राप्त किया जाय, तो निश्चित ही उसमें चमत्कारी और अचूक प्रभाव उत्पन्न हो जाता है। पंचामृत से स्नान कराकर पूजनोपरांत पौधे को शक्ति संपन्न बनाने के लिए 21 (इक्कीस) बार जपने का मंत्र यह है —

मंत्र :- ॐ नमो रूपावतीं सर्वप्रोतेति श्री सर्वजनरंजनी सर्वलोकवशकरणी सर्वसुखरंजनी महामाईल घोलथी
कुरु कुरु स्वाहा ॥

इस प्रकार तांत्रोक्त विधि से प्राप्त और पूजित सहदेवी का पौधा अनेक दिव्य गुणों से संपन्न हो जाता है। प्रयोग भेद से उससे बहुविधि लाभ उठाया जा सकता है। ऐसा मंत्राभिषिक्त पौधा धन-संपत्तिदायक होता है। किसी भी मुहूर्त में उस पौधे के निम्न प्रभावों की अनुभूति की जा सकती है :-

1. पौधे की जड़ को लाल वस्त्र में लपेट कर तिजोरी, अन्न भंडार, आभूषण-पेटिका या अन्य किसी संपत्ति के साथ रखने से उसमें वृद्धि होने लगती है।
2. जड़ को गंगाजल में घिसकर, नेत्रों में अंजन की भांति लगाने से दृष्टि से सम्मोहक प्रभाव उत्पन्न हो जाता है।
3. यदि कोई स्त्री प्रसव वेदना से व्याकुल हो, तो उस जड़ को तेल में घिसकर, स्त्री की जननेन्द्रिय पर लेप करने से अथवा जड़ को लाल धागे के सहारे कमर में बांध देने से, वह पीड़ा मुक्त हो जाती है।
4. तंत्र सिद्ध सहदेवी का समूचा पौधा (पंचांग) सुखाकर, कूटकर चूर्ण बनायें। इस चूर्ण को गो घृत के साथ मासिक-धर्म के पाँच दिन पूर्व से, पाँच दिन बाद तक नियमित रूप से सेवन करने वाली स्त्री को संतान लाभ होता है।
5. बच्चों के गले में 'सहदेवी' की जड़ को ताबीज की तरह पहनाने से कण्ठमाला रोग दूर हो जाता है।
6. तंत्र सिद्ध सहदेवी पौधे के पंचांग को पीसकर, उसको माथे पर तिलक की भांति लगाने से मान प्रभाव की वृद्धि होती है। सामाजिक सम्मान प्राप्त करने में यह बहुत लाभदायक रहता है।
7. और कुछ न करके, यदि उस मंत्राभिषिक्त पौधे का प्रतिदिन पूजन-दर्शन किया जाय, तो भी बहुत लाभदायक, कल्याणकारी होता है।



❀ अपामार्ग ❀

सामान्य परिचय :- अपामार्ग (ओंगा) एक सर्वसुलभ पौधा है, यह बरसात में पाया जाता है और जाड़े में पकता है। वैसी, इसकी जड़ बारहों महीने हरी रहती है और इस तरह का पौधा कई वर्षों तक बराबर पनपता रहता है। इसे लटजीरा या चिरचिटा भी कहते हैं। तंत्र ग्रंथों और आयुर्वेद में इसे अपामार्ग कहा गया है। यह दो जातियों में मिलता है—लाल और सफेद। इसके प्रयोग से दैनिक जीवन की कितनी ही आवश्यकतायें पूरी हो सकती हैं। तंत्र शास्त्र में इसका वर्णन करते हुए कहा गया है कि किसी 'रविपुष्प योग' अथवा अन्य किसी शुभ मुहूर्त में इसका पौधा लाकर उसे विधिवत् शुद्ध करके रख लें। फिर उसका आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जा सकता है। जैसे —





तांजौवत वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



1. लाल अपामार्ग के डण्डी की दातून यदि नियमित रूप से 6 महीने तक लगातार किया जाय, तो वाणी में अद्भुत चमत्कार उत्पन्न हो जाता है। ऐसे व्यक्ति को वाचा सिद्धि प्राप्त हो जाती है।
2. लाल ओंगा की जड़ को जलाकर भस्म बना लें। भस्म नित्य प्रति गाय के दूध में सेवन करने वाले दम्पति को संतान प्राप्त होती है।
3. इसके बीजों को साफ करके चावल निकालें। उन चावलों को दूध में पकाकर खीर बनायें। यह खीर क्षुधा-स्तम्भन करती है। जो व्यक्ति इस खीर को खायेगा, वह भूख का अनुभव नहीं करेगा।
4. श्वेत अपामार्ग की जड़ पास में रखने से लाभ, समृद्धि और कल्याण की प्राप्ति होती है।
5. श्वेत अपामार्ग के पौधे की जड़ का तिलक माथे पर लगाने वाला व्यक्ति सम्मोहन प्रभाव से युक्त हो जाता है।
6. इसके जड़ को दीपक की भांति जलाकर, उसकी लौ पर किसी छोटे बच्चे का ध्यान केंद्रित कराया जाय, तो उस बच्चे को बत्ती की लौ में वांछित दृश्य दिखायी देंगे। मुस्लिम तंत्र में वर्णित हाजरात (दिव्य दृष्टि) में भी इसका प्रयोग होता है।
7. इस जड़ को लेप करने से शरीर पर शस्त्राघात का भय नहीं रहता।
8. छोटे से (चार अंगुल) टुकड़े के रूप में, इसे जननेन्द्रिय में रखने से प्रसूता की वेदना समाप्त होकर, शीघ्र ही प्रसव हो जाता है।
9. श्वेत अपामार्ग की पत्तियों को पीसकर, तुरंत लेप करने से बिच्छू का विष उतर जाता है। साथ ही, इसकी लकड़ी को भी सुंघाते हुए, शरीर पर फेंकनी चाहिए।
10. इसकी ढाई पत्तियों को गुड़ में मिलाकर, दो दिनों तक—दोनों समय खाने वाला व्यक्ति ज्वर मुक्त हो जाता है।
11. श्वेत अपामार्ग और बहेड़ा की जड़ (दोनों ही रविपुष्य योग में प्राप्त की गयी हों), एक पोटली में बांधकर, जिसके घर में (शत्रु के घर में) रख दी जाय, तो उस परिवार में मानसिक अशांति (उच्चाटन) उत्पन्न हो जाती है।
12. ओंगा (अपामार्ग) का समूचा पौधा (पंचांग) जलाकर भस्म बना लें। यह भस्म दांतों पर मलने से अनेक प्रकार के दंत रोग, मुख रोग और जिह्वा तथा कंठ के विकार दूर हो जाते हैं।



❀ मुण्डी ❀

सामान्य परिचय :- मुण्डी एक सुलभ वनस्पति है, इसका पौधा 5 हजार फीट की ऊँचाई तक प्रायः समस्त भारत के उष्ण प्रदेशों में बहुतायत से उत्पन्न होता है। धान, गेहूँ जौ आदि रबी में उत्पन्न होने वाले अन्न के खेतों के अतिरिक्त शरद ऋतु में छोटे-छोटे जलाशयों के सूख जाने पर उन जलाशयों में भी पाया जाता है। इसका पौधा उँचा होता है। इसकी शाखाएं पर्याप्त दृढ़ और मुड़ी हुई सी होती है। इसके पत्तों की लंबाई 3 इंच तक होती है और पत्तों के किनारे दांतेदार होते हैं। अधिकतम आधा इंच व्यास तक फैलने वाली इसकी घुण्डियाँ गुच्छे के रूप में फैलती है। इसे 'गोरखमुण्डी' भी कहते हैं। ऐसी मान्यता है कि मुण्डी के तांत्रिक प्रयोगों का अनुसंधान परम सिद्ध औघड़ संत—गुरु गोरखनाथ ने किया। इसलिए परवर्ती आचार्यों ने इसको 'मुण्डी' से 'गोरखमुण्डी' नाम से प्रसिद्ध कर दिया। जो भी हो, यह अनुभूत सत्य है कि मुण्डी में अनेक औषधीय और तांत्रिक गुण हैं। तंत्रशास्त्र का निर्देश है कि यदि वानस्पतिक नियमों के अनुसार विधिवत् निमंत्रण देकर, इसका पौधा लगाया जाय और उसे मंत्र सिद्ध कर लिया जाय, तो इसके प्रयोग से चमत्कारी परिणाम दृष्टिगत होते हैं। उदाहरण के लिए कुछ प्रयोग इस प्रकार हैं :-

1. तंत्र सिद्ध 'मुण्डी' के पौधे को सुखाकर चूर्ण बनाएं। इस चूर्ण का शहद के साथ प्रातः—सांय दैनिक सेवन करना साधक को बौद्धिक दृष्टि से सबल और बाग्मी बना देता है। स्मरण, धारणा, चिंतन और वक्तृत्व शक्ति की वृद्धि के लिए यह अचूक प्रयोग है।





तांजोक्त वनस्पतियों : वनस्पति तंत्र



- उपरोक्त चूर्ण दूध के साथ सेवन करने से स्वास्थ्य और शारीरिक बल प्राप्त होता है।
- इस चूर्ण को रात भर पानी में भिगोयें और प्रातः—सायं छानकर, उसी जल से सिर धोयें। केश—कल्प का यह उत्तम प्रयोग है।
- हरे पौधे के रस की मालिश करने से शरीर की पीड़ा मिट जाती है।
- उपरोक्त चूर्ण और जौ के आटे का मिश्रण करके, इसे मट्टे (छाछ) में सानकर रोटी बनायें और गो घृत के साथ यह रोटी खायें। कुछ दिनों तक लगातार यह प्रयोग करते रहने से बुढ़ापे पर अवरोध लगकर, शरीर स्वस्थ, सबल और कांतिपूर्ण हो जाता है।



❀ बहेड़ा ❀

सामान्य परिचय :— बहेड़ा एक जंगली फल है। इसका पेड़—महुआ, बादाम, चिरौंजी के पेड़ जैसा भारी—भरकम होता है। पत्ते भी लगभग वैसे ही काफी बड़े होते हैं। बहेड़ा का आकार महुल के फल गुल्लू जैसा होता है। गुल्लू में एक विशेषता यह होती है कि इसके किसी फल में एक, किसी में दो और किसी में तीन बीज निकलते हैं और इस कारण फल का आकार भी छोटा—बड़ा होता है। परंतु बहेड़े में यह अंतर नहीं होता। बहेड़े लगभग समान आकार के होते हैं।

आयुर्वेद में त्रिफला एक प्रसिद्ध औषधी है। उसके तीन फलों (तीन घटकों) में आँवला, हरड़ के साथ तीसरा फल बहेड़ा ही है। बहेड़े के आयुर्वेद में वर्णित गुणों की संख्या विपुल है। यह प्रयोग भेद से अनेक विकारों को शांत करता है।

यहाँ हमारा विषय आयुर्वेद नहीं, तंत्र शास्त्र है। वैसे तंत्र और आयुर्वेद में घनिष्ठ संबंध में है। फिर भी दोनों के क्षेत्र और प्रयोग—प्रकारों में पर्याप्त अंतर है। यहाँ बहेड़े के कुछ तांत्रिक प्रयोग लिखे जा रहे हैं। परंतु यह तथ्य स्मरण रखने योग्य है कि 'बहेड़ा' अथवा कोई भी वनस्पति यदि तांत्रिक प्रयोग के लिए प्राप्त करनी है, तो उसके लाने की विधि और मुहूर्त का ध्यान अवश्य रखना होगा। मुहूर्त और विधि की उपेक्षा करके किया गया प्रयोग सफल नहीं होता। विधि का महत्व जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में है। हम अपने दैनिक व्यवहार में भी जाने—अनजाने विधि का अनुशरण करते रहते हैं। विधि विरुद्ध कार्य कष्टप्रद, असफलतादायक और श्रम को व्यर्थ करने वाले होते हैं। अतः विधि के प्रति सदैव सजग रहना चाहिए। इसी प्रकार मुहूर्त के साथ भी प्रतिबद्ध रहना श्रेयस्कर होता है। मुहूर्त वस्तुतः पण्डितों की कपोल कल्पना न होकर, ठोस वैज्ञानिक सत्य पर आधारित है। इसका सीधा संबंध खगोल विज्ञान से है। तारों, ग्रहों, नक्षत्रों आदि की गतिविधि और उनकी प्रकाश किरणों का प्रभाव स्पर्श मुहूर्त को अवश्य प्रभावित करता है।

- मंत्र द्वारा सिद्ध किया हुआ बहेड़े का पत्ता और मूल (जड़) भंडार, तिजोरी, बक्स अथवा अन्य किसी पवित्र स्थान पवित्र स्थान में रखने से, घर में धन—धान्य की समृद्धि होती है। यह निश्चित प्रभावशाली और बहुत ही सहज प्रयोग है।
- उदर विकारों—भूख की कमी, अपच, मन्दाग्नि, पीड़ा, वायु—दोष, कोष्ठबद्धता आदि के निवारण में मंत्र सिद्ध बहेड़ा—मूल अतीव लाभकर सिद्ध होती है। इसकी प्रयोग विधि भी सरल है। रोगी व्यक्ति भोजन करते समय अपनी दाहिनी जंघा के नीचे (उसे पालथी मारकर बैठना चाहिए) बहेड़े की वह अभिमंत्रित जड़ (टुकड़ा) दबाकर बैठे। ऐसी स्थिति में किया गया भोजन तांत्रिक प्रभाव से, सुपाच्य और पोषक बनकर व्यक्ति को आरोग्य प्रदान करता है।

बहेड़ा अभिमंत्रित करने की विधि है कि पूर्व निमंत्रण देकर किसी शुभ मुहूर्त में उसकी जड़ और पत्ते ले आयें। यदि पेड़ उपलब्ध है तो फूल और फल भी ले लें। पेड़ से उसके अंग प्राप्त करते समय साधक को इस मंत्र का जप करते रहना चाहिए :— ॐ नमः सर्व भूताधिपतये ग्रस ग्रस शोषय भरवीं चाज्ञापति स्वाहा।

पौधे को लाकर पंचामृत स्नान कराकर, धूप—दीप से पूजा करें। पूजा में बराबर उपरोक्त मंत्र जप और अंत में इसी मंत्र द्वारा 108 जप करके इसी मंत्र से 21 बार आहुति देकर हवन करें।





तांजौवत वनस्पतिर्योः वनस्पति तंत्र



❀ लक्ष्मणा ❀

सामान्य परिचय :- लक्ष्मणा एक सुलभ जड़ी है। तांत्रिक विधि से रविपुष्य योग में अथवा किसी अन्य शुभ मुहूर्त में इसे लाकर मंत्र द्वारा अभिमंत्रित कर लें तो यह अनेक प्रकार की समस्याओं के समाधान में सहायक होती है। इसकी प्राप्ति विधि में यह प्रतिबंध है कि इसे लाने के लिए दो व्यक्ति जाएं, जिसमें से मुख्य साधक नग्न होकर पौधे को उखाड़ें और सहायक व्यक्ति पास ही दीपक लिए प्रकाश करता रहे। यह प्रयोग प्रातः काल बासी-मुँह अंधेरे में ही किया जाता है। पौधा उखाड़ने और उसे घर तक लाने के मंत्र क्रमशः इस प्रकार हैं :-

मंत्र :- मम् कार्य सिद्धि कुरु कुरु स्वाहा ॥

मंत्र :- ॐ नमो भगवते रुद्राय सर्ववदनी त्रैलोक्य कास्तरणी हं फट् स्वाहा ॥

घर जाकर इस पौधे को स्नान कराएं तथा पंचोपचार पूजा करें। पूजनोपरांत उपरोक्त (दूसरे) मंत्र का एक माला जप करें। इस प्रकार मंत्र सिद्ध 'लक्ष्मणा' अनेक कार्यों में प्रयुक्त होती है। यथा -

1. लक्ष्मणा का पंचांग जल में पीसकर गोली बनाएं। यह गोली मंत्र पढ़कर जिसे भी खिलाई जाएगी, वशीभूत हो जाएगा।
2. शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ और समर्थ पति वाली स्त्री-लक्ष्मणा की यह मंत्राभिषिक्त गोली प्रतिदिन गाय के दूध के साथ 21 दिनों तक लगातार दोनों समय सेवन करे, तो गर्भ धारण करती है।
3. दीपावली के दिन प्राप्त की गयी लक्ष्मणा को मंत्र द्वारा सिद्ध करके रख लें। इसका चूर्ण सेवन करने से स्त्री सहवास में - पुरुष की कामशक्ति बढ़ जाती है। यह परम बाजीकरण प्रयोग है।



❀ नियमानुसार ही निकालें तांत्रोक्त जड़ी ❀

मित्रों, वनस्पति तंत्र में ऐसी अनेक जड़ी और बांदे हैं जो यदि बताए गए शुभ मुहूर्त में पूर्ण विधि-विधान से निकाल कर प्रयोग में लाए जाएं तो वे आशातीत लाभ प्रदान करते हैं। इन जड़ियों को निकालने की एक शास्त्रोक्त प्रक्रिया होती है उसे किए बिना प्राप्त की गई जड़ या बांदा लाभदायक नहीं होता। हम यहां जड़ और बांदे को निकालने के शास्त्रोक्त नियम व विधि आपको बता रहे हैं। उपरोक्त वर्णित सभी दिव्य जड़ी-बुटियों को

1. सर्वप्रथम कोई भी जड़ या बांदा किसी स्वच्छ स्थान पर लगे पेड़ से ही प्राप्त करें।
2. जड़ या बांदा बताए गए निश्चित मुहूर्त या नक्षत्र में ही प्राप्त करें।
3. जड़ या बांदा निकाले से ठीक एक दिन पूर्व उस पेड़ की जड़ में एक लोटा जल डालें तत्पश्चात पंचोपचार पूजन कर नैवेद्य व दक्षिणा अर्पण कर आरती करें।
4. आरती के पश्चात पीले चावल रखकर उस जड़ को अपने साथ चलने हेतु निमंत्रित करें।
5. बताए गए मुहूर्त या नक्षत्र में जाकर जड़ को प्रणाम करें तत्पश्चात दिग्बंध हेतु पीली सरसों को निम्न मंत्र से अभिमंत्रित कर अपने एवं पेड़ चारों फेंकें।

मंत्र :- ॐ बेतालाश्य पिशाचाश्य राक्षसाश्च सरीसृपां। अपसर्पन्तु ते सर्वे वृक्षादिस्माच्छिवाज्ञाया ॥

6. दिग्बंध के उपरांत लकड़ी के नुकीले पटिये से जड़ को सावधानी से खोदकर निकालें। ध्यान रखें कि जड़ निकालने में लोहे का प्रयोग न हो। निकालते समय पूर्ण श्रद्धाभाव रखें।
7. जड़ का छोटा सा भाग ही निकालें। आवश्यकता से अधिक निकालना निषेध है।
8. जड़ निकालते समय गोपनीयता का ध्यान रखें। सुनिश्चित करें कि किसी व्यक्ति की नजर आप पर न पड़े। या कोई आपको ऐसा करते वक्त टोके नहीं।





तांजीवत वनस्पतियों : वनस्पति तंज



9. जड़ निकालते समय निम्नोक्त मंत्र का उच्चारण करते रहें :-

खनन मंत्र :-

“येन त्वां खनते ब्रह्म, येन त्वां खनते भृगु। येन हीन्दो वरुणो, येन त्वापचक्रमे।

तेनाहं खनिष्यामि मंत्रपूतेन पाणिना। मा पातेमानि पतित जोन्यथा माते भवेत॥

अत्रैव तिष्ठ कल्याणि मम कार्यकरी भव। मम कार्ये सिद्धे ततः स्वर्ग गमिष्यमि॥”

10. जड़ निकल जाने के उपरांत मिट्टी से गड़्ढा भर दें। मौन धारण किये अपने घर लौट आएं।

घर आकर जड़ को गंगाजल/नर्मदाजल व दूध से स्नान कराएं एवं पंचोपचार पूजन कर प्रयोग करें।



❀ खास दिनों किया गया ऐसा भोजन करता है, धन का नाश : क्या-क्या कब न खाएं ❀

1. प्रतिपदा को कूष्मांड न खाएं क्योंकि उस दिन यह धन का नाश करने वाला होता है।
2. द्वितीया को बृहती (छोटा बैंगन या कटेहरी) निषिद्ध है।
3. तृतीया को परवल खाने से शत्रुओं की वृद्धि होती है।
4. चतुर्थी को मूली खाने से धन का नाश होता है।
5. पंचमी को बेल खाने से कलंक लगता है।
6. षष्ठी को नीम की पत्ती, फल या दातुन मुंह में डालने से नीच योनि की प्राप्ति होती है।
7. सप्तमी को ताड़ का फल खाने से रोग बढ़ता है।
8. अष्टमी को नारियल फल खाने से बुद्धि का नाश होता है।
9. नवमी को लौकी न खाएं।
10. दशमी को कलंबी शाक त्याज्य है।
11. एकादशी को सेम खाने से पुत्र का नाश होता है।
12. द्वादशी को पोई (पूतिका) खाने से पुत्र को परेशानी होती है।
13. त्रयोदशी को बैंगन खाने से पुत्र का नाश होता है।
14. अमावस्या, पूर्णिमा, संक्रांति, चतुर्दशी और अष्टमी तिथि, रविवार, श्राद्ध और व्रत के दिन तिल का तेल निषिद्ध है।



॥ शुभमस्तु ॥

